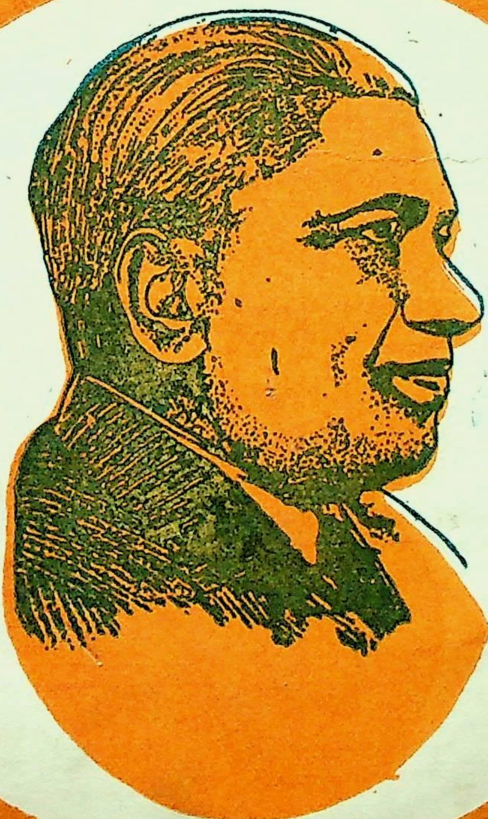
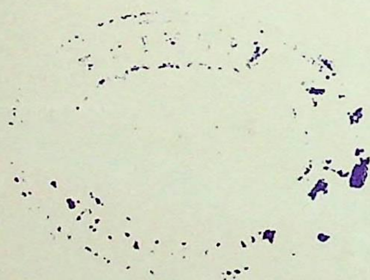
मॉरीशस के निर्माता: शिवसागर रामगुलाम

उदयनारायण गंगू





मॉरीशस के निर्माता :

सर शिवसागर रामगुलाम

उदय नारायण गंगू





भारतीय संस्कृति-साहित्य-कला-संस्थान
जयपुर [राजस्थान] भारत

भारतीय संस्कृति-साहित्य-कला संस्थान जयपुर
के साहित्य-प्रकाशन योजना के अन्तर्गत प्रकाशित

प्रथम संस्करण : 1989

मूल्य : 82=00 रुपये

प्रकाशक :
भारतीय संस्कृति-साहित्य-कला संस्थान
A-14, वन विहार कॉलोनी,
टोंक रोड, जयपुर, (राज०) भारत

मुद्रक :
गजेन्द्र प्रिन्टर्स
साँगों का रास्ता,
किशनपोल बाजार, जयपुर—1

समर्पण

मॉरीशस के उन सुपुत्रों को जिन्होंनें
इस धरती के नव-निर्माण
में
अपने जीवन की
आखिरी साँस
तक
शिवसागर का साथ दिया ।

भूमिका

मॉरीशस और अफ्रीकी एकता के संगठनकर्मी डा० सर शिवसागर रामगुलाम ने भारत और मॉरीशस में आयोजित विश्व हिन्दी सम्मेलनों में अपना अमूल्य योगदान देकर हिन्दी भाषा और संस्कृति की गरिमा को उन्नत किया है। मॉरीशस की सुख-समृद्धि के लिए सर रामगुलाम जी का योगदान स्तुत्य है। भारत और मॉरीशस के सांस्कृतिक सम्बन्धों को एक मधुर रूप आपके प्रयासों से प्राप्त हुआ है।

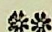
इस पुस्तक के लेखक श्री उदयनारायण गंगूजी ने अत्यन्त सहज भाव से भारतीय मूल के नेता की गतिविधियों तथा जीवन चरित्र की अभिव्यक्ति की है तथा मॉरीशस के दृढ़ स्तम्भ सर शिवरामगुलाम जी के भारतीय सस्कृति और हिन्दी भाषा के अप्रतिम प्रभाव को व्यक्त करते हुए उनके संघर्षपूर्ण जीवन को रेखांकित किया है। सर शिवरामगुलाम नाम मॉरीशस के लिए विनम्रता, शांति, न्याय, कोमलता, दृढ़ता और दूरदर्शिता का प्रतीक बन गया है। सर शिवरामगुलाम जी विश्व में प्रजातन्त्र के प्रभुत्व आधार स्तम्भ रहे हैं। उन्होंने कहा था कि "प्रजातन्त्र मेरे लिए है मैं प्रजातन्त्र के लिए हूँ"। संयुक्त राष्ट्रसंघ द्वारा 'मानव अधिकार' सम्मान प्राप्त सर शिवरामगुलाम आज भी मानव मूल्यों को गति प्रदान कर रहे हैं। स्वयं उन्हीं के शब्दों में "मानव क्रांति के लिए पैदा हुआ है। मानव ! तू संघर्ष करता चल जीवन का सुनहरा रूप तुम्हारा स्वागत करेगा।"

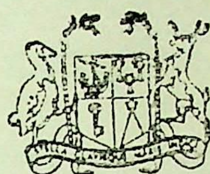
निःसन्देह, मॉरीशस में गन्ने के खेत जब तक लहलहा कर अपनी हरीतिमा बिखेरते रहेंगे तब तक डॉ० सर शिवसागर रामगुलाम का नाम गूंजित होता रहेगा और जब कभी सर रामगुलाम के जीवन का झरोखा खोलकर आप उसमें झाँकना चाहेंगे तभी श्री उदयनारायण गंगू की पुस्तक दर्पण बन कर आपके हाथों में होगी।

4, बी. हरिओम कालोनी,
मुरार ग्वालियर,
दि. 10 1.89

डॉ० शशिप्रभा श्रीवास्तव
शोध निर्देशक
जीवाजी विश्वविद्यालय,
ग्वालियर, भारत।

विषय सूची





PRIME MINISTER'S OFFICE

MAURITIUS

संदेश

भूतपूर्व प्रधान मन्त्री, डॉक्टर शिवसागर रामगुलाम की जीवनी के लिए संदेश देते हुए मुझे बड़े गौरव एवं प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है।

इस ख्यातिलब्ध नेता, मॉरीशस के महान् निर्माता का जीवन त्याग और संघर्ष से ओत-प्रोत है। डॉक्टर रामगुलाम 35 वर्ष से 85 वर्ष की आयु तक मातृ-भूमि की सेवा में तन-मन से रत रहे। उन्होंने देश-सेवा की वेदी पर अपना जीवन अर्पण करके जहाँ अपने देशवासियों का दुख-दर्द मिटाकर सुख-समृद्धि का जीवन दिया, वहाँ संसार भर में मॉरीशस जैसे लघु राष्ट्र की शान बढ़ा दी। दुनिया के नक्शे में बिन्दु जैसे दिखने वाला यह छोटा देश, सर शिवसागर रामगुलाम के भगीरथ परिश्रम के फलस्वरूप विश्व में विख्यात हो गया।

स्वर्गीय नेता रामगुलाम की जीवनी अनेक भाषाओं में लिखी जानी चाहिए। इस दिशा में श्री उदय नारायण गंगू ने सराहनीय कार्य किया है। उन्होंने प्रजातंत्र, समाजवाद, मॉरीशस की स्वतन्त्रता तथा कल्याणकारी राज्य की स्थापना करने में, आदरणीय नेता रामगुलाम के अनोखे योगदान का सफलतापूर्वक उल्लेख किया है। शिवसागर ने इस राष्ट्र को जन्म दिया। निःसंदेह वे राष्ट्रपिता और इस राष्ट्र के निर्माता हैं।

आशा है, हिन्दी में लिखी गई यह जीवनी हिन्दी-प्रेमियों को समाज और देश की निःस्वार्थ सेवा करने की प्रेरणा देगी। मैं लेखक को बधाई देता हूँ और पाठकों को इस जीवनी से लाभ उठाने की सलाह देता हूँ।

अनिरुद्ध जगनाथ
प्रधानमन्त्री, मॉरीशस

लेखकीय

बीसवीं शताब्दी में, विश्व के विभिन्न देशों में अनेक ऐसे महान् राजनीतिज्ञ पैदा हुए, जिन्होंने अपने-अपने राष्ट्र के निर्माण में अपने जीवन खपा दिये। शिव-सागर रामगुलाम उन्हीं चोटी के राष्ट्र-निर्माताओं की श्रेणी में आते हैं। जिस तरह गांधी-नेहरू भारत के लिए, लेनिन सोवियत रूस के लिए, माओत्से टुंग चीन के लिए, टिटो युगोस्लाविया के लिए, नासेर मिस्र के लिए तथा एनक्रूमा और केनियाता अफ्रीका के लिए सर्वमान्य एवं सर्वप्रसिद्ध नेता माने जाते हैं, उसी प्रकार शिवसागर मॉरीशस के लिए सर्वाधिक समादरणीय राष्ट्र निर्माता समझे जाते हैं। उन्होंने अपनी सेवा, उदारता, मानववादिता, अहिंसा तथा अन्तर्राष्ट्रीयता की भावनाओं के कारण इस लघु द्वीप को हिन्द महासागर का स्वर्ग बना दिया। मॉरीशस का इतिहास रामगुलाम के नाम और काम से गौरवान्वित हो गया है।

अंग्रेजी और फ्रेंच में शिवसागर के आदर्श जीवन पर अनेक पुस्तकें लिखी गई हैं। हिन्दी में भी ऐसा प्रयास हुआ है। किन्तु अंग्रेजी-फ्रेंच में जितनी विस्तार-पूर्वक इस महान् नेता की जीवनी उपलब्ध है, वैसी कोई भी जीवनी अब तक हिन्दी में लिखी नहीं गई। इसी कमी की पूर्ति के उद्देश्य से प्रस्तुत पुस्तक की रचना की गई है। इस कृति का शीर्षक है–"मॉरीशस के निर्माता : सर शिवसागर रामगुलाम" इसमें शिवसागर के निर्माण-कार्यों को रेखांकित करते हुए, उनके राजनीतिक विचारों पर प्रकाश डाला गया है। उनके दर्शन, प्रजातन्त्र एवं समाजवाद में उनकी आस्था, सबके प्रति उनके प्रेम, विरोधियों से गले मिलने की भावना, मानव मूल्यों की रक्षा करने की तत्परता आदि विषयों को उजागर किया गया है।

शक्कर उद्योग पर निर्भर रहने वाले इस छोटे टापू को एक समृद्ध, सुखी एवं स्वर्ग सम सुन्दर देश बनाने में शिवसागर को अपने जीवन के पाँच दशक व्यतीत करने पड़े। उन्होंने दलितों, दीन-हीनों के आँसू पोंछे, पीड़ित-शोषित जनों के अन्धकार-भरे जीवन में व्याप्त निराशा, अन्याय और अत्याचार को मिटाकर आशा, न्याय, शांति एवं सम्पन्नता की रोशनी फैलायी। इस कठिन कार्य को पूरा करने में उन्हें रूढ़िवादी, अनुदारपंथी गोरे पूँजीपतियों से लोहा लेना पड़ा। इंग्लैण्ड से प्रजातन्त्र और समाजवाद की भावनाएँ प्राप्त की थीं। मॉरीशस में इसी प्रजातन्त्र और समाजवाद की स्थापना के लिए एक अथक सिपाही की भाँति आजीवन लड़ते रहे। उनकी चाल को रोकने के लिए, उनकी राह पर काँटे बिछाये गये। इस दुष्प्रयत्न में

विफल होने पर विरोधियों, प्रतिक्रियावादियों ने उन्हें समाचार-पत्रों तथा सार्वजनिक जुटावों के माध्यम से अनेक बार अपमानित किया। किन्तु रामगुलाम अपमान का घूँट पीकर एक मौन तपस्वी की भाँति अपने पथ पर बढ़ते गये। वे गांधीजी की अहिंसा और सहनशीलता से बड़े प्रभावित थे। यही कारण है कि वे कभी भी अपने मार्ग से विचलित न हुए।

देश की पराधीनता की वेड़ी को काटकर स्वराज्य एवं जन हितैषी राज्य की स्थापना करना, शिवसागर का मुख्य उद्देश्य था। इसके लिए उन्हें व्यापक वयस्क मताधिकार के लिए लड़ना था। सबके लिए मुफ्त शिक्षा और उत्तम स्वास्थ्य-सेवा की व्यवस्था करनी थी, सबको भर पेट भोजन दिलाना था। इसीलिए शिवसागर को नये संविधान की प्राप्ति के लिए जी-जान से संघर्ष करना पड़ा। अन्ततोगत्वा अपने संघर्षों में वे पूर्ण सफल हुए। उनके घोर परिश्रम के फलस्वरूप समय-समय पर मॉरीशस को नया संविधान मिलता गया। लन्दन में होने वाले अनेक संवैधानिक सम्मेलनों में उन्होंने अपनी दूरदर्शिता का परिचय दिया।

नये संविधान के आधार पर सन् 1948 में हुए आम चुनाव में, मजदूर दल को आशातीत सफलता प्राप्त हुई। इस विजय से डॉक्टर रामगुलाम की शक्ति बढ़ गई। सामाजिक न्याय, शिक्षा, स्वास्थ्य, सबके लिए नौकरी, उचित वेतन-वृद्धि, आदि की माँग से उन्होंने धारा परिषद् को गुँजा दिया। फलतः सन् 1957 में उत्तरदायी सरकार अस्तित्व में आई, सन् 1959 में व्यापक वयस्क मताधिकार प्राप्त हुआ और सन् 1968 में मॉरीशस की स्वतन्त्रता के दर्शन हुए। डॉक्टर साहब इस देश के सबसे बड़े निर्माता बन गये। वे मॉरीशस के गगन में सितारे की भाँति चमक उठे। सन् 1951 में सम्पर्क अधिकारी नियुक्त हुए थे। सन् 1958 में राजकोष के सचिव और उसी वर्ष पोर्टलुई के मेयर बने। सन् 1961 में मुख्यमंत्री पद पर नियुक्त हुए तथा सन् 1965 में "सर" की उपाधि से विभूषित किये गए। उसी वर्ष मॉरीशस के प्रथम मंत्री (प्रीमियर) पद पर आसीन हुए और सन् 1968 में इस टापू के प्रथम प्रधान मन्त्री बने। सन् 1973 में मानवाधिकार के लिए संयुक्त राज्य के पुरस्कार के विजेता बने और सन् 1976 में अफ्रीकी एकता सगठन के अध्यक्ष।

शिवसागर ने शांतिपूर्ण तरीके से देश को स्वराज्य दिलाया, जब कि पास के अफ्रीकी देशों में राज-विद्रोह, खून-खराबा, तानाशाही, प्रजातन्त्र की हत्या के गर्मा-गर्म समाचार से पास-पड़ोस के देश भयाक्रांत थे। सर शिवसागर को संसदीय प्रजातन्त्र में अटूट विश्वास था। यद्यपि सन् 1976 के आम चुनाव में उनके दल को उचित बहुमत प्राप्त न था, तथापि वे पूरे पाँच वर्षों तक शांतिपूर्ण शासन करते

रहे । तीसरी दुनिया के इतिहास में यह एक अनहोनी बात थी । इससे उनके राजनीतिक विचार की परिपक्वता सिद्ध होती है ।

राष्ट्रपिता शिवसागर का दिल सचमुच एक सच्चे पिता का दिल था । अपने देशवासियों क प्रति उनकी उदारता, उनकी सहानुभूति, उनकी महान् आत्मा का परिचय देती है । मॉरीशस जैसे बहुजातीय देश में, जहाँ विभिन्न धर्मों, भाषाओं और संस्कृतियों का संगम-स्थल है, वहाँ शिवसागर सरीखे नेता ही शासन-सूत्र सम्भालने में सफल हो सकते हैं । इस महान् नेता के मार्ग-दर्शन में चलकर मॉरीशवासी शांति और प्रगति कायम बनाये रख सकते हैं । उनका आदर्श जीवन सबके लिए अनुकरणीय है ।

उदय नारायण गंगू
माहेवर्ग, मॉरीशस
दिनांक 20--1—89 ई०

△△

कृतज्ञता-प्रकाश

प्रस्तुत कृति तब तक प्रकाश में नहीं आती, जब तक निम्नांकित पुस्तकों से सहायता न ली जाती। अतः मैं उनके लेखकों का आभारी हूँ–

1. श्री आनन्द मल्लू :
   - (i) Dr. S. Ramgoolam (His life, his work, his ideas)
   - (ii) Our struggle : 20th Century Mauritius
   - (iii) Our Freedom : S. Ramgoolam

2. श्री मुनीन्द्रनाथ वर्मा
   - (i) The Struggle of Dr. Ramgoolam
   - (ii) मॉरीशस का इतिहास

3. डॉ० किसुन हजारीसिंह :
   History of Indians in Mruaitius

4. प्रो० वासुदेव विष्णुदयाल :
   The Truth about Mauritius

5. एस. बी. मुखरजी :
   The Indentured system in Mauritius, 1837–1915

6. प्रहलाद रामशरण :
   मॉरीशस का इतिहास

श्री आनन्द मल्लू, मुनोन्द्रनाथ वर्मा और डॉक्टर हजारीसिह ने बड़ी उदारता पूर्वक अपनी-अपनी पुस्तकों से मुझे सामग्री लेने की अनुमति प्रदान की। श्री आनन्द मल्लू जो का मैं विशेष आभार मानता हूँ जिन्होंने अपनी अंग्रेजी में लिखित पुस्तकें देते हुए कहा कि इनका अनुवाद कर डालें। प्रस्तुत रचना मूलतः उन्हीं की पुस्तकों पर आधारित है।

सर शिवसागर रामगुलाम की जीवनी लिखने की सलाह सर्व प्रथम मुझे महात्मा गांधी संस्थान के "भोजपुरी लोक साहित्य एवं संस्कृति विभाग" की अध्यक्षा कुमारी सचिता रामदीन से मिली। चूँकि मैं समय की दृष्टि से बहुत दरिद्र आदमी

हूँ अतः इस श्रमसाध्य तथा समयसाध्य कार्य में हाथ डालने को तैयार न था। किन्तु जब मैंने अपने अनुज, धरमदेव एम ए. द्वारा धारा परिषद् एवं धारा सभा में डॉ. रामगुलाम द्वारा दिये गये भाषणों के अनुवाद करने में स्तुत्य सहयोग पाया तब लेखन-कार्य शुरू कर दिया। मैं विविध स्रोतों से सामग्री प्राप्त करके ब्रह्ममुहूर्त में उठकर लिखा करता और दिन में अपनी पांडुलिपि का टंकण करा लेता। इस कार्य में सहायता देने वाले मेरे अनुज, श्रीमती रानी हूमचन्द, कुमारी अनीता और कुमारी प्रतिमा शंकर के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

मॉरीशस के माननीय प्रधान मन्त्री, सर अनिरुद्ध जगनाथ के प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ जिन्होंने अपने व्यस्त जीवन के बावजूद अपना बहूमूल्य समय व्यय करके अपनी सबल लेखनी से इस पुस्तक के लिए संदेश लिखकर इसकी उपयोगिता में अभिवृद्धि की।

अन्त में भारतीय संस्कृति-साहित्य कला संस्थान जयपुर की अध्यक्ष डॉ. शशि प्रभा श्रीवास्तव, उनके पति श्री अशोक श्रीवास्तव व संस्थान के अन्य कार्यकर्त्ताओं का आभारी हूँ जिन्होंने अल्प अवधि में प्रकाशन कार्य पूर्ण करा कर समय पर यह पुस्तक उपलब्ध करायी एवं इसका विमोचन करवाया।

—उदय नारायण गंगू



प्रथम परिच्छेद

वंश-परिचय एवं जन्म

भारत के प्रथम राष्ट्रपति, स्वनामधन्य बाबू राजेन्द्रप्रसाद की धरती–बिहार की दशा उन दिनों बड़ी दयनीय थी। डेढ़ शती पूर्व वह भू-भाग अपने लाखों पुत्रों के भरण-पोषण करने में पूर्णतया असमर्थ हो चुका था। इसके दो प्रमुख कारण थे—भीषण बाढ़ और भयानक दुर्भिक्ष। जीवनदायिनी गंगा समय-समय पर जान-लेवा बाढ़ का रूप धरकर महानाश का नृत्य दिखा जाती थी। हजारों को चिर-निद्रा में सुलाकर ही चैन लेती थी। जब सुरसरिता प्रसन्न रहती थी तब अनावृष्टि देवी कुपित हो उठती थी। सहस्रों को काल के कराल गाल में भेजकर ही शान्त होती थी। गरीबी और भुखमरी से पीड़ित जनता पेट की आग बुझाने के लिए दूर-दूर देशों में निकल पड़ती थी। रोटी-रोजी की खोज ने ही बिहारियों को बर्मा इन्डो-नेशिया, मलेशिया, मॉरीशस, वेस्ट इन्डिज, फीजी, ब्रिटिश गायना, दक्षिण एवं पूर्वी अफ्रीका आदि देशों के दर्शन कराये।

शिवसागर रामगुलाम के पूर्वज उत्तरी बिहार के "सारन" जिले से मॉरीशस आये थे। यह जिला मॉरीशस द्वीप से कई गुना बड़ा है। परन्तु प्रतिवर्ष बाढ़ का शिकार होकर यहाँ की गाँव-बस्ती, खेत-खलिहान, घर-मकान जल-मग्न हो जाते थे। इर्द-गिर्द बसे लोगों के जीवन नारकीय हो जाते। लोग जान-प्राण लिये सुदूर देश भाग चलते। परन्तु अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए शरीर के अतिरिक्त अपनी भाषा (भोजपुरी), संस्कृति एवं धर्म अवश्य साथ लिये जाते।

शिवसागर के पिता, मोहित रामगुलाम सन् 1896 में सारन जिले के हर-गाँव नामक स्थान से मरीच (मॉरीशस) देश के लिए चल पड़े। उस समय वे अठारह वर्ष के युवक थे। उनके अग्रज–रामलोचन मॉरीशस आ चुके थे। भारतीय मजदूर ठगकर मॉरीशस लाये जाते थे। उन्हें कहा जाता था कि मरीच देश में दूध की धारा बहती है। पत्थर उलटने पर सोने के दर्शन होते हैं। विशेषकर बिहार से लाखों लोग क़िस्मत सजाने-सँवारने इस अज्ञात टापू में आ विराजे। अठारह वर्षीय मोहित रामगुलाम "हिन्दुस्तान" जहाज से इस धरती पर उतरे। उनके बड़े भाई,

रामलोचन यहाँ शर्तबन्द मजदूर बनकर सोने की खोज में पहले ही लग चुके थे। मोहित रामगुलाम फ्लाक जिले के "लाक्वीन विक्टोरिया" शक्कर कोठी में गिरमिटिया बने। इस कोठी में व बारह वर्षों तक मजदूरी करते रहे।

बसमती रामचरण का व्याहता दो पुत्र—नकछेदी हीरामन और रामलाल रामचरण को पितृहीन छोड़कर स्वर्ग सिधार गया था। सन् 1898 में मोहित रामगुलाम ने उस तरुण विधवा से विवाह कर लिया। वे ससुर के ही घर पत्नी और दोनों सौतेले पुत्रों सहित "कामिज़ार पहाड़" के निकट, फ्लाक जिले के "बेलरिव" ग्राम में बसने आ गए। यह गाँव "बोशा" कोठी के अन्तर्गत था। इसी बेलरिव गाँव में देश से इतिहास को पलटने वाले, दीन-दुखियों के मसीहे, मजदूरों के अधिकारों के रक्षक, देश को स्वतन्त्र करने वाले, न्याय और शांति के संस्थापक, आदरणीय नेता, दूरदर्शी प्रधानमन्त्री, सबके प्यारे चाचा शिवसागर रामगुलाम का जन्म 18 सितम्बर सन् 1900 में हुआ। माता-पिता ने बालक का नाम "केवल" रखा। किन्तु माता-पिता और बेलरिव गाँव वालों के "केवल" गांव और देश की सीमा को पार करके शिवसागर रामगुलाम नाम से विश्व-विख्यात हुए। एक कुली पिता के घर जन्म लेकर केवल ने भारतीय आप्रवासियों, नहीं-नहीं सभी मॉरीशस-वासियों को स्वाधीनता के मीठे फल का रसास्वादन करा दिया।

शैशव काल

प्यार-भरे वातावरण में केवल पलते और बढ़ते रहे। उनकी शैशवावस्था प्रकृति की गोद में उछलते-कूदते बीती। पास ही पर्वतमाला थी। हरे-भरे पेड़-पौधे थे। जंगली घास, कलकल करती हुई नदी और मुस्कराते रंग-बिरंगे फूल केवल का मन मोह लेते। "बाम्बू" और "कामिजार" की पर्वतमालाओं से निकले सोते दौड़ते हुए नदी में जा मिलते। अवकाश के समय, पिता केवल को नदी किनारे घुमाया करते। नदी के तट पर पक्षियों का कलरव तथा भौंरों का गुंजन वातावरण को मोहक बना डालता। केवल मधुर ध्वनियों में खो जाते। दिन में वे जंगली फलदार पेड़ों के बीच घूमा करते। बनेले पशु, बन्दर, हिरण सभी दीख पड़ते।

कभी-कभी बड़े भाई, रामलाल के साथ बैलगाड़ी में यात्रा करने निकल पड़ते। वे ईख के खेतों के बीच से होते हुए "लाकोमिन", "बेलरिव" "लेत्वाल", "सेबास्तेपोल", ओलिदिया" आदि जाते और अन्त में "वलेमॉसिया और बेलरोज़" पहुँचते।

प्रकृति के बीच खेलते-कूदते केवल की पढ़ाई का समय आ गया। उनके माता-पिता ने उन्हें स्थानीय बैठका में भेजा जहाँ हिन्दू बच्चे अपनी भाषा और संस्कृति

की शिक्षा पाते थे। बैठका में गुरुजी बच्चों को "रामागति देहु सुमति" और सायं-कालिक प्रार्थना --"सर सर सर सन्ध्या काली" का पाठ सामूहिक स्वर में रटाते थे। माता-पिता अपने बच्चों को हिन्दू धर्म की शिक्षा देना चाहते थे। वे चाहते थे कि उनके बच्चे पक्के हिन्दू बनें। इसलिए भारतीय भाषा, संस्कृत-प्रार्थनाएँ, धार्मिक गीत और भजन-कीर्तन सिखवाते थे तथा वेदों, उपनिषदों, रामायण और गीता की शिक्षाएँ बैठका भेजकर दिलवाते थे, उन्हें भय था कि बच्चे अंग्रेजी-फ्रेंच पढ़कर कहीं ईसाई न बन जाएँ क्योंकि ईसाई स्कूलों में पढ़े-लिखे लोग साधारण नौकरी पाने के लिए ईसाई बन जाते थे।

ईसाई बनने के भय के कारण ही माँ-बाप अपने बच्चों को ईसाई पाठ-शालाओं से भरसक दूर रखते थे। केवल ईसाई स्कूल नहीं भेजे गये। वे बैठका में ही पढ़ते रहे। वे पाश्चात्य शिक्षा पाने के लिए पास के रोमन कैथलिक स्कूल में भरती होना चाहते थे। अतः पाँच वर्षीय केवल एक दिन चुपके से घर से निकल पड़े। वे उस कैथलिक स्कूल में जा बैठे जहाँ "सिरिस" नाम की एक दयालु महिला अध्यापिका थी। उसने बालक का स्वागत किया। केवल सारा दिन कक्षा में पढ़ते रहे। उधर माता बसमती चिन्ता के मारे व्याकुल थी। केवल चारों तरफ खोजे गये, गौशाला में, पड़ोस में, पास के जंगल में, नदी के किनारे, ऊँचे पेड़ों के नीचे, पत्तों से आच्छादित आम के वृक्षों पर, कटहल के पेड़ों पर, किन्तु वे कहीं नहीं पाये गए। सभी समझने लगे कि उनको कुछ हो गया। शायद पास की नदी में डूब गए। अब कभी नहीं लौटेंगे। माता फूट-फूट कर रोती रही।

शाम को पाठशाला की समाप्ति पर मैडम सिरिस नन्हें केवल की ऊंगली थामे घर आई। सभी आश्चर्यचकित हुए। माता की खुशी की सीमा न रही। अध्यापिका ने बताया कि केवल सारा दिवस उसी की कक्षा में पढ़ते रहे। इस बालक ने "होनहार बीरवान के होत चीकने पात" कहावत को चरितार्थ कर दिया। माता-पिता को क्या पता था कि उनके घर मॉरीशस के भावी प्रधानमन्त्री का लालन-पालन हो रहा था। बसमती को मानना पड़ा कि अब से उसे अपने बेटे को मैडम सिरिस के पास अंग्रेजी, फ्रेंच, गणित, इतिहास, भूगोल आदि की पढ़ाई के लिए भेजना ही होगा, बालक बड़ी ही उत्सुकतापूर्वक प्रारम्भिक शिक्षा ग्रहण करने लगे।

पिता का स्वर्गवास

यह उन दिनों की सच्ची कहानी है। भारतीय आप्रवासियों को उदर-पूर्ति के लिए घोर परिश्रम करना पड़ता था। श्रमिकों एवं मजदूरों के जीवन बड़े दयनीय थे। उन्हें अत्यन्त गरीबी में दिन काटने पड़ते थे। कठिन श्रम के कारण भरी जवानी में ही उनकी कमर टूट जाती थी। वे स्त्री को विधवा और बच्चों को अनाथ

छोड़कर अल्पायु में ही मौत के मुँह में समा जाते थे। गरमी हो या सरदी अथवा भारी बरसात, प्रातः चार बजे उठना पड़ता था। रात का बना बासी भोजन कटोरे में लिए खेतों की ओर चल पड़ते थे। शाम को सूर्यास्त तक पसीना बहाते रहते। इस कड़ी मेहनत के बावजूद भी उचित भरण-पोषण के लिए पर्याप्त रुपये नसीब नहीं होते। स्त्रियों, पुरुषों, बच्चों सभी को चिलचिलाती धूप और उड़ती धूल में, कड़ाके के जाड़े तथा मूसलाधार वर्षा में कमरतोड़ काम करना पड़ता। दिन में गोरों की गालियाँ खाकर पेट भरते और रात में पोषक तत्त्वों से हीन रूखा-सूखा खाना खाकर पूस की झोंपड़ियों में सो जाते। दूसरे दिन पुनः चार बजे उठकर गोरे मिल-मालिकों की तिजोरियाँ भरने चल पड़ते। उन्हें न काम से छुट्टी मिलती, न बुढ़ापे की पेंशन और न कोई वेतन-वृद्धि ही। अपमान-तिरस्कार से झोली अवश्य भर जाती। अति श्रम के कारण वे जल्दी ही रोग के शिकार हो जाते। दवा-डॉक्टरों के अभाव में अपना टिमटिमाता जीवन-दीप बुझा जाते। विधवा स्त्री और अनाथ बच्चे बिलबिला उठते। विधवाओं को गरीबी से जूझना पड़ता। बच्चे निरक्षर रह जाते।

वे अविद्याग्रस्त होकर आजीवन गोरे मालिकों के अन्याय-अत्याचार सहते जाते। मालिक जान-बूझकर उन्हें शिक्षा से वंचित रखते ताकि उनसे सस्ती मजदूरी का फायदा उठा सकें और उनकी अधिकांश कमाई हथिया सकें। समस्त जमीन कारखानों, बैंकों, बड़े फर्मों, मालों के आयात-निर्यात पर गोरों का ही एकछत्र अधिकार था। वे ही वकील, मजिस्ट्रेट, जज, डॉक्टर, सरकारी तथा गैर सरकारी विभागों के अध्यक्ष होते थे। चारों तरफ उन्हीं का राज्य था। भारतीय आप्रवासी मजदूरों के लिए तो केवल शोषण और अपमान का जीवन था। हजारों में कोई एक मजदूर आत्म-सम्मान की रक्षा कर पाते। वे अथक परिश्रम करके थोड़ी-बहुत जमीन के मालिक बन जाते और कालान्तर मे छोटे किसान हो जाते।

बसमती की दो लड़कियाँ चल बसी थीं। सौभाग्य से केवल बच गए थे। किन्तु वे अभी सात वर्ष के ही थे कि मोहित रामगुलाम के नाम मृत्यु का संदेश आ पहुंचा। वे निमोनिया के शिकार हुए तो कोई डॉक्टर बचा न सका। असमय प्रभु को प्यारे हो गए। बसमती पर पहाड़ टूट पड़ा। वह बिलख पड़ी। पड़ोसी और रिश्तेदार इकट्ठे हो गए। अबोध केवल ने सोचा कि घर में कोई शादी-ब्याह है। उन्होंने माँ की साड़ी खींचकर कहा—"माँ शादी में पहनने के लिए मुझे नया वस्त्र दो।" बसमती ने पितृहीन बालक को दयनीय दृष्टि से देखा और फूट-फूटकर रो पड़ी। केवल आश्चर्यचकित हो गए। उन्होंने बड़ों को इस प्रकार रोते-चिल्लाते कभी नहीं देखा था। उनके पिता चटाई पर चिर निद्रा में पड़े थे। शरीर पर सफेद

कमीज, सफेद धोती और सिर पर पगड़ी थी। मृत्यु ने चेहरे का रंग फीका कर दिया था। केवल ने सोचा कि पिता गहरी नींद में सोये हैं। उन्हें क्या पता था कि अत्याचार, अन्याय और जानलेवा मेहनत ने उनके छोटे से जीवन का अन्त कर दिया और अब कुछ ही समय बाद पिता को उस पहाड़ की गोद में फूँक दिया जाएगा, जहाँ वे अक्सर खेला करते थे। यह था जमीन के एक सिपाही का संग्राम और अन्त। आज भी यहाँ के खेत-कारखाने ऐसे वीरों की कहानी पुकार-पुकार कर कहते हैं। इन खेतों की हरियाली और कारखानों की समृद्धि में उन्हीं की कहानी छिपी है।

आदर्श भाई

जब पिता की मृत्यु हुई तब केवल का सौतेला भाई, रामलाल इक्कीस वर्ष का था। वह हिसाब-किताब रखने में चतुर था। कुछ पढ़ा-लिखा भी था। गिनती-हिसाब जानने के कारण रामलाल को बेलरिव कोठी के मजदूरों और कारीगरों की उपस्थिति लिखने का काम मिल गया। वह कारखाने में आने वाली गन्नों से भरी बैलगाड़ियों का हिसाब भी लिखता था। यह बड़े उत्तरदायित्व का काम था। रामलाल इसे बड़ी चतुराई और ईमानदारी से निभाता था। उसने गोरे मालिक को अपनी ईमानदारी और विश्वसनीयता का प्रमाण दे दिया, फलतः गोरों का विश्वासपात्र बन गया। वह अपने गाँव का नेता भी था। अतः कोठी से उसे विशेष लाभ मिलने लगा, वह छोटा किसान बन गया। उसकी भू-सम्पत्ति बेलरोज और क्लेमॉसिया में पाई जाती थी।

रामलाल ने तत्कालीन प्रथानुसार एक अल्पवयस्क कन्या से विवाह किया। चूँकि उसे केवल से बड़ा प्यार था, अतः शादी के बाद छोटे भाई को अपने ही साथ रखने लगा। वह केवल की सुख-सुविधाओं का पूरा ख्याल रखता। केवल भी भाई-भावज का बड़ा आदर करते। उन्हें सदा प्रसन्न रखने की चेष्टा करते।

केवल बड़े विद्याप्रिय थे। "बेलेर" सरकारी पाठशाला से बिना किसी कठिनाई से छठी परीक्षा पास कर चुके। मन में पढ़ने की बड़ी उत्सुकता थी। छुट्टी के समय माँ का काम किया करते। बड़े भाई और भावज के लिए जान देने को तैयार रहते थे। इसी प्रेम ने उनकी एक आँख ले ली। बात उस समय की है जब वे 12 साल के थे। उन्हें एक भारी दुर्घटना का सामना करना पड़ा था। मजदूरों का सरदार होने के कारण रामलाल ही पोर्ट लुई के "कॉमरसियल बैंक" से सभी काम करने वालों का वेतन लाता। मौके से फायदा उठाकर वह राजधानी, पोर्ट लुई में अपना भी छोटा-मोटा काम कर लेता। उस दिन पोर्टलुई रवाना होने से पहले पत्नी को कहा—"सुनती हो, गाड़ीवान आएँ तो कह देना खेतों में खाद पहुँचा दें। मैं शहर जा रहा हूँ।"

केवल के कानों में भाई की आवाज पड़ गई। उन्होंने सोचा कि क्यों न गाड़ीवान के आने तक मैं ही बैल को गाड़ी में जोत दूँ। काम जल्दी हो जाएगा।

भाई बहुत प्रसन्न होंगे । ऐसा सोचकर वृषभशाला में पहुँचे बैल के घर मे अन्धेरा था । गोबर और मूत्र की गन्ध से मक्खियाँ भिन-भिना रही थीं और बैल को काटे जा रही थीं । मक्खियों से बचने के लिए वह बैल अपना सिर और पूँछ इधर-उधर हिला रहा था । केवल साहसपूर्वक बैल की तरफ बढे । वह पशु अपनी टांगों पर खड़ा हो गया । बालक एक क्षण के लिए रुक गए । सोचने लगे कि बैल को कैसे खोलूँ । उन्होंने एक छोटा-रस्सा उसकी गर्दन में डालने की कोशिश की । उस जानवर ने अपना सिर हला डाला । पैना सींग केवल की बाईं आँख में चुभ गया । बालक असह्य पीड़ा से चीख उठे । उनका चेहरा रक्त से लाल हो गया । वे गीली जमीन पर लोट पड़े और बेहोश हो गए । चीख सुनते ही भाभी हाय राम ! कहते दौड़ पड़ी वेसुध बच्चे का मुखड़ा लहूलुहान था । केवल की यह हालत देख वह व्याकुल हो उठी । घर में अकेली थी, क्या करती ? रामलाल दूर निकल चुका था ।

पास-पड़ोस के लोग यह खबर पाकर दौड़े आये । कोई एक रामलाल को लाने चल पड़ा । रामलाल अभी "वेलेर" के स्टेशन पर ही था । समाचार सुनकर प्राण सूख गए और तुरन्त घर लौटा । भाई की दशा देखकर बहुत घबराया । उन्हें कोठी की बग्घी में लिये वेलरिव के छोटे अस्पताल में पहुँचा जहाँ प्राथमिक उपचार किया गया । इसके बाद केवल को "बोशा" कोठी के अस्पताल में ले गया । तदनन्तर "माप" ग्राम के एक प्राईवेट डॉक्टर के पास सारी सावधानी, दौड़-धूप, प्यार-दया के बावजूद भी कोई ऐसा डॉक्टर नहीं मिला जो दुखी केवल की आँख बचा सके । उन दिनों डॉक्टर-दवा की सुविधाएँ बहुत कम थीं । इस भारी दुर्घटना में केवल ने अपनी बाईं आँख खो दी । किन्तु उनके ललाट पर ज्ञान के तीसरे नेत्र का उदय हुआ इसी दिव्य चक्षु ने पराधीन मारीशस में स्वाधीनता लाने का सपना देखा और दुर्घटनाग्रस्त होने के साढ़े पाँच दशक बाद मारीशस को स्वतन्त्र करके अपने स्वप्न को साकार किया ।

माध्यमिक शिक्षा

रामलाल शिक्षा का महत्त्व खूब समझता था । कुछ दिनों में केवल स्वस्थ हो गए । माध्यमिक पढ़ाई के लिए भाई ने उन्हें "क्यूर्पिप" शहर भेजा । वे सरकारी पाठशाला की छात्रवृत्ति की कक्षा में दाखिल हुए । वे बड़े ही मेहनती एवं अध्ययनशील थे । "क्यूर्पिप" में ही एक सम्बन्धी-हरिप्रसाद शिवधारी भगत के यहाँ रहने लगे । सरदी के मौसम में हड्डियों को हिला देने वाली ठण्ड पड़ती । रात में केवल पाँवों में जुराबें पहने ही सोया करते । वे बढ़िया वस्त्र के बड़े शौकीन थे । यह शौक बुढ़ापे तक बना रहा ।

एक दिन उस रिश्तेदार के घर एक विचित्र घटना घटी, उस परिवार में एक विवाह था । सुन्दर-सुन्दर वस्त्र पहने नाते-रिश्ते के लोग आए हुए थे । आंगन में पंडाल बना हुआ था । स्त्रियाँ अपने-अपने काम में व्यस्त थीं । बच्चों की निगरानी

करने की फुरसत कहाँ थी। केवल आस-पास बच्चों के साथ खेल रहे थे, खेल भी विचित्र था। कुछ बच्चे उन पर ईंधन की लकडियां रखने लगे। लकड़ियाँ इस तरह रखी गयीं मानों कोई चिता सजा दी गई हो। केवल लकड़ियों के नीचे दब गए। बच्चे भाग चले। किसे केवल को ढूढ़ने का अवकाश था। सभी विवाह की तैयारियों में व्यस्त थे। किसी को उनकी अनुपस्थिति का खयाल ही न रहा। शाम को एक महिला जलाने के लिए लकड़ी उठाने आई तो लकड़ियों के ढेर से कराहने की आवाज सुनी, "हाय राम'। यह कौन है" । महिला बोली और जल्दी-जल्दी लकड़ियाँ उतारने लगीं एक सिर बाहर निकला। साँस लेने की कठिनाई के कारण केवल का बुरा हाल था। भाग्यवश उनके प्राण बच गये।

स्कॉलरशिप की कक्षा के बाद केवल क्यूर्पिप के रॉयल कॉलेज की "जूनियर-कैम्ब्रिज" की कक्षा में प्रविष्ट हुए। गोरों के राज्य में भारतीय आप्रवासियों के इने-गिने बच्चे ही इस कॉलिज में भर्ती हो पाते थे। उन दिनों रॉयल कॉलिज ही एक-मात्र महाविद्यालय था, जहाँ माध्यमिक शिक्षा दी जाती थी। टापू में दूसरा कोई भी प्राईवेट माध्यमिक विद्यालय नहीं था। पोर्ट-लुई में भी कोई कॉलिज नहीं था। उस समय पोर्ट-लुई शहर में महामारी फैली हुई थी। इस कारण पढ़े-लिखे लोग क्यूर्पिप में ही बसने आ गए थे। क्यूर्पिप के रॉयल कॉलिज ने मॉरीशस के अनेक नेताओं को पैदा किया। वास्तव में इसी विद्यालय ने देश के भावी नेताओं, कर्णधारों को प्रशिक्षित किया। क्लर्क मैनेजर, बड़े व्यापारी सभी को यहीं से शिक्षा मिली। शिक्षा के क्षेत्र में इसका योगदान प्रशंसनीय है। बड़ी कक्षाओं के शिक्षक अंग्रेज हुआ करते थे, जो विज्ञान आदि विषय बड़े चाव से पढ़ाते थे।

बेलरिव गाँव से आए नन्हे केवल अब गोरों और रंगीन बच्चों के बीच पढ़ रहे थे। इस ग्रामीण लड़के को उस नये पर्यावरण से अनुकूलन करना पड़ा। उनके दो घनिष्ट मित्र थे —मॉरीशस के प्रथम भावी महाराज्यपाल—अब्दुल रहमान ओस्मान जो लैटिन और ग्रीक का अध्ययन करके जज बने तथा दूसरे महावीर लखीनारायण जो विज्ञान का अध्ययन करके डॉक्टर बने। ये तीनों लड़के छोटे किसान परिवारों के बच्चे थे।

केवल का प्रिय विषय अंग्रेजी था। इस अंग्रेजी ज्ञान ने एक जादुई कुंजी बनकर सैंकड़ों सहस्रों मॉरीशसवासियों के लिए विविध प्रकार के ज्ञान का द्वार खोल दिया। इसी अंग्रेजी के माध्यम से केवल को कई रहस्यों का भेद मिला। जिस प्रकार गुफा का द्वार खुलने पर अलीबाबा को सोने-चांदियों, हीरे मोतियों का खजाना दीख गया था, उसी प्रकार पुस्तकों के पन्नों से अंग्रेजी का ज्ञान लेकर केवल ने विभिन्न विषयों की जानकारी अमूल्य सम्पत्ति के रूप में प्राप्त की। वे गोरे महाप्रभुओं के भेद जानने लगे। उनके सामने विश्व की महान् विचारधाराएँ, महान् राजनीतिक, धार्मिक और सामाजिक आन्दोलन, मानव के नये, आश्चर्यजनक

आविष्कार एवं खोज तथा विश्वविख्यात लेखकों, समाजसुधारकों के अनुभव पड़े थे। केवल को ऐसा लगा कि क्रिस्टोफर कॉलम्बस की भाँति वे एक नई दुनिया की चौखट पर खड़े हैं। उन्हें प्रतीत होता था कि कोई किसी महान् सघर्ष के लिए उन्हें बुला रहा है। अंग्रेजी के प्रति केवल के हृदय में अपार प्रेम पैदा हो गया और यह प्रेम जीवन भर बना रहा। वे अंग्रेजी भाषा और साहित्य का गम्भीरता से अध्ययन करने लगे। लेखन के प्रति रुचि साकार हो उठी। वे अंग्रेजी लेखकों के साथ सदा मित्रता करते रहे।

रॉयल कॉलिज के अंग्रेज अध्यापक बड़े आदर्श थे। वे निष्पक्ष एवं न्यायप्रिय थे जो गोरे-कालों को बड़े समर्पित भाव से एक समान पढ़ाते थे। ऐसे शिक्षकों का सान्निध्य पाकर केवल उनके उत्तम गुणों को ग्रहण करने लगे। उनकी न्यायप्रियता, सहनशीलता, सेवाभाव से बड़े प्रभावित हुए। ये गुण एक लोकप्रिय नेता के आभूषण हैं। केवल ने इन गहनों को धारण किया और इन्हीं गुणों के कारण मॉरीशस जैसे बहुजातीय देश में एक सच्चे और दूरदर्शी नेता के रूप में प्रतिष्ठित हो सके।

केवल के अंग्रेजी अध्यापक, "रेवरण्ड फाउलर" बुढ़ापे तक बड़ी निष्ठापूर्वक पढ़ाते रहे। श्री हारवुड रसायनशास्त्र के बड़े विद्वान अध्यापक थे। वे इतने परिश्रमी थे कि ट्यूशन दिये बिना ही छात्रों को योग्य बना देते थे। जब कोई छात्र उनके सम्मुख ट्यूशन लेने की इच्छा प्रकट करता था, तब वह स्पष्ट कह देते थे— "मैं अपने लाभ के लिए ट्यूशन देकर बेईमानी नहीं करना चाहता। कक्षा में पूरी मेहनत से पढ़ाता हूं। तुम्हें इससे अधिक पढ़ा नहीं सकता। मैं प्राइवेट ट्यूशन द्वारा तुम्हारे पिता के रुपये चुराना नहीं चाहता। विद्यालयों में कई प्रकार के खेल-क्रीड़ाओं एवं कसरतों का सूत्रपात हो चुका था। बच्चे फुटबॉल खेलना सीखते थे। इस खेल के द्वारा जहाँ मनोविनोद होता था, वहाँ व्यायाम भी हो जाता था। श्री लैम्ब एक सेवा-मुक्त सैनिक अधिकारी थे और वही व्यायाम की शिक्षा देते थे। केवल तरुण होने लगे थे और कॉलिज में शिवसागर रामगुलाम नाम से जाने जाते थे। शिवसागर को उक्त विद्यालय में बड़ा स्वस्थ वातावरण मिला। वे इतने विनीत सदाचारी, अनुशासनप्रिय एवं पढ़ाई-लिखाई में लगनशील थे कि कभी भी किसी शिक्षक को उन्हें किसी प्रकार का दण्ड देने का मौका ही नहीं मिला।

वे सभी अध्यापकों का आदर करते रहे और उनसे निष्ठापूर्वक माध्यमिक शिक्षा ग्रहण करते रहे। आखिर कई वर्षों के गम्भीर अध्ययन के पश्चात् वह दिन आ ही गया जब सभी ने जाना कि शिवसागर महाविद्यालय की उच्च परीक्षा— सीनियर कैम्ब्रिज एक्जामिनेशन में सफलता-पूर्वक उत्तीर्ण हो गए। यह बड़ी ही प्रतिष्ठा का विषय था, क्योंकि उन दिनों इस परीक्षा में पास हुए हिन्दू बच्चे चिराग लेकर ढूंढने पर ही कुछेक दीख जाते थे। शिवसागर ने परीक्षा उत्तीर्ण करके कुल का ही नाम रोशन नहीं किया, बल्कि आप्रवासियों का भी सिर ऊँचा कर दिया। ❊

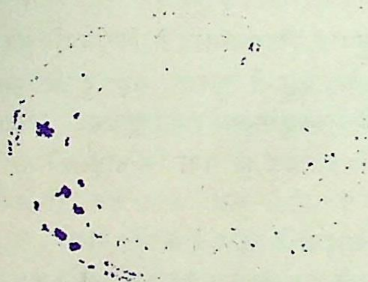
द्वितीय परिच्छेद

भारतीय आप्रवासियों की कथा-व्यथा

"सीनियर कैम्ब्रिज परीक्षा" में उत्तीर्ण होने पर शिवसागर नागरिक सेवा (सिविल सर्विस) में भर्ती हुए। यद्यपि वे बडो योग्यता से कोषागार विभाग में क्लर्क का काम करते रहे, तथापि इस नौकरी से प्रसन्न न थे एक साल बाद ही उन्हें त्यागपत्र देना पड़ा। उनमें विद्या की लगन थी। वे विदेश जाकर उच्च शिक्षा ग्रहण करना चाहते थे। इसी बीच एक ऐसी दर्दनाक घटना घटी, जिसने उनकी उच्च पढ़ाई का संकल्प और भी दृढ़ कर दिया। एक बूढ़े, एक रोगी, एक शव और एक भिक्षु को देखकर जैसे राजकुमार गौतम संसार से विमुख हो गए थे, वैसे ही शिवसागर एक वृद्ध माता की करुण कहानी सुनकर बड़े दुःखी हुए। रोग से दुर्बल बुढ़िया का चेहरा आँसुओं में डूबा हुआ था। वह सूखकर कंकाल हो चुकी थी। आँसू बहाये जा रही थी। शिवसागर को लगा कि उन्हीं की मां अश्रुपात कर रही है। पास आकर मधुर स्वर में धीरे से पूछा "मां, तुम रो क्यों रही हो। क्या कष्ट है तुम्हें"। बुढ़िया ने ओढ़नी के छोर से आंखें पोंछते हुए आश्चर्य से देखा, बोली—"बाबू, आप कुछ नहीं कर सकते। यह हम गरीबों का भाग्य है। हम जीवन भर दुःखी रही हैं। मैं गोरे डाक्टर के पास गयी थी अपनी बीमारी का इलाज कराने। डाक्टर साहब ने मुझे गाली दी। सभी गोरे डाक्टर हमारा अपमान करते हैं। मैं अपना रोग लिये किसके पास जाऊं। क्या हमारे हिन्दुओं में कोई डॉक्टर है, जहाँ जा सकूं।" वृद्धा की बूढ़ी आंखों से आंसू बह चले।

बुढ़िया की दयनीय दशा देखकर युवक रामगुलाम के कोमल हृदय पर वज्राघात हुआ। वे सोचने लगे या तो मौन रहकर शोषकों का अन्याय सहा जाए अथवा मणिलाल डाक्टर की तरह अन्याय का प्रतीकार किया जाए। उन्होंने निश्चय किया कि आततायियों से लड़ेंगे, दुःखियों की दुःख दरिद्रता रोग-पीड़ा हटायेंगे। इसके लिए उच्च शिक्षा की जरूरत थी। ज्ञान-धन से ही इस घातक गरीबी का अन्त किया जा सकता था। शिवसागर ने उस धन को पाने की ठान ली।

उन दिनों गोरे पूंजीपति भारतीय वंशजों को तुच्छ, तीसरे दर्जे का प्राणी समझते थे। उनके प्रति दुर्व्यवहार किया जाता था। धनी लोग उन्हें धोखा देकर




पुस्तकालय
128013
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

दासों जैसे ही बरताव किया गया। काम में छोटी-सी भूल हो जाने पर उन पर छड़ी और कोड़ों की मार पड़ी। शक्करस्टेट में रहने के लिए फूस की बनी एक छोटी झोंपड़ी मिली जिसमें सामान के रूप में रस्सी की एक खाट और भोजन पकाने की एक हांडी थी। उस फस की कोठरी में कई लोग साथ रहते थे। यह कोठरी रोग का धाम थी। मॉरीशस सरकार ने आप्रवासियों की स्थिति की जांच के लिए सन् 1838 में एक कमेटी की नियुक्ति की। स्पेशल जस्टिस आंडेरसन ने 13 नवम्बर सन् 1838 को भारतीय कुलियों के सम्बन्ध में एक रिपोर्ट प्रस्तुत की। उन्होंने अपने प्रतिवेदन में बताया कि भारतीय कुलियों को एक दिन में चौदह-पन्द्रह घण्टे काम करने के लिए विवश किया जाता है। इस तरह काम कराकर उन्हें दण्डित किया जाता है। जस्टिस आंडेरसन ने पोर्टलुई में काम करने वाले कुलियों के बारे में निम्न तथ्य अभिव्यक्त किये—

1. कुलियों के रहने के लिए जो घर दिये जाते हैं, वे बहुत संकुचित और गन्दे होते हैं।
2. मालिक अपने बीमार मजदूरों के प्रति कोई ध्यान नहीं देता।
3. रोगियों को किसी प्रकार की दवा-दारू नहीं दी जाती।
4. आठ अथवा नौ प्रतिशत मजदूर बीमार पड़कर मर जाते हैं।
5. शारीरिक श्रम के नियत घण्टे शोचनीय हैं।
6. निवास-स्थान दुर्गन्धयुक्त है।

उपर्युक्त प्रतिवेदन से स्पष्ट हो जाता है कि आप्रवासियों को कैसी नारकीय यातनाओं का सामना करना पड़ा था।

भारतीय मजदूर बड़े विश्वसनीय और ईमानदार थे। गोरे भूपतियों ने अपने खेतों में काम करने के लिए पुनः नये मजदूरों को भरती करना चाहा। किन्तु सन् 1839 से 1842 तक भारत सरकार ने आप्रवासन पर रोक लगा दी। सरकार आप्रवासियों की दयनीय दशा से शंकित हो उठी थी। कलकत्ता प्रेस ने आप्रवासियों के दुःख-दर्द को खूब प्रकाशित किया था। पिछली यात्रा के दौरान भारतीय मजदूरों को घटिया एवं कष्टदायक जहाजों में ऐसे लादा गया था, जैसे टीन के डिब्बे में छोटी मछलियों को भरा जाता है। वे समुद्री बीमारी एवं अन्य व्याधियों से बुरी तरह पीड़ित हुए थे। कलकत्ते से चले जहाज "विलियम विलसन", "आदलाइद" और "इण्डियन ओक" में हैजा आदि संक्रामक रोग फैला था।

उन जहाजों में एक भी डॉक्टर नहीं था। दस जलयानों में दो हजार दो सौ छप्पन आप्रवासी यात्रा कर रहे थे, जिनमें सतानवे रोगग्रस्त होकर चल बसे। जहाजों में उन्हें अपर्याप्त भोजन भी दिया जाता था। जब समाचार पत्रों ने यात्रा

की इस दुर्व्यवस्था को छापा तब भारतीय सरकार के कान खड़े हुए और सन् 1842 तक आप्रवासन पर प्रतिबन्ध लगा दिया ।

मॉरीशस के तत्कालीन राज्यपाल, सर निकोले ने भारतीय सरकार से पुनः आप्रवासन की अनुमति के लिए प्रार्थना की । भारत सरकार ने आप्रवासियों की सुरक्षा के लिए भी कुछ नियम लागू किए और मॉरीशस सरकार को 'आप्रवासी संरक्षक' नियुक्त करने का सुझाव दिया । साथ ही पांच वर्ष का कार्य-काल समाप्त होने पर स्वदेश वापिस होने के लिए मजदूरों को वापसी टिकिट देने को कहा ।

मॉरीशस सरकार ने भारत सरकार की शर्तों को स्वीकार करते हुए आप्रवासियों का एक संरक्षक नियुक्त किया । साथ ही कलकत्ते में आप्रवासन एजेंटों की नियुक्ति हुई । बढ़िया जहाजों में मजदूरों को यात्रा कराने की बात भी कही गई । परिणामस्वरूप पुनराप्रवासन की अनुमति मिल गई । सन् 1843 से 44 तक चालीस हजार से अधिक मजदूर मॉरीशस लाए गए । इंग्लैण्ड की "आंटी स्लेवरी सोसाइटी" ने आप्रवासन को पुनः आरम्भ करने की कड़ी आलोचना की । यात्रा के समय चार सौ बाईस मजदूर मर गए और मॉरीशस आगमन पर एक सौ बावन अस्पताल में मरे ।

सन् 1858 में दौ सौ उनसठ चीनी कारखाने थे । ग्यारह हजार बीघे जमीन पर कृषि-कार्य होने लगा था । शक्कर-उद्योग की उन्नति का श्रेय लगनशील शर्तबन्द मजदूरों को ही था, परन्तु उनके प्रति घोर अन्याय किया गया । सन् 1847 में "डबल कट" का श्री गणेश हुआ । यदि वे एक दिन नौकरी से अनुपस्थित हो जाते थे तो उनके दो दिनों का पारिश्रमिक काट लिया जाता था । पन्द्रह दिन अनुपस्थित होने पर वे पूरे मास के वेतन से वचित हो जाते थे । साथ ही उनकी वापसी यात्रा के नाम पर उनकी तनख्वाह का एक अंश काट लिया जाता था । कभी-कभी तुच्छ कारणों पर जुर्माना चुकाना पड़ता था और महीने के अन्त में वेतन न मिलकर मात्र राशन ही मिलता था । उनकी दशा दासों से बेहतर नहीं थी । मालिकों की क्रूरता, अपरिचित वातावरण, नये निवास का कष्ट तथा नारियों का अभाव उनके गम की कहानी को बढ़ा देता था ।

सन् 1853 और 59 के बीच आप्रवासियों को वापसी टिकट नहीं दिये गये । नई शर्तबन्दी स्वीकार करने के लिए उन पर दबाव डाला गया । उनका नियुक्त संरक्षक शक्तिहीन था । वह उनके पक्ष में कुछ न कर सका । संरक्षक मिल-मालिकों के प्रभाव से बच नहीं सका था । करारनामे के खत्म होते ही कुछ मजदूर कोठी (एस्टेट) से निकलकर गाँवों की ओर चल पड़े । बहुत-से जन, निर्जन पहाड़ी

पर मामला चलाया जाय। राज्यपाल गॉरडन से प्रार्थना की गई कि उन्हें देश से निष्कासित किया जाय, क्योंकि वे विदेशी होकर मॉरीशस में उपद्रव कर रहे थे। मुकदमा चलाने का कोई ठोस कारण नहीं था। इसलिए सरकार ने गोरों की प्रार्थना ठुकरा दी। इस पर गौरांग प्रभुओं ने कानून अपने हाथों में लेकर स्वयं अपना न्याय करना चाहा। "जुल लावोकर" और उसके साथियों ने देप्लेवित्स पर आक्रमण किया और उन पर कोड़ों की वर्षा की। वे आहत हुए। दो दिन बाद पुनः पोर्टलुई के प्रधान डाकघर के सामने विरोधियों की भीड़ ने उन्हें धमकी दी।

राज्यपाल हामिलटन गॉरडन ने गोरों की काली करतूतों को सुनकर एटॉर्नी जनरल को संकेत किया कि यदि आक्रामकों के दुष्कर्म को अनदेखा कर दिया जाय तो खतरा पैदा हो सकता है। राज्यपाल को उत्तर दिया गया कि हमलावरों के विरुद्ध उचित कार्यवाही की जायेगी। देप्लेवित्स पर हमला करने के कारण "लोवो-केर" और "मेरवेन" को जुर्माना चुकाना पड़ा।

देप्लेवित्स का प्रार्थना-पत्र लन्दन पहुँचा। रानी ने तुरन्त ही एक राजकीय आयोग की नियुक्ति की। सन् 1872 के अप्रैल मास में कमीशन ने अपना काम शुरू कर दिया। इस द्वीप के दो सौ दस कारखानों में इक्यावन का निरीक्षण करके आप्रवासियों की दशा का परिचय प्राप्त किया गया। आयोग को कुल मिलाकर पाँच सौ अर्जियाँ प्राप्त हुईं। सर्वप्रथम देप्लेवित्स को ही सुना गया। उन्होंने कमीशन की कई बैठकों में आप्रवासियों की राम-कहानी विस्तारपूर्वक सुनाई। आयोग ने उन्हें अपनी प्रत्येक बैठक में बैठने की अनुमति दे दी। एक प्रकार से वे आप्रवासियों के प्रतिनिधि बन गये। कमीशन के सामने तिरेसठ गवाह बुलाये गये। उनमें सबसे प्रमुख था—आप्रवासियों का नियुक्त संरक्षक।

देप्लेवित्स ने अपने प्रार्थना-पत्र और पाम्पलेट में पुलिस की खूब खबर ली थी। उनकी मुख्य शिकायतें निम्न प्रकार थीं—

1. आप्रवासियों की मजदूरी से सम्बन्धित 5,000 शिकायतें।
2. राशन (रसद) न मिलने की दो सौ से अधिक शिकायतें।
3. डॉक्टरी सेवा देने से इनकार करने की 44 शिकायतें।
4. "पास टिकट" देने से इनकार करने की 700 शिकायतें।
5. आक्रमण सम्बन्धी चार सौ पचास शिकायतें।

देप्लेवित्स द्वारा किये गये अधिकांश आरोप सत्य सिद्ध हुए। आयोग ने देखा कि आप्रवासियों को बहुत सताया गया है। उनकी दशा बड़ी दयनीय रही है।

अवैध रूप से उनके वेतन में सारा वर्ष कटौती होती रही है। पुलिस का उत्पीड़न लज्जाजनक रहा है।

कमीशन ने अपनी रिपोर्ट में बताया कि आप्रवासी-संरक्षक पूरी तरह से कोठियों में नहीं गये, मजदूरों की समस्या नहीं सुनी, वेतन-निर्धारण के लिए सम्मति नहीं दी, अस्पताल की व्यवस्था पर विचार नहीं दिया, कोठी के बही-खाते की उचित छानबीन नहीं की, मजदूरों की ओर से मालिकों पर मुकदमा नहीं चलाया, मजदूरों के प्रति अन्याय-अत्याचार को नहीं रोका। राजायोग ने मिल-मालिकों को निम्न-लिखित सुझावों का पालन करने को कहा :—

1. मजदूरों को अधिक से अधिक नौ घंटों का काम दिया जाय, 2. हर मास के प्रथम शनिवार को वेतन दिया जाय, 3. रविवार और छुट्टी के दिनों में दो घंटों से अधिक काम न लिया जाय, 4. मॉरीशस की जलवायु अनुकूल न हो तो मज-दूरों को सरकारी खर्च पर भारत वापस भेज दिया जाय, 5. उनकी रसद में कमी न की जाय, 6. जिस कोठी में बीस से अधिक मजदूर हों, वहाँ एक अस्पताल का प्रवन्ध किया जाय, 7. अपाहिज मजदूरों को भारत भेज दिया जाय, 8. मजदूरों को परिचय-पत्र मुफ्त में दिया जाय, 9. उन्हें एक जगह से दूसरी जगह आने-जाने की स्वतन्त्रता दी जाय, 10. उनके बच्चों की पढ़ाई के लिए उचित स्कूलों का प्रबंध किया जाय, 11. मजदूरों को मारा न जाय, 12. मालिक स्वयं न्यायाधीश न बनें, 13. पुलिस कर्मचारी को ज्यादती करने से रोका जाय।

सन् 1872 के राजायोग के फलस्वरूप मॉरीशिस सरकार ने सन् 1876 में एक श्रम-कानून पास किया। इस कानून के द्वारा मजदूरों की दशा में कुछ सुधार आया क्योंकि मॉरीशस सरकार ने रॉयल कमीशन के बहुत से सुझावों को स्वीकार कर लिया था। पाँच वर्षों के अनुवन्ध की समाप्ति पर शर्तबन्द मजदूर अपनी इच्छानुसार कहीं भी काम करने को स्वतन्त्र थे। अब उनके प्रति अमानुषिक व्यवहार कम होता था। किन्तु 1876 के श्रम-कानून से भी उन गरीबों की हालत में कोई बहुत बड़ा परिवर्तन नहीं आया। यही कारण था कि भारत और इंगलैण्ड में आप्रवासन के विरुद्ध लोकमत जागृत करने के लिए आवाज उठाई गई। फलतः ब्रिटिश सरकार ने शर्तबन्दी प्रथा पर प्रकाश डालने के लिए "लार्ड आन्डर्सन" (Lard Anderson) के प्रधानत्व में एक समिति का गठन किया। समिति ने पाया कि मजदूरों का खूब शोषण होता रहा है, जिसके कारण उनकी दशा बड़ी दयनीय रही है। अतः समिति ने सुझाव दिया कि आप्रवासन का अन्त कर दिया जाय। समिति के सुझाव के आधार पर सरकार ने 1916 में एक कानून पास किया और आप्रवासन को समाप्त कर दिया।

युवा बैरिस्टर कर्मचन्द गांधी के तीन मन्त्र

सन् 1901 के नवम्बर मास में नाटाल "दक्षिण अफ्रीका" से बम्बई को रवाना होते समय युवक बैरिस्टर मोहनदास कर्मचन्द गांधी दो सप्ताहों के लिए मॉरीशस रुके थे। वे एक रात के लिए तत्कालीन राज्यपाल सर चार्ल्स ब्रूस (Charles Bruce) के मेहमान बने थे। सर चार्ल्स ब्रूस का कार्यकाल सन् 1897 ईसवी से सन् 1903 ई. तक रहा। वे संस्कृत के विद्वान थे और मॉरीशस आने से पहले "क्वीन्स कॉलेज" में संस्कृत के प्राध्यापक थे। उन्होंने नल और दमयन्ती के साथ-साथ, अथर्ववेद के कुछ मंत्रों का अनुवाद भी किया था। इसीलिए उन्हें पंडित' की उपाधि से अलंकृत किया गया था। पोर्टलुई के "ताहेर बाग" में गांधी जी का भव्य स्वागत हुआ था। जनाब हाजी गुलाम होसन के प्रधानत्व में स्वागत समिति का गठन हुआ था। उस स्वागत समारोह में देश-भर से भारतीय आप्रवासी तथा अन्य समुदायों के प्रतिनिधि आये हुए थे। अपने भाषण के दौरान मोहनदास कर्मचन्द गांधी ने आप्रवासियों को तीन महामन्त्र दिये :

(क) भारतीय आप्रवासी अपने बच्चों को शिक्षा की ओर उन्मुख करने में पूरा ध्यान दें।

(ख) मॉरीशस द्वीप की राजनीति में सक्रिय भाग लें।

(ग) मातृभूमि भारत की घटनाओं में रुचि लें।

गांधी जी ने दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों की रक्षा की थी, उसके लिए भारी संघर्ष किया था। अतः जिन कठिनाइयों का सामना भारतीय लोग मॉरीशस में कर रहे थे, उन्हें वे अच्छी तरह से समझते थे। मॉरीशस-निवासी, ताम्बी नाइडू उस समय दक्षिण अफ्रीका में गांधी जी के सहयोगी के रूप में काम कर रहे थे। उन्होंने ही सन् 1901 में गांधी जी को मॉरीशस आने के लिए प्रेरित किया। यहाँ आने पर युवक बैरिस्टर गांधी ने कुछ स्थानों का दौरा किया। आप्रवासियों की दरिद्रता देखकर उन्हें बड़ा दुःख हुआ। वे दक्षिण मॉरीशस के एक गाँव में गये, जहाँ उन्हें एक हिन्दू विवाह में सम्मिलित होने का मौका मिला। उस विवाह को सम्पन्न करने के लिए ग्रामीणों का सहयोग देखकर वे बड़े प्रभावित हुए। उस गाँव के बसने वाले लोगों ने उस विवाह-कार्य को पूरा करने के लिए अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार रुपये और सामान देकर सहायता की थी। मोहनदास का कोमल हृदय द्रवीभूत हो गया। उन्होंने निश्चय किया कि यथाशक्ति आप्रवासियों का दुःख दूर करेंगे। भारत लौटने पर कलकता में हो रहे राष्ट्रीय कॉंग्रेस के वार्षिक अधिवेशन में उन्होंने मॉरीशस में बसे भारतीय आप्रवासियों की स्थिति पर एक पूरा प्रतिवेदन प्रस्तुत किया।

उन दिनों मॉरीशस में भारतीय आप्रवासियों के बीच कोई नेता पैदा नहीं हुआ था। जो भी गोरे किसानों के विरुद्ध अपनी आवाज बुलन्द करते थे, उन्हें आसानी से शान्त कर दिया जाता था। पूरी सत्ता मुट्ठी-भर गोरों के हाथों में थी। साधारण जनता को शासन में कोई अधिकार प्राप्त नहीं था। जिन भारतीयों में विरोध करने का साहस था, उन्हें घूस, जमीन, शक्कर-कोठी में अच्छी नौकरियां अथवा दण्ड देकर दबा दिया जाता था। कुछ पढ़े-लिखे लोग नौकरियाँ पाने के लिए ईसाई बन जाते थे या चुप ही बैठे रहते थे।

मणिलाल डॉक्टर बचाने आये

भारतीय आप्रवासियों में एक भी वकील अथवा डॉक्टर नहीं था जो उनके पक्ष में कुछ बोल सकते। ऐसी ही स्थिति में गांधी जी भारतीय अप्रवासियों के पक्षधर के रूप में युवा बैरिस्टर, मगनलाल मणिलाल डॉक्टर को मॉरीशस भेजा। मणिलाल डॉक्टर गोखले के "सर्वेंट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी" के एक कर्मठ सदस्य थे। वे यहाँ 13 अक्तूबर सन् 1907 को पहुँचे। इस द्वीप में उनका आगमन, प्रथम भारतीय आप्रवासियों के आगमन से ठीक बहत्तर वर्ष बाद हुआ था। चूँकि अब तक आप्रवासियों का कोई नेता न था, मणिलाल डॉक्टर ने ही उनका कुशल नेतृत्व किया। वे यहाँ चार वर्षों तक हिन्दुओं के रक्षक बने रहे। इस क्रांतिकारी बैरिस्टर ने मजदूरों में आत्मविश्वास स्वाभिमान तथा अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होने की भावना पैदा की। वे मॉरीशस को "सागर के परे लघु भारत" समझते थे। वे इस देश को भारत के साथ जोड़ने वाले एक पुल के समान थे। वे मात्र वकील ही नहीं थे, वरन् दूरदर्शी नेता और योग्य पत्रकार भी थे। उन्होंने मॉरीशस में "हिन्दुस्तानी" नाम का हिन्दी-अंग्रेजी में एक पत्र निकाला। इस पत्र के प्रथम पृष्ठ पर तीन आदर्श सूत्र छापे जाते थे : "वैयक्तिक स्वाधीनता," "भाईचारा" एवं "विभिन्न वर्गों में समानता।" हिन्दुस्तानी में प्रकाशित उनके लेखों से गोरों के कान खड़े हो गये। सन् 1910 में उन्होंने पोरलुई में आर्य समाज की स्थापना की। विद्या का प्रचार-प्रसार जोर-शोर से होने लगा, मणिलाल डॉक्टर और आर्य समाज के प्रयत्नों से हिन्दू सजग होने लगे। उनमें राजनीतिक चेतना आने लगी। अब वे गोरे किसानों को "माई-बाप" अर्थात् अपना सर्वेसर्वा समझने की भूल से बचने लगे। लोगों की कातरता दूर हुई। भारतीय संसद में गोखले के कार्य तथा मणिलाल, गांधी एवं अन्यों के सुप्रयास के फलस्वरूप जब शर्तबन्दी-प्रथा खत्म हुई तब यहाँ के भारतीय आप्रवासियों ने महसूस किया कि गुलामी के खिलाफ छेड़े गये स्वतन्त्रता संघर्ष के प्रथम भाग में उनकी जीत हुई। शर्तबन्दी उनके लिए शाप थी। अब उससे मुक्ति मिली।

मणिलाल डॉक्टर 23 सितम्बर 1911 को मॉरीशस से विदा हुए। फीजी में भारतीय आप्रवासियों की हालत बड़ी दयनीय थी। मगनलाल मणिलाल डॉक्टर

वहाँ के आप्रवासियों के त्राता के रूप में चल पड़े । वहाँ 1920 तक शर्तबन्दी-प्रथा के विरुद्ध संघर्ष करते रहे। तीस वर्ष बाद पुनः मॉरीशस लौटे । मणिलाल डॉक्टर की अनुपस्थिति में कई आर्य समाजी विद्वान् मॉरीशस आते रहे और मणिलाल द्वारा शुरू किये गये कार्यों को गति देते रहे। सन् 1911 में डा० चिरंजीव भारद्वाज के आ जाने से आर्य समाज जोर पकड़ने लगा। हिन्दी पाठशालाओं का ताँता लग गया। डॉक्टर साहब ने महर्षि दयानन्द के अमर ग्रन्थ, "सत्यार्थप्रकाश" का अंग्रेजी में अनुवाद किया था। उनमें हिन्दुओं को संगठित करने की अपूर्व शक्ति थी। उन्होंने अपने नगर-कीर्तन द्वारा अखिल टापू का दौरा किया तथा शिक्षित युवकों को अन्याय-अत्याचार, झूठ-पाखण्ड का विरोध करने के लिए उत्तेजित किया। उनमें काशीनाथ किस्टो एक थे, जो मणिलाल डॉक्टर से बड़े प्रभावित हो चुके थे। काशीनाथ किस्टो को युवकों द्वारा सार्वजनिक शांति भंग कराने के आरोप में जेल की सजा हुई। जेल से रिहा होने पर धार्मिक ज्ञान की प्राप्ति के लिए भारत रवाना हुए। वे बडे योग्य विद्वान् बनकर लौटे। उनके द्वारा किये गये धार्मिक, सामाजिक सुधारों के कारण मॉरीशस उनका सदा ऋणि रहेगा।

सन् 1907 में श्री जॉर्ज गिल्बेअ एडुआअ नैराक, मेराँदों और डॉ० एजेन लोराँ के नेतृत्व में एक नई राजनीतिक पार्टी का जन्म हुआ। यद्यपि इस दल के नेता रंगीन समुदाय के पक्ष में गोरों के विरुद्ध आन्दोलन कर रहे थे, तथापि भारतीय आप्रवासियों ने इस दल का समर्थन किया। इस राजनीतिक दल का नाम "आक्सियों लिबेराल" था जिसके प्रमुख नेता डॉ० एजेन लोराँ थे वे बड़े कुशाग्र बुद्धि के थे। उन्होंने मणिलाल डॉक्टर का सहयोग प्राप्त करके देश-व्यापी मिटिंगों की आयोजना की। डॉक्टर साहब ने हिन्दुस्तानी में धुआँधार भाषण करके हिन्दू-मुसलमानों को "आक्सियों लिबेराल" दल का प्रबल समर्थक बना दिया। रेमी ओलिये रंगीन तत्व की जनता को एक बार उकसा चुके थे। अब आक्सियों लिबेराल के नेता उनके रक्षक बने हुए थे। इसलिए यहाँ के क्रिओल "आक्सियों लिबेराल" दल के पक्के समर्थक हो गये थे। यह दल गोरे पूँजीपतियों के अन्याय-अत्याचार का खुलकर विरोध करता था, प्रजातन्त्र के सिद्धांतों पर बहुत जोर देता था। मिल-मालिक अपने खेती-कारखानों के कारोबार में घाटा बता रहे थे, इसलिए आप्रवासियों को बहुत ही कम वेतन देकर काम करवाते थे। डॉक्टर एजेन लोराँ गोरों की शोषण-वृत्ति से परिचित थे। उन्होंने मिल-मालिकों की आमदनी पर जाँच-पड़ताल करने के लिए एक राजकीय आयोग की माँग की, जिसका समर्थन मणिलाल डॉक्टर ने किया। गोरे बड़े घबराये, क्योंकि सन् 1872 ई० के राजायोग के कारण उनको मुँह की खानी पड़ी थी। उदारपंथी गोरों के विरोध के बावजूद भी 18 जून 1909 को मॉरीशस में रॉयल कमीशन का आगमन हो ही गया। भारतीयों को राजायोग के सामने बयान देने का अच्छा मौका मिल गया। यह कार्य मणिलाल डॉक्टर द्वारा

खूबी से किया गया। डॉक्टर साहब राजायोग की नियुक्ति से अठारह मास पूर्व ही मॉरीशस आ चुके थे और आप्रवासियों के दुःख-दर्द से पूर्ण परिचित थे। मणिलाल डॉक्टर के प्रभाव से अब हिन्दुओं का दब्बूपन दूर होने लग गया था। मॉरीशस में बसे हिन्दू भारत के स्वतन्त्रता-संग्राम के सेनानियों के कार्य-कलापों से परिचित हो रहे थे। भारत की आजादी की लड़ाई का प्रभाव यहाँ के आप्रवासियों पर भी पड़ता रहा। वे अब भी अपने को भारतीय समझते थे। भारत में हो रही हर घटना के प्रति, उन्हें सहानुभूति थी। वे गोरों की शोषण-नीति को समझने लगे थे और अपने अधिकारों की रक्षा के लिए संघर्ष करने को तैयार हो चुके थे। मणिलाल डॉक्टर के आह्वान पर कई हिन्दुओं ने रॉयल कमीशन के सामने अपनी शिकायतें पेश की। "जयपाल महाराज" का नाम भुलाया नहीं जा सकता, जिन्होंने साहस बटोरकर राजायोग को बताया कि छोटे हिन्दू किसानों के गन्नों की नाप-तौल "आत्मा शक्कर कोठी" में बहुत गलत की जाती हैं। यह शक्कर एस्टेट उस समय की विधान परिषद् के प्रसिद्ध प्रतिनिधि, आँरी लेक्लेजियो का ही था। मणिलाल डॉक्टर मानापमान की परवाह किये बिना, कमीशन के सामने अपना बयान देते गये। उनकी शिकायतों के उदाहरण निम्नलिखित हैं —

"भारतीय मजदूरों की दयनीय स्थिति की जाँच की जाय। बहुत से आप्रवासी भूख से पीड़ित होकर मृत्यु के मुँह में समा गये। बहुत सारे मजदूर पोर्टलुई की गलियों में भुखमरी के शिकार बने हुए हैं। उस बहकावे की झूठी कहानी की जाँच की जाय, जिसे सुनाकर भारतीयों को यहाँ लाया गया और अब शर्तबन्दी की अवधि की समाप्ति पर उन्हें असहाय छोड़ दिया गया है।"

"चावल के बदले मकई देने का प्रस्ताव करना, उन गरीब मजदूरों के प्रति विश्वासघात करना है, जिन्हें यहाँ धन का प्रलोभन दिखाकर और झूठे वायदे सुनाकर पथभ्रष्ट करने वाले दलाल लाये। अब उन गरीबों को कभी-कभी न खाने योग्य चावल खाने को विवश किया जाता है।"

डॉक्टर जाक लेवियं, आक्सियों लिबेराल" दल के एक दूसरे प्रमुख नेता थे, जिन्होंने कमीशन के सामने साक्षी बनकर भारतीयों के मामले का समर्थन किया।

डॉक्टर एजेन लोराँ, श्री एडुआग्र नइराक, श्री बुशे अविल आदि ने कमीशन को अपना बयान दिया। यह भी कहा गया कि जब छोटे हिन्दू किसान सरकार को बराबर कर चुकाते हैं, तब ईसाई गिरजाघरों की तरह उनके मन्दिरों को भी सरकारी धार्मिक अनुदान प्राप्त क्यों नहीं होता ? जब कानून की दृष्टि में सब धर्म समान हैं तब सभी को समता की दृष्टि से क्यों नहीं देखा जाता ?

सन् 1909 के रॉयल कमीशन के अध्यक्षद्वय सर फ्रेंक स्वेहनहाम और श्री (H. B. woodcock) एच. बी. वुडकाक थे। यद्यपि इन्होंने मणिलाल डॉक्टर की बहुत सी शिकायतों को अतिशयोक्तिपूर्ण बताया तथापि कमीशन की कुछ खोजें एवं निर्णय आप्रवासियों के लिए वरदान सिद्ध हुए । इस आयोग ने तत्कालीन निर्वाचन प्रणाली की निन्दा की। कुल जनसंख्या के दो प्रतिशत से भी कम निर्वाचकों को ही मतदान का अधिकार प्राप्त था । कहने की आवश्यकता नहीं कि ये मुट्ठी-भर निर्वाचक, मात्र गोरे ही थे। जिनके हाथों में देश की सत्ता तथा सारी सम्पत्ति थी। कमीशन ने खेद प्रकट किया कि शिक्षा के अभाव, अंग्रेजी-फ्रेंच-ज्ञान से वंचित और राजनीति से उदासीन रहने के कारण भारतीयों को अनेक कष्ट और अपार क्षति सहनी पड़ी है । आयोग के प्रतिवेदन के अनुसार प्रजातन्त्र का गला घोंटा गया था। उसमें स्पष्ट बताया गया—

"कोई भी विधान परिषद तब तक समस्त मॉरीशसवासियों के प्रतिनिधित्व करने का दावा नहीं कर सकती, जब तक कि उस परिषद में अनुपात की दृष्टि से भारतीय वंशजों के प्रतिनिधि न हों, क्योंकि भारतीय इस देश के जीवन में एक अहम् भूमिका निभा रहे हैं और कुल आबादी का दो तिहाई भाग उसी एशियाई (भारतीय) वंशजों का है।"

1909 के जाँच कमीशन ने डॉ. एजेन लोराँ की प्रतिष्ठा में चार चांद लगा दिये । कुलीनतन्त्र के शोषण और अन्याय पर विजय पाकर वे एक योग्य नेता के रूप में प्रख्यात हो गये। फलतः सन् 1911 के आम चुनाव में उनके दल की भारी जीत हुई । डॉ. एजेन लोराँ और एडुआ नइराक (Aduard Nairac) ने अनुदार पंथी, सर विल्यैम न्यूटन जैसे पुराने योद्धा को परास्त करने का यश कमाया।

डॉ. लोराँ रंगीन वर्ग की जनता के नेता और भारतीयों के मित्र बन गये। वे सामाजिक न्याय के प्रबल समर्थक थे । आक्सियों लिबेराल दल की जीत ने सिद्ध कर दिया कि रंगीन तत्व के लोगों में राजनीतिक चेतना आ चुकी थी।

चुनाव के बाद आवाज उठी कि क्यूर्पीप शहर में लेक्लेजियो के पक्षधरों ने डॉक्टर लोराँ पर आक्रमण किया और वे या तो घायल पड़े हैं अथवा मरे पड़े हैं। यह समाचार बिजली की तरह डॉ. लोराँ के चुनाव क्षेत्र, पोर्टलुई में फैल गया। समर्थकों में क्रोध की ज्वाला भड़क उठी । आक्सियों लिबेराल दल के अन्य नेता: रेने मेराँदो, आनातोल दे बुशे-अविल, जोअज एडुआअ नइराक आदिकों

ने अपने समर्थकों को सक्रिय किया। फलतः 19 जनवरी सन्, 1911 ईस्वी को पोर्टलुई में दगा फसाद हो गया।

पश्चगमन दल का जन्म

सन् 1921 के बाद मॉरीशस में एक नये राजनीतिक दल का जन्म हुआ जिसका नाम "पश्चगमन दल" (Retrocession) रीट्रोसेशन था। इस दल के आन्दोलन का उद्देश्य था, मॉरीशस देश फ्रांस को वापिस कर देना। यह विचार रियून्यन जन्मा, एडुआर्ग लोराँ के मन में पैदा हुआ था। वह "लापात्री" (जन्मभूमि) नामक पत्र का सम्पादक था। उसने एक लम्बी लेखमाला द्वारा बताना चाहा कि यदि मॉरीशस फ्रांस के अधीन हो जाए तो रंगीन जाति के लोगों की प्रतिष्ठा बढ़ जायेगी। गोरे कालों का भेद समाप्त हो जाएगा, काले लोग गोरों द्वारा द्वितीय श्रेणी के नागरिक नहीं समझे जायेंगे। फ्रांस अपनी महान् सभ्यता, संस्कृति, साहित्य के द्वारा रंगीन जाति को गौरव और प्रतिष्ठा प्रदान करेगा। धीरे-धीरे इस आन्दोलन का रंगीन जाति Coloured People के लोगों पर इतना प्रभाव पड़ा कि आक्सियों लिबेराल दल के कई नेता और समर्थक अपने दल को छोड़कर 'रीट्रोसेशन' के दल के नेता और अनुयायी बन गये। सन् 1921 के आम चुनाव में रीट्रोसेशन के सभी उम्मीदवार—डॉ. मोरिस कीरे (Morice Cure,) एडुआर्ग लोराँ आदि परास्त हुए। हिन्दुओं ने इस दल का साथ नहीं दिया। उन्होंने ब्रिटिश साम्राज्य के प्रति अपनी स्वामीभक्ति दिखाई। फ्रांस से जुड़ने के बजाय ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत बने रहना ही हिन्दुओं ने श्रेयष्कर समझा। वे मॉरीशस को एक छोटा भारत समझते थे, इसलिए रीट्रोसेशन आन्दोलन का विरोध करके डॉक्टर एजेन लोराँ का साथ दिया जो ब्रिटिश सरकार के पक्षधर थे।

स्वर्ण वर्ष

सन् 1920 मॉरीशस का स्वर्णवर्ष था। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद शक्कर का दाम बहुत बढ़ गया था। चीनी उद्योग से मॉरीशस को दो सौ चालीस मिलियन रुपये मिले। मजदूरों की आमदनी बढ गई। भारतीय आप्रवासी किसानों को बहुत लाभ हुआ। वे अचानक धनी बन गये। इसी वर्ग के लोग अवसर का लाभ उठाकर अपने बच्चों को उच्च शिक्षा के लिए विदेश के विश्वविद्यालयों में भेजने लगे। शिव सागर राम गुलाम, महावीर लक्ष्मीनारायण और अब्दुल रहमान ओसमान छोटे किसानों के ही बच्चे थे।

भारत से आये हुए कुली मजदूर छोटे किसान कैसे बन गये? यह भी एक रोचक कहानी है। उन्नीसवीं शताब्दी में मॉरीशस में तीन सौ छोटे-छोटे शक्कर-कारखाने थे। लगभग 1880 में बहुत-सी कोठियों और छोटे कारखानों को

उजाड़कर मिल-मालिक केन्द्रीय कारखाने और कोठियाँ स्थापित करने लगे। भू-सम्पत्ति के गोरे मालिक अपनी उस जमीन को टुकड़े-टुकड़े करके बेचने लगे, जो कारखानों से दूर थी, या पहाड़ी इलाकों में पायी जाती थी तथा जो ऊसर थी। यह जमीन उधार में बेची जाती थीं। खरीददार को ग्यारह प्रतिशत सूद देना पड़ता था। नियत समय में कर्ज भर देना पड़ता था, अन्यथा मालिक अपनी जमीन वापिस ले लेते थे।

जिन दिनों भारतीय, गोरों के कदमों-तले दबे हुए थे, उन्हें भविष्य के लिए एक-एक कोड़ी बचा पाने में बड़ी कठिनाई होती थी। वे चाहते थे कि उनके बच्चे और नाती-पोते गुलामों की तरह नहीं, बल्कि स्वतन्त्र होकर सुखी जीवन व्यतीत करें। अतः वे अपनी गाय-बकरियों तथा अन्य पशुओं को बेचकर बिकाऊ जमीन उधार में खरीद लेते थे। मजदूरों के सरदारों पर गोरों की कुछ कृपा-दृष्टि होती थी। इसलिए विशेषकर सरदारों में ही जमीन बेची जाती थी। भारतीय मजदूर सहनशील एवं धैर्यवान थे। उन्हें मिट्टी से बड़ा ही लगाव था। वे प्रकृति के उपासक थे। खेत-खलिहानों, पेड़-पौधों, पशु-पक्षियों पर जान देते थे। उनकी मान्यता थी कि ये सब, ईश्वर-प्रदत्त चीजें हैं, इनकी हर हालत में रक्षा करनी चाहिए। अतः जमीन की किसी भी टुकड़ी को यों ही छोड़ देना, उन्हें कतई स्वीकार नहीं था। वे कई प्रकार की सब्जियाँ और गन्ने रोप दिया करते थे। जिस भूमि पर खेती करना अत्यन्त कठिन होता, उसे भी खरीद लेते। उधार में ली गई जमीन के भुगतान के लिए उन्हें पाँच वर्षों की अवधि दी जाती। वे सादा जीवन बिताने में ही सन्तुष्ट थे। गन्ने के खेतों में अपने परिवार के सभी सदस्यों को साथ लेकर देर तक काम करते। ईख की फसल को काटकर कारखाने भेज देते और उपार्जित धन से कोठी का ऋण चुका देते। मिल-मालिकों के कारखानों का काम बढ़ जाता। उन्हें छोटे किसानों के गन्नों से अधिक मुनाफा होता। अत. भू-सम्पत्ति के मालिक को अपनी अनुपजाऊ जमीन बेचने में कोई नुकसान नहीं होता। उस जमीन को हिन्दू मजदूर अपना खून पसीना सींचकर उर्वरा बना देते और देखते-देखते छोटे किसान बन जाते। लेकिन 1902 में "सुरा" महामारी के फैलने के बाद जब बहुत सारे पशु मर गये, तब जमीन को बहुत अंशों में बेचने की प्रथा को रोकना पड़ा। इससे हिन्दुओं का दुःख बढ़ गया, क्योंकि मुख्यतः वही लोग गाय-बैल और बकरियाँ पालते थे। प्रायः प्रत्येक भारतीय परिवार को एक गाय के होने से गर्व की अनुभूति होती थी। गाय को पवित्र पशु के रूप में मानते थे, एक माता के रूप में, जिसका दूध पूरे परिवार को मिलता था।

बैलों के मर जाने से अनेक कोठियों में भारतीय गाड़ीवान और मजदूर खुद को गाड़ियों के साथ जोतकर जानवरों की तरह उन्हें खींचते। महामारी "सुरा" के

फलस्वरूप कुछ काल बाद कोठियों के मालिक बैलगाड़ियों की जगह "ट्रैमवे" और सवारी के अन्य आधुनिक साधनों से काम लेने लगे। ये बैलगाड़ियों की अपेक्षा कम समय में ज्यादा भार के साथ अधिक दूर तक जा सकते थे। कोठी-मालिकों को यह ख्याल आया कि उन्हें अपनी दूर दराज की जमीन को भारतीयों के साथ बेचना नहीं है। उल्टा वे अपनी खेती का ज्यादा विस्तार करने लगे। अनेक जमींदारों ने उन भारतीयों से अपनी जमीन वापस ले ली, जो समय पर ऋण नहीं भर सके। धीरे-धीरे सन् 1924 तक छोटे किसानों की संख्या पैंतालीस प्रतिशत तक बढ़ गई। दस हजार किसानों में अधिकतर वे लोग थे जिनकी एक से लेकर पचास एकड़ तक जमीन थी। पचास एकड़ से अधिक भूमि इने-गिने ही किसानों के पास थी। ये छोटे किसान शुरू में वे मजदूर थे जो स्वतन्त्र कृषक बनकर जीने की प्रबल अभिलाषा रखते थे। वे कोठियों की झोंपड़ियों से आजाद होकर गाँव अथवा शहर में अपना मकान बनाना चाहते थे। स्वतन्त्रतापूर्वक अपने काम-धन्धों का चुनाव करने के इच्छुक थे। वे नहीं चाहते थे कि उनके बच्चे उन्हीं कष्टों का सामने करें, जो वे जीवन में कर चुके थे। इसी आशा से अपने बच्चों को बैठकों, पाठशालाओं और बाद में विश्वविद्यालयों में भेजने लगे। द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति पर शक्कर का दाम बढ़ जाने से छोटे किसानों को इतना आर्थिक लाभ हुआ कि वे अपने लड़कों को उच्च शिक्षा के लिए इंग्लैण्ड-फ्रांस आदि देश भेजने में समर्थ हो गए। शिवसागर का सौतेला भाई, रामलाल अब तक क्लेमाँसिया में एक अच्छे किसान के रूप में काफी प्रगति कर चुका था। किन्तु सबसे बड़ा भाई नकछेदी हीरामन की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। यही कारण है कि वह आर्थिक दृष्टि से शिवसागर की पढ़ाई में कोई सहायता न कर सका। सारी जिम्मेदारी रामलाल ने ही ली। जब शिवसागर ने इंग्लैण्ड जाकर डॉक्टरी सीखने का अडिग संकल्प किया तब भाई रामलाल ने उनके इस संकल्प का स्वागत किया और पढ़ाई का सारा भार अपने ऊपर ले लिया। भाई का प्रोत्साहन पाकर शिवसागर को पूरा विश्वास हो गया कि परमात्मा उनकी मनोकामना पूरी करेंगे।

तृतीय परिच्छेद

शिवसागर रामगुलाम विलायत में

सन् 1921 ईसवी तक मॉरीशसीय इतिहास शिवसागर के अध्ययन का विषय बन चुका था। अब उन्हें इस इतिहास में कई अध्याय जोड़ने थे। इक्कीस वर्ष की आयु अर्थात् सन् 1921 में अपने दो मित्रों :—लखीनारायण और ओसमान के साथ लन्दन के लिए रवाना हुए। उन दिनों आप्रवासियों के बच्चों को उच्च शिक्षा के लिए विलायत जाना, एक अनहोनी घटना थी। रामगुलाम और लखीनारायण ने डाक्टरी सीखी। तीसरे मित्र ओसमान ने कानून का अध्ययन किया।

लन्दन में, आरम्भ के छः महीनों तक रामगुलाम ने "इण्डियन स्टुडेन्ट्स ऐसोसिएशन" में वास किया। यह संघ विदेशों से आये भारतीय छात्रों का स्वागत करता था। इस संघ को भारतीय सरकार की ओर से अनुदान प्राप्त होता था। अतः इसके द्वारा भारतीय छात्रों को आहार, रहने का स्थान आदि सुविधाएँ प्राप्त होती थीं। सारे यूरोप में इस संघ की शाखाएँ फैली हुई थीं।

शिवसागर का भाई, रामलाल अब तक एक सम्पन्न और प्रतिष्ठित व्यक्ति बन चुका था। वह बिना किसी कठिनाई के शिवसागर को काफी रुपये भेज देता। लन्दन में शिवसागर निश्चिन्त, बड़े मजे में रहते। वे अच्छा खाते और अच्छा पहनते। उन्होंने अच्छे कपड़े खरीदने की आदत बना ली और ठीक तरीके से पहनने-ओढ़ने की यह आदत आजीवन बनी रही। वे एक भद्र पुरुष की तरह रहते। भारतीय छात्रों एवं देश-भक्तों से आसानी से दोस्ती कर लेते। उन्हें इस बात का गर्व होता कि आप्रवासी के पुत्र होकर बड़े-बड़े नेताओं से मिलने का सौभाग्य पा रहे थे। लन्दन-स्थित "इण्डिया हाऊस" एक ऐसा केन्द्र था, जहाँ राष्ट्रीयता के समर्थक अक्सर आया करते थे। समय-समय पर रामगुलाम वहाँ गांधी, नेहरू, बोस, लाला लाजपत राय, ठाकुर, विट्ठल भाई पटेल, सदानंद सिन्हा, श्री निवास शास्त्री आदि बड़े-बड़े देश-भक्तों से मिलते रहे। उनके दिल में भारत के प्रति गहरा प्रेम पैदा हो गया। भारतीय विद्यार्थियों का स्वागत और दोस्ती पाकर उस प्रेम में और भी वृद्धि हुई। वे उस प्रेम को गंगा की भाँति बहते और हिमालय-सा ऊँचा उठते महसूस करते। उन्हें अपनी आँखों के सामने महान् भारतीय सभ्यता, आर्यों का

भारत, वेदों का महत्व, सीता, राम, कृष्ण तथा बुद्ध का गौरव नजर आने लगता। वे भारत के पवित्र ग्रन्थों–रामायण, महाभारत, भगवद्गीता आदि का अध्ययन करने लगे। बुद्ध के उपदेशों को पढ़कर उन्हें ऐसे लगता मानो उनकी आत्मा में एक प्रकार की आध्यात्मिक धारा प्रवाहित हो रही हो। वे बड़े अचम्भित होते कि इतनी अद्वितीय सभ्यता वाले भारत देश के प्रति यूरोप वालों का कैसा दुर्व्यवहार है। ऐसा बर्ताव तो तुच्छ प्राणियों के साथ भी नहीं होना चाहिए। भारत में मुगल साम्राज्य और ब्रिटिश राज्य की स्थापना कैसे हुई ? इतिहास के अध्ययन से जब उनको कारण मालूम हुए तब हृदय को ग्लानि हुई।

भारत में नवजागरण का बिगुल बज चुका था। गांधी, नेहरू और बोस जैसे महान् देश-भक्तों के कार्यों के अचूक प्रभाव से शिवसागर बच न सके। उनका दिल उमंग से भर गया। उनमें राजा राममोहनरॉय द्वारा सस्थापित ब्रह्म समाज के प्रति बड़ी दिलचस्पी पैदा हुई। यह समाज भारत को कमजोर करने वाली कुरीतियों से जूझ रहा था और उन्हें निकाल फैंकने में बड़ा सक्रिय था। वैदिक कालीन एवं अतीत के गौरव का बोध कराने वाले महर्षि दयानन्द के प्रति उनमें श्रद्धा उत्पन्न हुई। साथ ही वीर संन्यासी विवेकानन्द पर गर्व हुआ, जिन्होंने हिन्दू धर्म के महत्व को विदेशों में उजागर किया था। वे भारत के महान् देशभक्त बाल गंगाधर तिलक के बारे में पढ़कर रोमांचित हो जाते तथा पंजाब केसरी, लाला लाजपतराय को अपना आदर्श मानने लगे।

युवक रामगुलाम की रुचि राजनीति में बढ़ने लगी। भारतीय स्वतंत्रता-संग्राम में बड़ी दिलचस्पी लेने लगे। उनमें एक नई ज्वाला भड़क उठी और मॉरीशस को स्वतन्त्र करने का सपना देखने लगे। भारतीय नेताओं की तरह ही एक दिन अपने देश की स्वतन्त्रता के लिए लड़ने का संकल्प कर लिया। अतः उन्होंने लन्दन में होने वाली सभी राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेने और यथा-सम्भव अनुभव प्राप्त करने का निर्णय किया।

तत्कालीन महान् भारतीयों से सम्बन्ध स्थापित हो जाने से रामगुलाम को अपार हर्ष की अनुभूति हुई। "इण्डियन स्टुडेंट्स सेंट्रल ऐसोशिसेशन" (भारतीय छात्र केंद्रीय संघ) के नेता बन गये। उन्होंने संकल्प किया कि वह ज्ञान अवश्य प्राप्त करेंगे, जिसके माध्यम से मॉरीशस को स्वतन्त्र करने के लिए अपना जीवन-न्यौछावर कर सकें। वे सभी स्रोतों से राजनीतिक शिक्षा ग्रहण करने लगे। उदारवादी, साम्यवादी, समाजवादी, मजदूर दल, सभी से सीखते रहे। एक ओर महात्मा गांधी के शांतिपूर्ण तौर-तरीकों से प्रभावित थे, तो दूसरी ओर सुभाषचन्द्र बोस की क्रान्ति-

कारी पद्धतियों से। अन्य भारतीय छात्रों के समान ही वे यह देखने को बड़े उत्सुक थे कि भारत स्वराज्य प्राप्त करके गौरव के साथ अपना सिर ऊँचा रखे।

शिवसागर अपने देश, विशेषकर अपने निवास स्थान, बेलरिव में दीन-हीन परिवारों की दयनीय दशा देख चुके थे। परतन्त्रता, शोषण और गरीबी को अभिशाप समझने लगे थे। उनकी दृष्टि में गोरे किसान और मालिक आप्रवासियों का खून चूसकर अपनी तिजोरियाँ भरने वाले भयानक जीव थे। अतः उन्हें पराधीन भारत के हिन्दुओं की हालत समझने में देर नहीं लगी। गरीबी और गुलामी हर देश के लिए घातक है, चाहे वह मॉरीशस हो अथवा भारत। अपनी स्वार्थ-पूर्ति के लिए मनुष्य को दास बनाकर रखने वाले शोषकों के खिलाफ युवा रामगुलाम के खून में क्रान्ति की ज्वाला जलने लगी। वे मनुष्य की स्वतन्त्रता और देश की आजादी को देव-वरदान समझने लगे।

उस समय के पार्लमेंट के कम्यूनिष्ट सदस्य, शापुरजी सकलत वाला ने उन्हें इण्डियन नेशनल कांग्रेस'' की लन्दन वाली शाखा में प्रवेश कराया। वे सन् 1924 में कांग्रेस के सभापति बन गये। उसी वर्ष महात्मागांधी गोल मेज सम्मेलन (Round Table Confrence) में भाग लेने हेतु लन्दन आये। शिवसागर ने महात्माजी के स्वागत में बड़ी सक्रियता से सहयोग दिया। पश्चिम लन्दन के ''नाइट्सब्रिज'' नामक स्थान में स्थित ''इंडियन स्टुडेंट्स सेंट्रल ऐसोसिएशन'' के संस्थापकों में वे भी एक थे। उस संघ के अध्यक्ष, भारतीय छात्र श्री सदानन्द सिन्हा थे। शिवसागर बड़े उत्साहपूर्वक उनके साथ काम करते रहे तथा आजीवन उनके अच्छे मित्र बने रहे।

रामगुलाम महान् देश प्रेमी श्री विट्ठल भाई पटेल को अपना राजनीतिक गुरु मानते थे। उन्हीं के चरणों में बैठकर राजनीतिक शिक्षा ग्रहण करते थे। उनके देश-प्रेम, प्रजातन्त्र के प्रति आस्था, न्यायप्रियता और समाजवाद की स्थापना करने के दृढ़ निश्चय से बड़े प्रभावित थे। बाद में पटेल भारतीय ससद के अध्यक्ष (स्पीकर) बने तथा उनके अनुज, सरदार बल्लभ भाई पटेल भारत के गृहमंत्री एवं उप प्रधान मंत्री हुए। एक कुली के पुत्र एवं देहाती युवक शिवसागर के लिए इससे बढ़कर खुशी तथा गर्व की बात और क्या हो सकती थी कि ब्रिटिश साम्राज्य की राजधानी, लन्दन जसे महानगर में चोटी के राजनीतिज्ञों का सम्पर्क पा रहे थे। ब्रिटिश साम्राज्य से सम्बन्धित सभी निर्णय लन्दन में ही लिये जाते थे। रामगुलाम को राजनीतिक ज्ञान को प्राप्त करने का सुनहरा अवसर मिल गया था। जब कोई

भारतीय शिष्ट मंडल लन्दन आता तब उसके स्वागत के लिए वे वहाँ मौजूद होते, कई स्वागत समारोहों का स्वयं आयोजन करते तथा उन नेताओं के हृदय में व्याप्त क्रान्ति को निकट से देखते। वे क्रान्तिकारी सुभाष चन्द्र बोस से बड़े प्रभावित थे। बोस सविनय अवज्ञा (सिविल डिसोबीडयन्स) के कारण हाल में जेल से छूटे थे और स्विटजरलैण्ड आ पहुंचे थे। उन्होंने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "द ग्रेट इण्डियन स्ट्रगल" (The Great Indian Struggle) को प्रकाशन के लिए लन्दन भेजा था। । जिस समय वे जिनिवा में थे, उस समय रामगुलाम ही उस पुस्तक के प्रूफशोधक थे।

भारतीय छात्रों और नेताओं के अतिरिक्त शिवसागर को होनहार अफ्रीकी विद्यार्थियों का भी सम्पर्क प्राप्त हुआ, जो आगे चलकर अपने-अपने देश के महान् नेता बने। इनमें जोमो केनियाता, केनेत काउन्डा आदि प्रमुख हैं। भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम अफ्रीकी नेताओं का भी प्रेरणास्रोत रहा। रामगुलाम की तरह ही केनियाता और काउण्डा भी भारतीय नेताओं द्वारा प्रभावित होते रहे।

साहित्य की ओर

यद्यपि शिवसागर की पढ़ाई का मुख्य विषय डॉक्टरी था, तथापि राजनीति और अंग्रेजी साहित्य का प्रेम उन पर हावी रहा। वे साहित्य को व्यक्तित्व के विकास के लिए अत्यावश्यक समझते थे। साहित्य के प्रति उनकी रुचि रॉयल कॉलेज के आरम्भिक वर्षों की पढ़ाई के समय ही तीव्र हो चुकी थी। अंग्रेजी साहित्य ने ही उनमें इंग्लैण्ड के प्रति प्रेम की भावना पैदा की। कॉलिज के दिनों में ही साहित्य पढ़ते हुए शेक्सपीयर, वर्डसवर्थ, किट्स, महारानी एलीजाबेथ, फ्रेंसिस ड्रेक, न्यूटन बोइले, आदि की मातृभमि के दर्शन की अभिलाषा उत्पन्न हुई थी। उनके अंग्रेज अध्यापक, रेवरण्ड फाउलर तथा श्री हारवड ने अपने सद्व्यवहार, न्यायप्रियता, पक्षपातहीनता, परिश्रमशीलता आदि गुणों की छाप उनके दिल में छोड़ दी थी। जिस घड़ी रामगुलाम ने इंग्लैण्ड की धरती पर पाँव धरा, उन्हें अपार हर्ष का अनुभव हुआ। उन्हें ऐसा लगा, मानो पहली बार स्वतन्त्रता की हवा में साँस ले रहे हों। इंग्लैण्ड का हर नागरिक आजाद और सर ऊंचा करके जीने वाला दीख पड़ा। वे अपने देश के घुटन-भरे वातावरण से दूर एक स्वाधीन देश के गगन-तले पहुंच गए थे, जहाँ प्रजातन्त्र की महत्ता प्रचारित की जाती थी। हर नागरिक के मौलिक अधिकारों की रक्षा की जाती थी।

लन्दन में शिवसागर जब भी अपनी डॉक्टरी-पढ़ाई से छुट्टी पाते, अपना खाली समय पुस्तकालयों में पुस्तकों के बीच ही व्यतीत करते। अखबारों, पत्र-पत्रिकाओं किताबों से घिरे रहते। वे अपनी पुस्तक—"आॅवर स्ट्रगल" में लिखते

हैं, "मेरे लिए यह बताना कठिन है कि अपने लन्दन प्रवास-काल में कितने घण्टे, कितने दिन, सप्ताह और वर्ष मैंने सार्वजनिक पुस्तकालयों और ब्रिटिश म्यूजियम में अध्ययन करते व्यतीत किये हैं। अंग्रेजी भाषा और साहित्य का प्रेमी होने के कारण मैं बी. बी. सी. के साहित्यिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों को बड़ी उत्सुकता-पूर्वक सुनता था तथा जहाँ भी साहित्यिक कार्यक्रमों की आयोजना होती, वहाँ भाग लेता। मैं अपने प्रिय लेखकों और कवियों जैसे जार्ज बर्नार्ड शॉ, गाल्सवर्दी आरनोल्ड बेनेट, जी. के. चेस्टरटन और विशेषकर टी. एस. इलियट से अवश्य सम्पर्क स्थापित करता।"

वे आगे लिखते हैं—"मैं व्यक्त नहीं कर सकता कि अंग्रेजी साहित्य से मुझे कितना आनन्द प्राप्त होता है। जीवन को अधिक गहराई से देखने-समझने की योग्यता इसी साहित्य से मिली है। इसने दूसरे मनुष्यों के बारे में मुझे जानकारी दी है। एक मशाल की भाँति प्रकाश देकर मेरा मार्ग प्रदर्शित किया है। इसी साहित्य ने मेरे मन में मानव के प्रति सहानुभूति उत्पन्न की है। समय के साथ साहित्य में होने वाले विकास एवं परिवर्तन का ज्ञान मैं सदा पाता रहा हूं। यद्यपि इस समय मेरे ऊपर उत्तरदायित्वपूर्ण कार्यों की बहुलता है, तथापि मैं साहित्य-सागर में गोता लगाकर कुछ दिमागी ताजगी पा लेने के लिए समय निकाल ही लेता हूं। मेरी मान्यता है कि साहित्य ही ज्ञान की अन्य महत्त्वपूर्ण शाखाओं, जैसे राजनीति, इतिहास, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, विज्ञानादि को समझने की योग्यता प्रदान करता है। साहित्य ने मुझ में अन्य भाषाओं, विशेषकर पूर्वी भाषाओं के प्रति प्रेम पैदा किया है। विविध भाषाओं के ज्ञान से विभिन्न संस्कृतियों, जीने की उचित विधियों, नैतिक मूल्यों, दूसरे धर्मों, पूर्वात्य और पाश्चात्य दर्शनों का बोध हुआ है। मैं साहित्य की तुलना वृक्ष के उस तने से करता हूँ, जिससे ज्ञान की अन्य शाखाएं अपना जीवन पाती हैं। साहित्य वह साधन है, जो मानव को स्वतन्त्रता, न्याय और प्रगति के लिए प्रेरित करता है।"

सन् 1936 में शिवसागर ने "इण्डियन कल्चरल रिव्यू" (Indian Cultural Review) में "लाइफ एण्ड लिट्रेचर टुडे" (Life and Literature today) शीर्षक से एक लेख लिखा था, जिसमें साहित्य के सम्बन्ध, में अपने कुछ विचार व्यक्त किये थे। इस लेख में उन्होंने साहित्य को साम्राज्यवाद और फासिज्म (Facism) की बुराइयों का अन्त करने वाला शस्त्र बताया था और लिखा था कि इस हथियार के द्वारा मानवाधिकार शान्ति, स्वाधीनता एवं सत्य की नींव पर आधारित एक नई दुनिया और नये मानवतावाद की स्थापना की जा सकती है। इस लेख का एक अंश इस तरह है:—

"साहित्य दीर्घकाल से अपने को पूँजीवादी समाज की बेड़ियों से मुक्त करने में लगा था। आज एक नया रूप धारण कर रहा है। पुरानी भावनाएँ और बुर्जुआ आदर्शवाद कम होने लगा है। एक नए राज्य की सृष्टि के लिए उक्त हानिकारक भावनाओं को पर्णतया त्यागना होगा, ताकि वर्तमान समाज की समस्याओं का सामना किया जा सके। आज हमें लेखकों का एक ऐसा दल दृष्टिगोचर हो रहा है, जो आर्थिक समस्याओं से उत्पन्न सकटों को दूर करने के लिए हल पाने लगे हैं और मानव जाति की बौद्धिक एवं भौतिक उन्नति के लिए मार्ग तैयार कर रहे हैं। ऐसे साहित्यकारों में फ्रांस देश के "आंद्रे मालरो" (Andre Malraux) मानवाधिकारों के लिए लड़ रहे हैं। 'रोमें रोलां" (Romain Rolland) ने शांति और स्वतन्त्रता की प्राप्ति के खातिर विश्व को ही अपना घर बना लिया है तथा "आंद्रें गिद" (Andre Gide) रंगीन जातियों को आर्थिक और राजनीतिक बंधन से मुक्ति दिलाने में कार्यरत हैं। ये वे लोग हैं जो अपने युग की पुकार को समझ गये हैं और आज जो जीवन जिया जा रहा है, उसका सामना निर्भीकतापूर्वक कर रहे हैं। वे वर्तमान जीवन की जाँच पड़ताल करने का साहस रखते हैं तथा सत्य को प्रकट करने में हिम्मत नहीं हारते।"

शिवसागर को साहित्य से इतना प्रेम हो गया था कि एक समय तो पूर्ण कालिक लेखक तक बनने का विचार करने लगे थे। लन्दन में अपने शिक्षण-काल के दौरान एक मासिक पत्रिका का भी सम्पादन करते थे। "द मॉर्निंग पोस्ट" (The Morning Post) "डेली हेरेल्ड" (Daily Herald) "द टाइम्स" (The Times) आदि पत्रों पर उनके लेख छपते रहते थे। जिस समय उनका भाई, रामलाल उनको रुपये भेजने में असमर्थ हो गया था, उस समय वे लेख लिखकर अपनी आर्थिक कठिनाइयों का सामना करने के लिए कुछ आमदनी पा लेते थे।

रामगुलाम ने साहित्य का राजनीति से समन्वय करना चाहा उन्होंने पाया कि अनेक लेखक राजनीतिज्ञ भी थे। अतः राजनीतिक और साहित्यिक क्षमता की प्राप्ति के लिए वे बड़े श्रमशील रहे। उन्होंने पत्रकारिता और लेखन में जो प्रशिक्षण पाया, वह भविष्य में बड़ा लाभदायक सिद्ध हुआ। मॉरीशस लौटने पर सन् 1940 में जयनारायण राय, अनथ बिजाधर, रामचन्दर रामा तथा दो-चार अन्य मित्रों के सहयोग से "एडवांस" (Adwance) नामक दैनिक पत्र का सम्पादन शुरू किया। वे इस अखबार में "थम्ब मार्क टु" (Thumb Mark Two) नाम से क्रांतिकारी लेख लिखते थे। वे कभी नहीं भूल पाये कि उनके पिता मोहित रामगुलाम भारतीय अनपढ़ आप्रवासी थे जो अँगूठा छाप लगाते थे। अतः अनपढ़ मजदूर के पुत्र होने के कारण वे अपने को "थम्ब मार्क टु" अर्थात् अँगूठा छाप द्वितीय समझते थे।

राजनीति की लगन

पढ़ाई-लिखाई के अतिरिक्त शिवसागर अपने समय का काफी भाग लन्दन के अन्य शिक्षण-केन्द्रों में भाषण, वाद विवाद, कविता--पाठ आदि सुनने में व्यतीत करते थे। वे सम्मेलनों तथा सार्वजनिक सभाओं में सम्मिलित होना परम कर्तव्य समझते थे। वे "हाइड पार्क" (Hyde Park) में कुशल राजनीतिक वक्ताओं को बड़ी उत्सुकतापूर्वक सुनने जाया करते थे। इससे सामयिक राजनीति का परिचय पा जाते थे। उन्हें ठीक से पता चल गया कि राजनीति एक देश के जीवन में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। धीरे-धीरे ब्रिटिश राजनीति उन पर अपना रंग चढ़ाती गई। वे लन्दन के बौद्धिक और सांस्कृतिक जीवन के प्रशंसक बन गए। किन्तु इसका मतलब यह नहीं था कि वे उपनिवेशवाद, शोषण एवं अत्याचार की बुराइयों को आंखें बन्द करके स्वीकार कर जाते और उपनिवेशवाद के जुल्मों से सताई गई जनता को उनके भाग्य पर छोड़ देते। उनकी पकड़ में बात आ गई कि इंग्लैण्ड की समृद्धि तथा प्रजातांत्रिक जीवन का निर्माण उपनिवेशों में रहने वाले पीड़ित लोगों के खून पसीने से ही हुआ है। उन्होंने ब्रिटेन के प्रजातान्त्रिक जीवन और देश के विकास को बड़ी बारीकी से देखा तथा वैसा ही प्रजातन्त्र एवं विकास मॉरीशस की धरती पर लाने का विचार किया। वे ब्रिटिश-शिक्षक प्रणाली, स्वास्थ्य-सेवा, आर्थिक व्यवस्था, कला-कौशल, शिल्प-विज्ञान, व्यावसायिक तथा वाणिज्यिक संस्थाओं से विशेष प्रभावित हुए। उन्होंने सोचा कि ऐसी प्रगतिशील संस्थाओं का मॉरीशस में होना नितान्त आवश्यक है। कृषि, स्वास्थ्य, राजनीति, अर्थशास्त्र, शिल्प विज्ञान तथा आधुनिक सभ्यता के क्षेत्र में विज्ञान की उपलब्धियों को देखकर सोचने लगे कि यदि विश्व के पिछड़े देश विज्ञान से काम लेने लग जायें तो उपनिवेशवाद की मृत्यु होने में देर नहीं लगेगी। गोरी जाति द्वारा काली जाति को निकृष्ट समझने की भूल का अन्त हो जाएगा। आवश्यकता इस बात की है कि इंग्लैण्ड में पढ़ने वाला हर विद्यार्थी इन प्रगतिशील संस्थाओं के पीछे छिपे हुए रहस्य को समझे और इन सिद्धान्तों को पकड़कर उनका रहस्योद्घाटन करे। उसका परम कर्त्तव्य है कि वह अपने देशवासियों को बीसवीं शताब्दी की सच्चाइयों को समझने के लिए तैयार करे। उन्हें जागरूक करे ताकि जनता उपनिवेशवाद की देन गरीबी और निराशा से मुक्त हो सके।

कहने की आवश्यकता नहीं कि शिवसागर के दिल में क्रांतिकारी विचारों ने घर कर लिया। इसी प्रकार की क्रांति का प्रचार रूस में लेनिन द्वारा हो रहा था। लेनिन ने समाजवाद के लाभों को दर्शाने के लिए क्रांतिकारी पद्धतियों को अपनाया था जबकि गांधी और नेहरू भारत में शांतिपूर्ण तरीकों से कार्य कर रहे थे। उस समय विभिन्न देशों में विभिन्न विधियों के प्रयोग द्वारा उपनिवेशन को समाप्त करने

का आन्दोलन चल रहा था। शताब्दियों से उपनिवेशवाद पराधीन देशवासियों के दिल-दिमागों में हीन भावनाओं के बीज बोता आ रहा था। अब कई देश अपनी प्रतिष्ठा, आत्मसम्मान, अपने इतिहास और संस्कृति पर गर्व करने की भावना अपने अन्दर पैदा कर रहे थे। अफ्रीकी नेता एनकूमा का कथन था कि पहले राजनीतिक विजय पानी चाहिए। राजनीतिक स्वतन्त्रता के पश्चात् शेष बातें स्वयं पीछे-पीछे आयेंगी।

पहले लिखा जा चुका है कि शिवसागर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में प्रवेश कर चुके थे, वे साम्यवादी नेता शाहपुरजी सकलतवाला से प्रभावित हो चुके थे। अब मार्क्सवाद में बड़ी दिलचस्पी लेने लगे थे। उन्होंने गहराई से इस विषय का अध्ययन किया और वे मार्क्सवादी विद्वानों और राजनीतिज्ञों से परिचित होने लगे। उनका राजनीतिक अनुभव बढ़ा। व पूँजीवादी शोषकों की चाल समझने में समर्थ हुए। उन्होंने महसूस किया कि राजनीति के हर छात्र को मार्क्स के सिद्धांतों का ज्ञान अवश्य प्राप्त करना होगा ताकि शोषकों की शोषण-वृत्ति से अपने देश का बचाव कर सके। मार्क्सवाद का उनके राजनीतिक विचारों पर गहरा प्रभाव पड़ा। उनके बहुत सारे भाषण और लेख मार्क्सवादी विचारों से प्रभावित थे। यद्यपि उन्होंने मॉरीशस लौटकर अपने आरम्भिक काल की राजनीति में मार्क्स के सिद्धांतों का प्रयोग किया तथापि वे पूर्णतया मार्क्सवादी नहीं बने। उन पर सर्वाधिक प्रभाव ब्रिटिश समाजवाद का ही पड़ा। ब्रिटिश समाजवाद को वे मॉरीशस के लिए सर्वाधिक उपयुक्त और प्रभावकारी मानते थे

लन्दन के "यूनिवर्सिटी कॉलेज" में प्रायः राजनीति विषयक वाद-विवादों का आयोजन होता रहता था जिनमें एशिया, अफ्रीका एव संसार के अन्य भागों के छात्र सम्मिलित होते रहते थे। रामगुलाम को उन सभी से सम्पर्क स्थापित करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उन दिनों हैरोल्ड लास्की (Harold Laski) "लन्दन स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स" (London School of Economics) में राजनीति विज्ञान के प्रोफेसर थे। वे तत्कालीन इंग्लैण्ड के सर्वश्रेष्ठ राजनीति के दार्शनिक समझे जाते थे। उनके भाषणों का छात्रों पर अचूक प्रभाव प्रड़ता था। रामगुलाम उनकी पुस्तकों, पाम्पलेटों, निबन्धों और भाषणों से अत्यन्त प्रभावित हुए। लास्की महोदय ने मार्क्सवादी, समाजवादी एवं प्रजातांत्रिक विचारों का समन्वय करके फेबियन समाजवाद (Fabian Socialis.n) का मार्ग दर्शाया था। उनकी रचनाओं, विशेषकर "अ ग्रामर ऑफ पॉलिटिक्स" (A grammar of Politics) में वैयक्तिक अधिकार स्वतंत्रता, सबों के हित एवं कल्याण, मानव समाज के सर्वांगीण विकास सम्बन्धी बातें स्पष्ट रूप में चर्चित हैं। रामगुलाम को लगा कि उन जैसे विदेशी विद्यार्थियों के लिए लास्की साहब नये युग के एक पैगम्बर हैं, जो लोकतन्त्र, समाज-

वाद, मानवाधिकार तथा सबके सुखों की रक्षा करने के लिए पैदा हुए हैं। वे उनके चरणों में बैठकर राजनीति रूपी पीयूष का पान करते रहे और सन् 1935 में मॉरीशस लौटने पर अपने देशवासियों के हित के लिए उन्हीं लास्की महोदय के सिद्धांतों एवं विचारों से काम लेते रहे।

फेबियन सोसाइटी का प्रभाव

फेबियन सोसाइटी के प्रभाव में आने पर शिवसागर का सम्पर्क प्रसिद्ध विद्वानों से होने लगा जिनमें एच. जी. वेल्स (H. G. Wells), जे. बी. शॉ (J. B Shaw), बैत्रिस वेब (Beatrice Webb), श्रीमती आनी बेसेन्ट (Annie Bessant) अथवा जी डी. एच कोल (G. D. H. Cole) आदि उल्लेखनीय हैं। सर्वश्री सीडने और बेयत्रिस वेब, जॉर्ज वेअनार शॉ, हैरोल्ड लास्की आदि विद्वान् फेबियन सोसाइटी का नेतृत्व कर रहे थे। ये विद्वान् एक ऐसे समाजवाद में आस्था रखते थे जो आकस्मिक क्रांति से न जन्मा हो। वे समाज में धीरे-धीरे, नरमी से सुधार लाने के पक्ष में थे। एक मूलभूत फेबियन सिद्धान्त था—"उचित समय" अर्थात् परिवर्तन व सुधार लाने के लिए उचित समय की प्रतीक्षा की जाय। फेबियन समाज के नियम व सिद्धान्त रामगुलाम की प्रकृति के अनुकूल थे। अतः वे फेबियन विचारधारा में डूब गये।

एक योग्य नेता में जो गुण होने चाहिए, वे शिवसागर में साफ नजर आने लगे। धैर्य, सहनशीलता, दूरदर्शिता, धीरे-धीरे शक्ति संचय करके सतर्कतापूर्वक सामाजिक सुधार करने तथा राजनीतिक सफलता के लिए गहरा ज्ञान प्राप्त करने का गुण उन्होंने फेबियन समाजवादियों से ही सीखा था। यही कारण है कि जब देश की सत्ता उनके हाथ में आई तब बड़ी सावधानी से अदल-बदल के कार्य किये। जब भी उन्हें महत्त्वपूर्ण कदम उठाने पड़े, समस्याओं को सुलझाना पड़ा, कभी भी जल्दबाजी नहीं की। वे हमेशा उचित समय की प्रतीक्षा करके ही कदम उठाते रहे।

"नेशनल पेंशन स्कीम" को लागू करने में उन्हें कई वर्षों तक उचित समय की प्रतीक्षा करनी पड़ी। मॉरीशस में विश्वविद्यालय-निर्माण सम्बन्धी विचार का चाहे विशेषज्ञों ने विरोध किया, अन्त में रामगुलाम की ही जीत हुई। अपने विचारों को बगैर किसी पर थोपे ही उन्हें शनै-शनै अपने उद्देश्यों को पूरा करने में सफलता मिल ही जाती। उन्होंने राजनीति में दूर तक देखने का अभ्यास किया। कठिनाइयों के आने पर वे अधीर नहीं हुए, धैर्यपूर्वक समस्याओं का सामना किया। वे दिमाग पर जोर देकर कोई-न-कोई रास्ता निकाल ही लेते थे। कभी-कभार उनकी इस चौकसी की कड़ी आलोचना की जाती थी। अनैकों बार सही कदम उठाने में असमर्थ

भी हो जाते थे, क्योंकि वे कोई देवता नहीं थे,। मनुष्य की अपूर्णता उनमें भी थी। इसलिए कुछेक गलतियाँ हो ही जाया करती थीं। प्रशंसनीय बात तो यह थी कि वे कभी अपने धैर्य, शांति, सहनशीलता आदि से वन्चित नहीं हुए। ये महान् गुण उनके व्यक्तित्व में विकसित होकर उनके चरित्र के अग बन गये थे।

इतने ज्ञान, विभिन्न विद्वानों के संसर्ग से प्राप्त अनुभव, राजनीतिक कुशलता के कारण रामगुलाम मॉरीशस में उत्पन्न सबसे बड़े राजनीतिज्ञ समझे गये। अफ्रीकी देशों तथा अन्य भू-भागों के इने-गिने राजनीतिज्ञ ही उनकी योग्यता वाले थे। अपनी दूरदर्शिता के कारण ही उन्हें लम्बे अर्से तक सत्ता में रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वे अपनी जगह पर जहाज के एक ऐसे अनुभवी कप्तान की भाँति अटल रहे जो हर तूफान का सामना विचलित हुए बिना दृढ़तापूर्वक करता रहा हो। अपने को संकट में डालकर भी जो अपनी जिम्मेदारी को न भूलता हो और अन्ततः वह अपने यात्रियों को कुशलतापूर्वक बन्दरगाह पर ला देता हो।

शिवसागर में व्याप्त धैर्य वास्तव में वह गुण है जो उन्होंने फेबियन सोसाइटी से उपलब्ध किया था। यह गुण एक हिन्दू चरित्र का गुण है। महाराजा मनु धर्म के दस लक्षणों को गिनाते समय प्रथम स्थान "धैर्य" को ही देते हैं। उन्होंने जिस डॉक्टरी पेशे को चुना, उसमें भी धैर्य का होना नितान्त आवश्यक था जिससे वे अपने मरीजों को ठीक से सुन सकें। वे अपने विरोधियों को भी शांतिपूर्ण तरीके से सुनते और वार्तालाप द्वारा ही निर्णय की खोज करते। इससे सभी को संतोष मिलता। उन्होंने अपने जीवन से हिंसा मुठभेड़, तानाशाही आदि को दूर रखा। प्रजातन्त्र के कट्टर समर्थक थे, मानवाधिकारों पर विश्वास करने वाले शांतिदूत थे। वे उग्रवादियों को भी अपने हिंसारहित तरीके से अपना लेते थे।

जिन दिनों शिवसागर लन्दन में अध्ययन कर रहे थे, इंग्लैण्ड अपने इतिहास के एक रोमांचकारी कालचक्र से गुजर रहा था। मजदूरों की मदद और रक्षा के लिए मजदूर दल उभड़ कर प्रख्यात बनता जा रहा था। यह दल प्रजातन्त्र और समाजवाद का प्रचार करता था, असहाय एवं निर्धन वर्गों के दिलों में आशा का संचार करता था। जनता में मजदूर दल के प्रति विश्वास पैदा हो चुका था। अतः ब्रिटिश मजदूर दल "लिबेरल पार्टी" का स्थान ले चुका था। अब वह कनसर्वेटिव पार्टी से होड़ ले रहा था।

सन् 1924 में, जिन दिनों रामगुलाम "इण्डियन नेशनल कांग्रेस" के अध्यक्ष थे, ब्रिटिश मजदूर दल सत्ता में आ चुका था और रामसे मैकडोनल प्रधान मंत्री बन गये थे। उस काल की छाप शिवसागर के हृदय में आजीवन अमिट बनी रही। वे "हाइड पार्क" में मजदूर के प्रतिनिधियों तथा अन्य सुवक्ताओं के भाषण सुनने

जाया करते थे। जॉर्ज लैंडस्बरी, मैक्स्तन, ग्रीनहूड, हैंडरसन और टोमा जैसे मजदूर दल के सुप्रसिद्ध नेताओं के प्रभाव में आ गये। उस कालविशेष में उन्हें राजनीतिक जीवन का बड़ा गहरा अनुभव प्राप्त हुआ। उन्होंने अपनी आँखों से ब्रिटिश मजदूर दल को प्रगति के शिखर तक पहुँचते देखा। एक जागरूक छात्र की हैसियत से वे इन सभी बातों पर बड़ा ध्यान दिया करते थे। वे राजनीतिक वादविवादों में इतनी रुचि लेते कि दोनों पक्षों के वक्ताओं को निष्पक्ष होकर सुनते। एक बार जब "वेस्ट मिंस्टर हॉल" (West Minster Hall) में जार्ज बेअनार शॉ और जी. के. चेस्टरसन के बीच वाद-विवाद होने जा रहा था, उनकी जेब में केवल एक ही पेनी शेष थी। वे उस आखरी पेनी को खर्च करके वाद-विवाद सुनने उपस्थित हो गये। समाजवाद विषयक उस वादविवाद में जब जॉर्ज बेअनार शॉ ने एक अच्छा तर्क प्रस्तुत किया तब रामगुलाम ने जोरों से तालियाँ बजाईं और जब चेस्टरसन (Chesterson) ने उस तर्क को अपने ज्ञान की तलवार से काटा, तब भी उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक करतल ध्वनि की। इससे सिद्ध होता है कि वे वादविवाद के दोनों पक्षों से बराबर मजा लेते थे और बिना किसी का पक्ष लिये सच्चाई को ग्रहण करते थे। अतः हम देखते हैं कि गांधी, नेहरू, मेनन, जोमो केनियाता, केनेत काउण्डा, सेंघोर आदि अनेक राष्ट्रवादी नेताओं के समान ही उन्होंने इंग्लैण्ड से प्रजातन्त्र की भावना पाई। प्रजातांत्रिक अधिकारों के लिए संघर्ष करने के तौर-तरीके सीखे। समाजवाद के कट्टर समर्थक बने। वे ब्रिटिश मजदूर दल के नेताओं, विशेषकर रामसे मैकडोनल्ड (Ramsay Macdonald) जॉर्ज लैण्ड्सबरी (George Landsbury), मैक्सटन (Makton), ग्रीनहूड सीनियर (Greenhood Senior) और हैनडरसन तोमास (Handerson Thomas) को सुनकर भविष्य के सपने सजाने लग गये। मॉरीशस लौटने पर जब उन्हें यहाँ के मजदूर दल का नेता बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ तब उनका सपना साकार हुआ। उन्होंने भारत और ब्रिटेन के अनेक राजनीतिज्ञों के ज्ञान और अनुभव का समन्वय करके एक मॉरीशसीय शैली के माध्यम से प्रजातन्त्र और समाजवाद का प्रचार किया। अन्ततोगत्वा मॉरीशस को स्वतन्त्रता दिलाकर अनेकानेक समाजवादियों द्वारा प्राप्त ज्ञान को सार्थक किया।

शिवसागर को सन् 1921 से 1935 तक, पूरे चौदह वर्ष लन्दन में बिताने पड़े। वे तो डॉक्टरी सीखने गये थे, किन्तु अपनी पढ़ाई के साथ ही साहित्य और राजनीति में रम गये। उनके साथी-मॉरीशस के भावी महाराज्यपाल, सर अब्दुल रमन ओसमान ने ठीक ही कहा—"मैं अपने कानून की पढ़ाई में मग्न था, जबकि शिवसागर डॉक्टरी की आधी पढ़ाई करके अंग्रेजी साहित्य और बाद में समाजवाद

की लहर में प्रवाहित हो गये ।" वे आगे कहते हैं—"उन्होंने कुछ समाजवादी संस्थाओं में प्रवेश किया जो श्रमिक वर्ग की स्थिति में परिवर्तन लाने की आवाज बुलन्द कर रहे थे। उन लोगों की ओर से साहित्य और राजनीति में उदारता-पूर्वक कुछ सहायता पाकर शिवसागर गरीबी के कारण अपने डगमगाते पग को सम्भाल सके ।

रामलाल की कहानी

रामगुलाम को डाक्टरी के लिए इंग्लैण्ड में चौदह साल क्यों रहना पड़ा और उनको गरीबी का सामना क्यों करना पड़ा । यह एक बड़ी करुण कहानी है। उनका भाई रामलाल रामचर्ण सन् 1926 के पश्चात् उनको खर्च के लिए रुपये भेजने में पूर्णतया असमर्थ हो गया । इसलिए कुछ काल के लिए उनका अध्ययन रुक गया ।

यह पहले लिखा जा चुका है कि सन् 1901 में अपनी मॉरीशसीय यात्रा के दौरान गांधी जी ने भारतीय आप्रवासियों को अपने बच्चों की शिक्षा में ध्यान देने तथा राजनीति में सक्रिय भाग लेने की सलाह दी थी। उन्हें गांधी जी का संदेश याद था और उस सलाह को आचरण में परिणत करने लग गये थे। रामलाल सन्तुष्ट था कि उसके भाई लन्दन में डॉक्टरी सीख रहे थे और उच्च शिक्षा से विभूषित होकर ही स्वदेश लौटेंगे। इधर उसने महसूस किया कि अपने देशवाशियों के हित के लिए उसे राजनीति में भाग लेना चाहिए। वह अवसर आ भी गया। सन् 1926 में मॉरीशस की विधान परिषद् का आम चुनाव था । मणिलाल डॉक्टर के चले जाने के बाद यहाँ के हिन्दुओं को एक नेता की कमी खटक रही थी जिसके नेतृत्व में वे अपने हितों की रक्षा कर सके। अत: 1926 के चुनाव में हिन्दुओं की ओर से दो उम्मेदवार खड़े हुए—फलाक में राजकुमार गजाधर और ग्राँपोर में धनपत लाला उस समय तक रामलाल रामचर्ण 4:0 बीघे जमीन का मालिक बन चुका था। वह अपने गाँव का मुखिया और स्थानीय समाज का प्रधान भी था। वह अतिथियों का जी-जान से स्वागत करता, खूब खिलाता-पिलाता तथा बेलरिव ग्राम में ही नहीं, पूरे जिले में अति सम्मानित व्यक्ति समझा जाता। चुनाव में खड़े उम्मेदवार, राजकुमार गजाधर का उसने खूब समर्थन किया । गजाधर का प्रतिद्वन्द्वी उस समय का प्रसिद्ध धनिक गोरा मोंतोकियो (Montochio) था जो अपने समय के कुलीनतंत्र के स्तम्भों में से एक था। उससे लोहा लेना खतरे का काम था। उन दिनों ब्रिटिश लोगों की नीति—"फूट डालो और राज करो" (Divide and Rule) का प्रयोग केवल भारत और अफ्रीका में ही नहीं, बल्कि मॉरीशस में भी खूब हो रहा था। मॉरीशस में बसे फ्रांसीसियों के हाथों में देश का सारा धन था। वे कुछ

आर्थिक सुविधाएँ देकर एक वर्ग के व्यक्तियों में फूट डालकर परस्पर विरोधी बना डालते थे और दूसरे वर्ग को अपना समर्थक बना लेते थे। इस तरह वे सदा शासक बनकर जनसाधारण का शोषण करते रहते थे। उनके हाथों से सत्ता छीनना आसान नहीं था। रामलाल ने मोंतोकियो रूपी दीवार से टकराकर अपना सर फोड़ लिया। वह कहीं का न रहा! देखते-देखते उसकी सारी सम्पत्ति भाप की तरह उड़ा दी गई। वह भूल गया था कि गोरे किसानों की तुलना मे उसकी शक्ति नगण्य थी। वे उसे एक मक्खी की तरह मसल सकते थे। रामलाल के समान ही कई दूसरे छोटे भारतीय किसानों ने भी गोरे शासकों से टकराकर गलती की। फलतः उन किसानों की जमीनें छीनकर उन्हें तबाह कर दिया गया।

शिवसागर ने पहले ही अपने अग्रज रामलाल को पत्र द्वारा सावधान कर दिया कि वह गोरों से बचकर रहे, क्योंकि मॉरीशस की शासन-प्रणाली हिन्दुओं के प्रतिकूल थी। जब तक संवैधानिक सुधार न हो तब तक गोरे शक्तिशाली बने रहेंगे। अतः मॉरीशस की राजनीति में दखल देने की जल्दबाजी करना, बुद्धिमता नहीं। धैर्य से काम लेना होगा। रामलाल ने अपने भाई की चेतावनी पर कम ध्यान दिया।

उन दिनों केवल उन्हीं लोगों को मतदान करने का अधिकार था, जिनकी वार्षिक आमदनी तीन हजार रुपये की होती थी अथवा मासिक वेतन कम से कम पचास रुपये का था। उस समय मजदूर लोग महीने में केवल पाँच रुपये कमाते थे। इससे स्पष्ट हो जाता है देश की आबादी का अधिकांश भाग अर्थात मजदूर और श्रमिक मतदान देने के हकदार नहीं थे। पूरी जनसंख्या के दो प्रतिशत से भी कम लोगों को ही मतदाता बनने का अधिकार प्राप्त था। इससे साफ जाहिर हो जाता है कि तत्कालीन निर्वाचन-प्रणाली गोरों को ही अनुचित लाभ पहुँचाने वाली थी। वह जन-साधारण को राजनीति में भाग लेने से रोकती थी। इसीलिए शिव-सागर ने अपने बड़े भाई को राजनीति में अन्धाधुन्ध दखल देने से मना किया था।

शिवसागर की चेतावनी के बावजूद भी रामलाल ने पियेर मोंतोकियो (Pierre Montochio) के "खिलाफ खड़े उम्मेदवार, राजकुमार गजाधर को पूरा समर्थन करने का निर्णय कर लिया। चुनाव से एक दिन पहले उसने अपने यहाँ एक विशाल पन्डाल खड़ा किया और एक बड़ी कथा का आयोजन किया जिसमें मुख्य रूप से फलाक निर्वाचन-क्षेत्र के मतदाताओं तथा मतार्थी घटकों (agents) को आमंत्रित किया। रामलाल उन मतदाताओं के नेता जैसे थे। कथा के उपरान्त सहभोज हुआ। इतने आमंत्रितों को भोजन परसा गया कि आसपास की दुकानों में आटे का मिलना कठिन हो गया।

कथा के पश्चात् आप्रवासी मतदाताओं ने चुनाव के दिन अपनी एकता का परिचय दिया। मोंतोकियो चुनाव हार गया। वह आग बबूला हुआ और रामलाल को बरबाद करने की ठान ली। इधर भारतीय आप्रवासियों ने गजाधर और धनपत लाला की जीत की खुशी को प्रदर्शित करने के लिए एक जुलूस निकाला। हिन्दू प्रसन्नता से पागल हो रहे थे। चुनाव में उत्तीर्ण दोनों प्रतिनिधियों का पुष्पमालाओं द्वारा स्वागत किया गया। उनकी ओर से भाषण हुए। रंगीन जाति के नेता डॉ० लोराँ और रोहन ने भी उन समारोहों में भाग लिया।

मोंतोकियो की क्रोधाग्नि जल रही थी। उसे शीघ्र ही बदला लेने का मौका मिल गया। रामलाल ने अपने कारोबार को चलाने के लिए पचास हजार रुपये का कर्ज ले रखा था। "सिरकोंस्तांस (Circonstance) नामक स्थान में उसकी चार सौ पचास एकड़ की पायी जाने वाली ईख की खेती की तुलना में पचास हजार रुपये एक छोटी रकम थे। फिर भी उस राशि से उऋण होने के लिए वह रुपया जुटा न सका। नये प्रतिनिधि राजकुमार गजाधर ने भी उसकी कोई सहायता नहीं की। जिस गजाधर के कारण वह अपनी बरबादी को जन्म दे चुका था, उसने उसे बड़ा निराशा किया। छोटे भारतीय किसान गजाधर और लाला को अपना नेता तो बना चुके थे, किन्तु दोनों में से किसी ने भी राजनीति नहीं सीखी थी और न ही वे मॉरीशसवासियों की सेवा के लिए अपना जीवन न्यौछावर करने को तैयार थे।

चूँकि रामलाल अपना कर्ज चुका न सका, लेनदारों ने उसकी सम्पत्ति पर कब्जा करके उसे नीलाम कर दिया। उसके बुरे दिनों में किसी भी बैंक ने ऋण देकर उसकी सहायता नहीं की। उस समय सभी बैंक गोरों के अधिकार में थे। भला कौन गोरा मोंताकियो के विरोधी रामलाल की मदद के लिए हाथ बढ़ाता? अन्यों की सहायता तथा हित-मित्रों और रिश्तेदारों का जी खोलकर सत्कार करने वाले रामलाल का कारोबार तबाह हो गया। यह तबाही यहीं नहीं रुकी। उसको पूरी तरह बरबाद कर देने की योजना बनाई गई। शीघ्र ही वह भारी डकैती का शिकार हुआ। उसके घर में यह डाका तब डाला गया जब वह सुबह के चार बजे उठकर शौच के लिये आँगन में स्थित शौचालय गया हुआ था। उसकी पत्नी, पुत्र अनिरुद्ध और दो पुत्रियाँ मकान में सो रही थीं। चोरों ने परिवार के सोये हुए सदस्यों को क्लोरोफार्म सुँघाकर बेहोश कर दिया। फिर पैसे, गहने और सारे कागजात उड़ा ले गये। सारे रुपयों, गहनों और रसीदों की चोरी हो जाने से वह बिल्कुल गरीब बन गया। लोगों को जो कर्ज दिये थे तथा उससे सम्बन्धित सरकारी कागजात सब नष्ट कर दिये गये। हताश होकर वह बेलरिव छोड़ क्यूर्पीप चला गया। फिर उसे कोरोमाँदेल जाना पड़ा और अन्त में जीविकोपार्जन के लिए बोबासें गया जहाँ धनपत लाला ने खेती-बारी करने के लिए एक टुकडी जमीन दी। सन् 1933 में बोबासें में

ही अपने भाई, नकछेदी हीरामन के यहाँ उसका देहांत हो गया। उसकी मृत्यु के थोड़े ही दिन बाद उसका बेटा अनिरुद्ध भी चल बसा। उसकी एक पुत्री देवजानी शकुन्तला का विवाह ठाकुरप्रसाद राम से तथा दूसरी पुत्री, बिन्दुमती का रामनारायण भगीरथी से हुआ।

रामलाल की विपत्ति और मृत्यु की खबर पाकर शिवसागर तिलमिला गये। लन्दन में वह एक-एक पैसे के मुँहताज हो गये। उनका अध्ययन बीच में ही रुक गया। समाचार पत्रों पर लेख लिखकर कुछ राशि पा लेते थे। कभी मूंगफली खाकर रह जाते और कभी वह भी मयस्सर न होने से निराहार ही रह जाते। वे बड़े स्वाभिमानी थे। फिनिसबरी (Finisbury) में जाकोब नामक महिला के मकान में रहते थे किन्तु उन्होंने उसे भी अपने दुर्भाग्य की कहानी नहीं बतायी। वे प्रातः अपनी पुस्तकें लेकर विश्वविद्यालय जाने के बहाने निकल पड़ते और किसी सार्वजनिक उद्यान में समय बिताकर लौट आते। किसी न किसी तरह श्रीमती जाकोब को सारा हाल मालूम हो गया। उसे बहुत दुःख हुआ और सहानुभूति से उसका दिल भर गया। वह शिवसागर की देखभाल अपने परिवार के सदस्यों की भाँति ही करने लगी। उस महिला के सेवा-सत्कार से रामगुलाम के दिल में अंग्रेजों के प्रति बड़ा आदर पैदा हुआ। उस समय के बहुत-से अंग्रेज परिवार विदेशियों के प्रति आत्मीयता दिखाते थे। श्रीमती जाकोब ने युवक रामगुलाम का दिल जीत लिया जिसके कारण रामगुलाम ने उस महिला के प्रति बड़ी श्रद्धा, स्नेह और कृतज्ञता व्यक्त की है।

उस मॉरीशसीय छात्र को अध्ययन-हेतु कैसी भीषण समस्याओं का सामना करना पड़ा होगा इसकी कल्पना सरलता से की जा सकती है। पढ़ाई में रुकावटें आ गईं जिसके कारण उन्हें लम्बे समय तक लन्दन में रहना पड़ा। उनके दूसरे सौतेले भाई नकछेदी हीरामन ने अपनी क्षमता के अनुसार कुछ रकम भेजने की कोशिश की, पर अपनी गरीबी के कारण वह उचित सहायता न कर सका।

सन् 1932 में विधान परिषद् के सदस्य श्री जी. डी. एम. आचिया (G. D. M. Achia) एक शिष्टमंडल के साथ लन्दन पहुंचे थे। सौभाग्य से उनकी रामगुलाम से मुलाकात हो गई। आर्थिक कठिनाइयों के सागर में पड़े इस छात्र की दशा देखकर माननीय आचिया को दया आ गई। उन्होंने रामगुलाम के अध्ययन को पूरा करने के लिए चन्दा इकट्ठा करना शुरू किया और पर्याप्त सहायता पहुँचाई। आखिर वह दिन आ ही गया, जब सभी ने खुशी से जाना कि शिवसागर ने डॉक्टरी पास कर ली। 1935 में डाक्टरी परीक्षा में उत्तीर्ण होने पर उन्हें बंगाल (भारत) में एक अच्छी नौकरी मिली, पर उन्होंने वह नौकरी इसलिए स्वीकार नहीं की, क्योंकि स्वदेश लौटकर भाभी और भतीजियों की देखभाल करनी थी। बिलायत में चौदह

वर्ष रहकर उन्होंने दुनिया खूब देखी थी। विश्व के हर कोने से आये हुए अनेकानेक महान् व्यक्तियों से उनकी मुलाकात हुई थी। उन दिनों लन्दन संसार का राजनीतिक केन्द्र था और शिवसागर को उसी केन्द्र में इतना लम्बा अर्सा बिताना पड़ा था। उन्हें वहाँ, जीवन और राजनीति के बारे में गहराई से सीखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। एक अच्छे पारखी की भाँति व्यक्तियों की परख और घटनाओं का अन्वेषण करने की योग्यता प्राप्त की थी। ज्ञान और अनुभव की इन उपलब्धियों के बावजूद भी वे नम्र, निरभिमानी और परोपकारप्रिय बने रहे। वे कभी नहीं भूले कि उनके माता-पिता बेलरिव गाँव के रहने वाले मजदूर थे। यद्यपि अब वे डॉक्टर बन गये थे तथापि बचपन में माता और भाई-भावज से प्राप्त सद्व्यवहार भूले नहीं थे, उन्हें संजोये रखा था। उनका डॉक्टरी ज्ञान देशवासियों की सेवा के लिए था। इसलिए विदेश में मिल रही अच्छी नौकरी को तिलांजलि देकर मातृभूमि मॉरीशस के दर्शनों और सेवा के लिए इंग्लैण्ड की राजधानी, लन्दन से विदा हुए।

————

चतुर्थ परिच्छेद

निर्बल के बल राम

डॉक्टर शिवसागर रामगुलाम सन् 1935 के सितम्बर मास में मॉरीशस लौटे। वे अपने भाई, हीरामन नकछेदी के घर, बोशां में ही निवास करने लगे। उनके मित्र, डॉक्टर महावीर लखीनारायण ने रोजहिल शहर में अपना चिकित्सा-कक्ष खोल रखा था और उनका चिकित्सा-कार्य फलता-फूलता जा रहा था। उन दिनों एक हिन्दू डॉक्टर को गाँवों में जीविकोपार्जन करना अत्यन्त कठिन था। शक्कर-कोठियाँ अब तक गोरे-डॉक्टरों का ही शिकार-क्षेत्र बनी हुई थीं। चूँकि अब तक मजदूरों को मजदूरी के लिए उन्हीं गोरों पर आश्रित रहना पड़ता था इसलिए वे उनके विरुद्ध कदम उठा नहीं सकते थे। गोरों के नाम से ही मजदूर काँप जाते थे। ऐसा दृश्य डॉक्टर रामगुलाम ने स्वयं कई बार देखा था। कोठियों में अश्वेत डॉक्टरों का प्रवेश निषिद्ध था। गोरे डॉक्टर गरीब और अनपढ़ मरीजों से क्रूरता-पूर्वक पेश आते थे। कोठियों में निवास करने वालों को बीमार होने पर विवशता-पूर्वक उन्हीं निष्ठुर डॉक्टरों के पास जाना पड़ता था।

डॉक्टर शिवसागर ने देखा कि अब भी देश की वही अवस्था है, जो उनके विलायत जाते समय सन् 1921 में थी। बस स्वयं वही बदल आये थे। एक सुशिक्षित, अनुभवी, ज्ञानी व्यक्ति बनकर ही इंग्लैण्ड से लौटे थे। चौदह वर्ष अंग्रेजों के बीच रहे और उन लोगों के अच्छे गुणों को अपनाकर देशवासियों की निर्भीकता-पूर्वक सेवा करने की सदीच्छा लेकर लौटे थे। मॉरीशस में सुधार कैसे लाया जाय और देश की प्रगति कैसे की जाय? इसके लिए उनके पास अनेक उपाय थे, बहुत सारे प्रगतिशील विचार थे जिनके द्वारा वे दीन-दुःखियों और जरूरतमन्दों की सेवा कर सकते थे। उन्होंने अपना पूरा जीवन देशवासियों की सेवा के लिए समर्पित कर देने का दृढ़ निश्चय किया। उन्होंने संकल्प किया कि समाजवाद का प्रचार करके जन-साधारण को अपने मौलिक अधिकारों के लिए जागरूक करेंगे। श्रमिक वर्ग के दिलों में समाये हुए गोरों के भय का उन्मूलन करके उन्हें सुख-सुविधा पाने के लिए तैयार करेंगे।

मजदूर बीमार पड़ने पर गोरे डॉक्टरों की अपेक्षा, डॉक्टर रामगुलाम के पास आना श्रेयस्कर समझते थे, क्योंकि डॉक्टर साहब उनके दुःख-दर्द को भली-भाँति समझ सकते थे। उनसे उनकी भाषा-भोजपुरी या क्रिओल में बात कर सकते थे, किन्तु डॉक्टर साहब को कोठियों में प्रवेश करने का अधिकार नहीं था। मिल-मालिकों द्वारा रखे गये गुप्तचर कोठियों में आने-जाने वालों की सूचनाएँ अपने गोरे मालिकों को दिया करते थे। कोठियों में उपस्थित मजदूरों की झोपड़ियाँ जेल की कोठरियाँ जैसे थीं। प्रकाश और वायु के अभाव के कारण फूस की बनी वे कुटियाँ गन्दी और बीमारियों का घर थीं उन गन्दे स्थानों में बसे मजदूर रोग के शिकार बनते जाते थे।

डॉक्टर रामगुलाम ने 'लोंग मॉउन्टिन' (Long Mountain), सेंपियैर (St Pierre) आदि स्थानों में अपने चिकित्सा-कक्ष खोले। उनके कुछ साहसी स्वयं सेवक थे, जो गोरों की परवाह किये बिना कोठियों के रोगियों को उनके पास ले आते। डॉक्टर साहब अपने मरीजों से बड़ी सहानुभूतिपूर्ण शब्दों में बात करते और उनसे नाममात्र की फीस लेते। कभी तो रोगियों की दरिद्रता से दयार्द्र होकर उन्हें दवा खरीदने के लिए पैसे भी दे दिया करते। वे गाँवों की झोंपड़ियों में मजदूरों को देखने जाते। उनके पलंग पर बैठकर उनका हाल पूछते, रोगियों की बाँह थामकर उन्हें चलाते। चिकित्सा के बाद उनके घर की चाय पीते और अपनी आत्मीयता से सबके दिल जीत लेते। डॉक्टरी धन्धे के कारण उन्हें बहुतों से मिलने-जुलने के अवसर मिलते रहते थे। वे रात में किसी भी वक्त चिकित्सा-हेतु रोगियों के घर पहुँच जाते। उन्होंने पाया कि रोगियों के पीड़ित होने का मूल कारण आहार की कमी तथा पोषक तत्त्वों से हीन भोजन था। वे सामाजिक रोग : अन्याय, अत्याचार, निराशा, दरिद्रता आदि के शिकार थे। उचित भोजन के बिना शरीर में खून की कमी, चर्मरोग, क्षय-रोग, पेचिश, मलेरिया अथवा शारीरिक निर्बलता के शिकार बने पड़े थे। समय से पहले बुढ़ापा आ जाता था और असमय मृत्यु हो जाती थी।

डॉ. रामगुलाम शारीरिक व्याधियों के साथ ही सामाजिक रोगों के निराकरण के लिए भी कार्यक्षेत्र में उतर आये। अपनी सौम्यता, चरित्र-शालीनता, मिलन-सारता, उदारता, संवेदनशीलता, परोपकारप्रियता आदि गुणों के कारण अपने इर्द-गिर्द बहुत से व्यक्तियों को जानने लगे। वे सभा-समाजों में उपस्थित होने लगे और साप्ताहिक जुटावों के दौरान सभी को प्रगति के लिए संगठित होने की सलाह देने लगे। समाजवाद के विचारों से लोगों के दिल-दिमाग बदलने लगे। एक अथक सिपाही की भाँति सदा सचेत और क्रियाशील रहते। घूम-घूम कर लोगों से मिलते, उनसे मधुर शब्दों में बातचीत करते, उनकी समस्याओं और भावनाओं को जानने की

चेष्टा करते तथा बिना जोर-जबरदस्ती शांतिपूर्वक विचार-विनिमय करके उनकी समस्याओं का हल तलाशते। वे अपने विचार किसी पर थोपना पसंद नहीं करते। शांतिपूर्ण बातचीत द्वारा ही समाधान की खोज करते। इस तरह एक-दूसरे से सम्पर्क स्थापित करके आत्मीयता और मित्रता के माध्यम से हजारों दिलों को जीतने लगे। उनके धैर्य, गहरी संवेदना और इन्सानियत की भावना से प्रभावित होकर उनके प्रशंसकों, समर्थकों और मित्रों की संख्या बढ़ने लगी। बहुत-से बीमार उनके पास आने लगे। उन्होंने पोर्टलुई की देफोर्ज गली में अपना प्रमुख चिकित्सा-कक्ष खोला। इसके अतिरिक्त अपनी छोटी-सी ओसटिन गाड़ी में टापू के अन्य गाँवों का दौरा करने लगे।

पोर्टलुई में उनका सम्पर्क उनके हितैषी गुलाम मुहम्मद आचिया से हुआ जो सरकारी परिषद् के मनोनीत सदस्य तथा नगरपालिका के सभासद् थे। वे भारतीय आप्रवासियों के बीच एक वरिष्ठ और अनुभवी राजनीतिज्ञ थे। डॉ रामगुलाम उन्हें राजनीतिक क्षेत्र में अपना मार्गदर्शक समझते थे। माननीय आचिया के अतिरिक्त डॉक्टर शिवसागर का सम्पर्क राजधानी पोर्टलुई में अनेकानेक व्यक्तियों से होने लगा। उनकी लोकप्रियता बढ़ गई।

आर्य समाज-आन्दोलन से प्रभावित

उन दिनों आर्यसमाज सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक आदि क्षेत्रों में बड़े प्रशंसनीय कार्य कर रहा था। इस संस्था के निःस्वार्थ प्रचारक एवं सुधारक घर-घर घूमकर नवजागरण पैदा कर रहे थे। अन्ध-परम्पराओं, अन्धविश्वासों, सामाजिक बुराइयों जात-पांत तथा ऊँच-नीच के भेद-भावों का खंडन कर रहे थे। स्त्री-शिक्षा और हिन्दू-एकता पर जोर दे रहे थे। भारत से आने वाले आर्य समाजी उपेदशकों द्वारा भारतीय स्वतंत्रता सग्राम की गतिविधियों पर प्रकाश डाला जाता था। गाँवों में बैठकाओं और हिन्दी पाठशालाओं की संख्या बढ़ती जा रही थी। आर्य समाज के विद्या-प्रचार के फलस्वरूप 1935 तक आते-आते भारतीय आप्रवासियों में सामाजिक एवं राजनीतिक चेतना के दर्शन होने लग गये थे। उसी वर्ष आर्य समाज के प्राँगण, पोर्टलुई में भारतीय आप्रवासियों के आगमन की शताब्दी बड़े समारोहपूर्वक मनाई गई। उस समारोह में सम्मिलित होने वाले विशिष्ट व्यक्तियों में मॉरीशस के प्रथम हिन्दू बैरिस्टर, रामखेलावन बुधन के साथ श्री पिल्ले, हजारीसिंह, निरंजन और भारत से आये प्रतिनिधि, स्वामिनाथन थे। उस शताब्दी-समारोह में डॉक्टर रामगुलाम ने भी भाग लिया। अपने भाषण के दौरान उन्होंने जोर देकर कहा—"हमारा कर्त्तव्य है कि हम अपनी जनता के लिए दूरदर्शिता के एक स्पष्ट सिद्धांत की घोषणा करें और समाज में प्रचलित निर्दयताओं, क्रूरताओं, के दूरीकरण के लिए दृढ़ संकल्प करें। हमें सोचना है कि यह जीवन केवल हमारे लिए नहीं है, वरन् इसे

समाज की भलाई में समर्पित करना है। जन्म लेना, सन्तान उत्पन्न करना और मर जाना जीवन का उद्देश्य नहीं हो सकता। मनुष्य वह जीव है जो ईश्वरदूत की भाँति सामाजिक हित कर सकता है।"

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट हो जाता है कि डॉक्टर रामगुलाम एक नये युग का आह्वान कर रहे थे। वे आर्य समाज के कार्यों से बड़े प्रभावित थे। रविवारिक छुट्टियों में हिन्दी पाठशालाओं के वार्षिकोत्सवों में भाग लेकर सारगर्भित भाषण देते और बैठकाओं के संचालन के लिए यथाशक्ति आर्थिक दान देते। इसके अतिरिक्त शादी-ब्याहों, कथा-वार्ताओं में उपस्थित होकर जन-सम्पर्क बनाये रखते। उनकी सहज उदारता, निश्छल प्रेम, अपार सहानुभूति, सहज मुस्कान, पैनी दृष्टि और अद्वितीय समझ का सब पर अचूक प्रभाव पड़ता। वे कभी भी क्रूरता, कठोरता से पेश नहीं आते। अपने सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों को चुम्बक की भाँति अपनी ओर आकृष्ट करने लगे। सभी उनका सच्चे हृदय से सम्मान करने लगे, उनके अनुयायी बनने लगे। शनै-शनै वे सब के बीच एक नेता के रूप में उभरने लगे।

डॉक्टर की हैसियत से शिवसागर को अमीर-गरीब, शिक्षित-अशिक्षित सभी से मिलने का अवसर मिला। उन्होंने हजारों गरीबों और अभाव-ग्रस्त व्यक्तियों की सहायता की। सब की सहायता करना, जी-जान से सेवा करना, उनका स्वभाव बन गया। जब भी सामाजिक समारोहों में भाग लेने का मौका पाते, अपने भाषणों के माध्यम से शिक्षा, स्वतंत्रता, संगठन की भावना, हिन्दू धर्म की महत्ता, जीवन-भूल्य के महत्त्व, प्रजातंत्र एवं समाजवाद की आवश्यकता पर प्रकाश डालते। इस तरह देश में धीरे-धीरे प्रजातांत्रिक भावना की जड़ मजबूत होने लगी और जनता अपने अधिकारों की रक्षा के लिए कटिबद्ध होने लगी।

1936 का चुनाव

सन् 1936 के जनवरी मास में मॉरीशस में आम चुनाव हुआ। उस निर्वाचन में डॉक्टर रामगुलाम उम्मीदवार नहीं बने। हम अन्यत्र लिख चुके हैं कि मॉरीशस का संविधान और निर्वाचन-प्रणाली के कारण भारतीय आप्रवासियों में पाये जाने वाले सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति भी चुनाव जीत सकने में समर्थ न थे। सन् 1936 में देश की पूरी आबादी चार लाख की थी। कुल जनसंख्या के साठ प्रतिशत से अधिक नागरिक हिन्दू थे। परन्तु इतनी बड़ी संख्या में होकर भी हिन्दू मतदाता दो प्रतिशत से भी कम थे। अखिल देश के 11,363 मतदाताओं में गोरों का ही वर्चस्व था। यही कारण है कि सन् 1936 के आम चुनाव में डॉक्टर रामगुलाम खड़े नहीं हुए। उन्हें चुनाव का नतीजा मालूम था। अतः चुनाव लड़ने की अपेक्षा रचनात्मक कार्य करना उन्होंने बेहतर समझा। वे फूँक-फूँक कर कदम रखते हुए आगे बढ़ने

लगे और धीरे-धीरे, धैर्यपूर्वक अपना सिक्का जमाना शुरू किया। चूंकि पूर्व के नेताओं को सहयोग न मिलने के कारण असफल हो देखा था। इसलिए उन्होंने सर्वप्रथम अपने आस-पास विश्वसनीय साथियों और सहयोगियों को इकट्ठा करना शुरू किया। वे व्यक्तियों का गम्भीरता से अध्ययन करते थे। भिन्न-भिन्न लोगों से मिलते थे और भविष्य के लिए अच्छा-खासा कार्यक्रम तैयार करने के लिए अपने लेखों, भाषणों, वार्तालापों आदि के माध्यम से लोकमत जगाने लगे ताकि सन् 1885 के संविधान में परिवर्तन और सुधार लाया जा सके। पुराने संविधान एवं तत्कालीन चुनाव प्रणाली के कारण ही डॉक्टर मोरिस कीरे 1921, 1926 और 1931 के आम चुनावों में हार चुके थे और अब 1936 के निर्वाचन में गौर-प्रभु हगनिन से परास्त होकर क्रोध के मारे तिलमिला उठे थे। उन्होंने महसूस किया कि जब तक संवैधानिक सुधार करके शासन प्रणाली की तबदली न की जाय तब तक अश्वेत जातियों में पाये जाने वाले मतदाताओं की सीमित संख्या में वृद्धि नहीं हो सकती। इस बात को डॉक्टर कीरे हार खाने के बाद जान सके थे। जबकि डॉक्टर रामगुलाम इंग्लैण्ड में थे, तभी अपने भाई, रामलाल को गौर महाप्रभुओं की शक्ति को अन्धाधुन्ध चुनौती देने से रोका था।

देश का दौरा

डॉक्टर रामगुलाम सन् 1935 से 40 तक विभिन्न अवसरों पर पूरे द्वीप का दौरा करके देश की परिस्थिति से पूर्ण परिचित हो गये। उन्हें मातृभूमि मॉरीशस के लिए जो कार्य करने थे, अति दुष्कर थे। इंग्लैण्ड जाने से पूर्व वे दासों एवं आप्रवासियों के वंशजों की जो हालत देख गये थे, विलायत से लौटने पर उनकी वही दशा देखी। आम जनता के जीवन में कोई बड़ा परिवर्तन नजर नहीं आया। आप्रवासी अब भी झोंपड़ियों में रहते थे। उन्हें सूर्योदय से पूर्व ही खेतों में काम करने चला जाना पड़ता था और सूर्यास्त पश्चात् तक काम में लगे रहते थे। उनके पास खाली समय बिलकुल न था। विवाह, समारोह, उत्सव आदि रात्रि में होते थे। उनके चेहरे पीले, शरीर क्षीण, मुखड़े पर भय और निराशा की रेखाएँ दिखाई देती थीं। अत्यधिक काम से थककर उम्र से पहले ही बूढ़े हो जाते थे। पूरा परिवार-स्त्री-पुरुष, जवान-बूढ़े, बच्चे सबको खेतों में काम करना पड़ता था। घोर परिश्रम के बावजूद भी वे ज्यादा कमा नहीं पाते थे। सन् 1940 के आसपास एक मजदूर को दिन भर की कड़ी मेहनत के बदले राशन के रूप में निकृष्ट कोटि के चावल, दाल, तेल, सूखी नमकीन, मछली के अतिरिक्त दैनिक चालीस सेंट दिये जाते थे। उनकी झोंपड़ियों में कोई खास सामान नहीं होता था। सोने के लिए चटाइयाँ थीं और बैठने के लिए पीढ़े। पकाना, खाना और सोना सब उसी अन्धेरी कोठरी में होता था, जिसमें तेल के दीये का प्रकाश भी ठीक से फैल नहीं पाता था। स्थिति असहनीय

थी। अशिक्षा के कारण वे अज्ञान और अन्धविश्वासों से ग्रस्त थे। उन्हें मजबूरी के कारण सरदी-गरमी तथा धूप-वर्षा में जी तोड़ मेहनत करनी पड़ती थी। प्यास के मारे उनके होंठ सूख जाते। जान लेवा श्रम करते-करते उनके हाथ-पैर स्थान-स्थान पर फट जाते। अनपढ़ होने के कारण काम के ठेकेदारों, सरदारों और गोरे किसानों के धोखे के शिकार बनते। कड़ी धूप में जमीन को अपने खून-पसीने से सींचकर सोना निकालते और बदले में उन्हें गोरों का अपमान और तिरस्कार ही मिलता था। स्वच्छ जल पीने के लिए आज की तरह नल न था। नाली-कुएँ से निकाला गन्दा पानी पीकर प्यास बुझाते। आहार की कमी, कठिन मेहनत, उचित देखभाल के अभाव और रोग के कोप के कारण बच्चे उचित रूप में बढ़ नहीं पाते थे, वे ठिगने ही रह जाते थे।

इस प्रकार मजदूर दुःख-दर्द से लदी जीवन की गाड़ी उस समय तक घसीटते चले जाते थे, जब तक कि उनके नाम मृत्यु के देवता का बुलावा नहीं आ पहुँचता था। डॉक्टर रामगुलाम ने उन मजदूरों की दशा देखकर "एडवांस" (Advance) पत्र के एक लेख में बताया था, "घोर निराशा के कारण मजदूर लोग अपने ग़म को भुलाने के लिए सस्ते दाम की स्थानीय शराब पीकर नशे में चूर हो जाते हैं। अपनी अभाव-वेदना से व्याकुल होकर बीबी-बच्चों पर गुस्सा उतारने लगते हैं और कभी-कभी आपस में लड-झगड़ पड़ते हैं।

भारतीय आप्रवासियों की ही तरह गुलामों की संतानः क्रिओल श्रमिकों के प्रति भी क्रूर व्यवहार किया जाता था। दास-प्रथा के दिनों में वे अफ्रीका और मेडागास्कर से पशुओं की भाँति खरीदे गये थे। मॉरीशस आकर उनका अस्तित्व खतरे में पड़ गया था। उनकी भाषा-संस्कृति पर गोरे-मालिकों द्वारा प्रहार हुआ। यूरोपीय मालिक उन्हें अपने लोक साहित्य की रक्षा के लिए स्वतन्त्रता नहीं देते थे। उनके व्यक्तित्व का तिरस्कार किया जाता था। वे मूक और भयभीत होकर अत्याचारों को सहन करते जा रहे थे। गौरों की गुलामी करके जीविका पा लेते थे। चन्द लोक कथाओं, कहावतों और "सेगा" नृत्य के अतिरिक्त उनकी पूरी संस्कृति एवं परम्पराएँ कुचल दी गईं। इसका मूल कारण यह था कि गोरे अपने को सभ्य और फ्रांस की महान् संस्कृति के अनुयायी समझते थे।

गोरे मालिकों ने हिन्दुओं को भी ईसाई बनाने का पूरा यत्न किया। किन्तु भारतीय वंश के लोग अपने साथ वह संस्कृति लेकर आये थे, जो फ्रांसीसियों की संस्कृति से हजारों साल पुरानी थी। उन्हें अपनी भाषाओं, धार्मिक ग्रन्थों, रीति-रिवाजों, प्रथा-परम्पराओं आदि पर गर्व था। भला वे राम, कृष्ण और बुद्ध की संस्कृति को कैसे छोड़ सकते थे। अतः अपनी महान् संस्कृति की रक्षा के लिए वे

रात्रि में अपनी झोंपड़ियों और बैठकाओं में सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक जुटाव किया करते थे। वे चटाइयों पर पाल्टी मारकर बैठ जाते, भजन कीर्तन, प्रार्थनाएं, रामचरितमानस का पाठ करते और अपने पंडितों के श्रीमुख से कथा-वार्ता, संस्कृत श्लोक और मंत्र सुनकर मुग्ध हो जाते।

डॉक्टर रामगुलाम के सम्मुख बहुत बड़ा काम पड़ा था। सामाजिक अन्याय, शोषण, अत्याचार और गरीबी का अन्त करना था। समाजवाद, न्याय, समता, स्वतन्त्रता और भाईचारे को मॉरीशस की धरती पर लाना था। सर्वहारा वर्ग का अपहृत अधिकार धनिकों के मजबूत हाथों से छीनकर उसे दिलाना था। देश का सारा धन गोरे उद्योगपतियों के कब्जे में था। मजदूरों की कठिन मेहनत से अर्जित उस धन का उचित बँटवारा करना था। शांतिपूर्ण तरीके एवं समझौते के माध्यम से लोकतन्त्रात्मक सरकार को स्थापित करना था। पूर्वीय भाषाओं और विभिन्न संस्कृतियों को सुरक्षा प्रदान करनी थी। स्वास्थ्य, शिक्षा और जन कल्याणकारी राज्य की व्यवस्था करनी थी। परन्तु इन सब कार्यों को पूर्ण करने के लिए सर्वप्रथम देश की सत्ता को अपने हाथों में लेना था और यह तब तक सम्भव न था, जब तक देश के पुराने संविधान का संशोधन न किया जाता, जब तक समूची जनता को अपने मन-पसन्द प्रतिनिधियों को चुनने के लिए वयस्क मताधिकार न दिया जाता। अतः डॉक्टर रामगुलाम ने सबसे पहले संवैधानिक सुधार के लिए आन्दोलन छेड़ा। उन्होंने अपनी डॉक्टरी द्वारा केवल रोगियों के शारीरिक कष्ट ही दूर नहीं किये, बल्कि श्रमिक वर्ग के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक कष्टों का निवारण करना, अपने जीवन का ध्येय बनाया। गरीबों की प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अथक परिश्रम किया। सन् 1935 से 40 तक वे चारों ओर दौरा करते रहे। वे मरीजों की नाड़ी पर हाथ रखने के साथ-साथ दुःखों से विचलित मॉरीशसवासियों के नब्ज़ पर भी हाथ रखते थे। चूँकि रामगुलाम दरिद्रावस्था में पैदा हुए थे, गरीबी में ही उनका लालन-पालन हुआ था, अपने इर्द-गिर्द गरीबी ही देखकर युवावस्था तक पहुँचे थे, अतः उन्होंने गरीबी से जूझने का निर्णय किया। संकटग्रस्त दीन-दुःखियों के आँसू पोंछने का संकल्प लिया। नागरिक अधिकार से रहित लोगों को थोड़ी सी खुशी देना उनके जीवन का उद्देश्य बन गया। वे धर्म-प्रचारकों की निष्ठा से युक्त होकर राम, कृष्ण, बुद्ध, ईसा, दयानन्द, विवेकानन्द तथा गांधी की सीख ग्रहण करके, शांति, सहिष्णुता, स्वतन्त्रता, भाईचारे और न्याय की भावना से अपने सम्पर्क में आने वाले हर दिल को जीतने लगे।

सन् 1935 में डॉक्टर रामगुलाम ने पाया कि देश का श्रमिक वर्ग निराशा में डूबे, अपने दुःखों का कारण अपनी बदनसीबी को समझ रहे थे। वे समझते थे कि उनका जन्म कष्ट सहने के लिए ही हुआ है। बहुत से हिन्दू गरीबी को भगवान की

देन और अपने पापों का फल समझ रहे थे। फलतः डॉक्टर रामगुलाम को एक अच्छे शिक्षक की भूमिका निभानी पड़ी। लोगों के दिमाग से हीन भावनाओं को निकालकर उनके दिलों में प्रगति के नये विचारों के बीज बोने पड़े। यह कार्य बड़ा था, जिसे पूरा करने के लिए प्रेम और धैर्य की आवश्यकता थी। उन्हें लोगों के दिलो-दिमाग से गुलामी की प्रवृत्ति को निकालना था। एक नई तकदीर के दर्शन कराकर आने वाली पीढ़ियों के लिए नया रास्ता दिखाना था। उन्हें गरीबों में आत्मविश्वास पैदा करके, उनको अपने पैरों पर खड़ा करना था। देशवासियों को समझाना था कि आर्थिक, राजनीतिक स्थितियों के बदल जाने पर उनकी जीवन-धारा बदल जायगी।

डॉक्टर कीरे के समर्थक

डॉक्टर रामगुलाम सबको प्रगति के पथ पर बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करने लगे। आरम्भ में वे अकेले थे। समय के साथ उनके साथी और सहयोगी बढ़ने लगे। देश में विभिन्न राजनीतिक गतिविधियाँ हो रही थीं। डॉक्टर कीरे अपने राजनीतिक आन्दोलन से मजदूरों को प्रभावित कर रहे थे। वे सन् 1936 का चुनाव हारकर क्रुद्ध तो हुए थे, पर निराश नहीं। उन्होंने एक जबर्दस्त आन्दोलन चलाने के लिए 23 फरवरी, 1936 को मजदूर दल "मॉरीशस लेबर पार्टी" की स्थापना की। मजदूर दल की स्थापना एवं डॉक्टर कीरे की कर्मठता और उत्साह के कारण मॉरीशस के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आने लगा।

डॉक्टर मोरिस कीरे का जन्म 1888 में हुआ था। उन्होंने पोर्टलुई के रॉयल कॉलेज में माध्यमिक शिक्षा पाई थी तथा लन्दन के "यूनिवर्सिटी कॉलेज" से डॉक्टरी सीखी थी। जब वे लन्दन में अध्ययन कर रहे थे। तब अपने प्राध्यापक श्री एडिस्सन (Edisson) के प्रभाव में आकर "ब्रिटिश लेबर पार्टी" के कट्टर सदस्य बन गये थे। मॉरीशस लौटने पर उन्होंने फ्रांस का पक्ष लेकर मॉरीशस टापू को फ्रांस से सम्बद्ध कराना चाहा। किन्तु उन्हें अपने आन्दोलन में सफलता नहीं मिली। अन्त में 1934 के उपचुनाव में गोरे कृषक हगनिन (Hugnin) को हराकर कौंसिल में पहुँच गये। 14 सितम्बर, 34 को जिस दिन शपथ ग्रहण की थी, उसी दिन कह दिया था कि पूँजीपतियों के हितों से उनका कोई मतलब नहीं होगा, वे एकमात्र श्रमिक वर्ग के लिए काम करेंगे। उनसे पहले किसी ने श्रमिकों के हित में रुचि नहीं ली थी। 1926 में राज्यपाल सर हरबर्ट रीड (Herbert Reed) ने ट्रेड यूनियन बिल (Trade Union Bill) पास किया था। परन्तु उस बिल के पास हो जाने पर भी उसको कार्य रूप में परिणत नहीं किया गया। डॉ० कीरे ने इस पर आवाज उठायी। उन्होंने आप्रवासियों के रक्षा-विभाग को निष्क्रिय पाया और सुझाव दिया कि उसकी जगह पर एक मजदूर विभाग होना चाहिये जो ट्रेड यूनियन, नौकरी की

सुरक्षा, बेरोजगारी की समस्या आदि पर ध्यान दे सकें। डॉ० साहब ने औपनिवेशिक सरकार पर आम जनता के हितों की उपेक्षा करने तथा अमीरों को अनुचित लाभ देने का दोष लगाया। उन्होने कौंसिल में मजदूरों का प्रतिनिधित्व करने के लिए दो व्यक्तियों की नियुक्ति की माँग की। उन्होंने श्रमिकों के लिए अच्छी तन्ख्वाह, स्वास्थ्य-सुविधा, पेंशन आदि की माँगें सामने रखीं। परन्तु उन्हें आशातीत सफलता नहीं मिली। पोर्टलुई के दो प्रतिनिधि : डॉ० एडगाअ लोराँ और राउल रिवे डॉक्टर मोरिस कीरे को हिचकते हुए सहयोग दे रहे थे। जो अन्य प्रतिनिधि थे, जिनमें राजकुमार गजाधर भी मनोनीत सदस्य के रूप में सम्मिलित थे, कुलीनतन्त्र का ही समर्थन करते थे। अत: डॉ० कीरे मजदूरों के एकमात्र योद्धा थे। उन्होंने उस शासन-प्रणाली से समझौता करने से साफ इन्कार किया, जो केवल पूँजीपतियों के अधिकारों की रक्षा करती थी। उन्होंने महसूस किया कि मजदूरों के हित के लिए भारी संघर्ष करना आवश्यक है और तभी से एक जबर्दस्त विरोध की नीति आरम्भ कर दी। औपनिवेशिक सरकार को अब तक इतने बड़े विरोध का सामना करना नहीं पड़ा था। मजदूर दल की स्थापना के पश्चात् मार्च, 1926 से अगस्त, 1937 तक डॉ० कीरे ने पडित सहदेव और बाद में ट्रेड यूनियन के जनक, एमानुएल आँक्चिल (Emmanuel Anquetil) का सहयोग प्राप्त करके समस्त टापू का दौरा किया। उन्होंने विभिन्न गाँवों में चौवन भाषण दिये। अपने भाषणों के दौरान निम्नलिखित विषयों पर प्रकाश डाला। संवैधानिक सुधार, शासन-व्यवस्था में परिवर्तन,बेरोजगारी की समस्या, स्त्रियों और बच्चों द्वारा रात्रि में लिये जाने वाले काम, बुढ़ापे की पेंशन, दुर्घटनाओं की रोक-थाम आदि।

डॉक्टर मोरिस कीरे ने सन् 1937 के अप्रेल मास में 1700 लोगों से एक अर्जी पर हस्ताक्षर करवाये। उनकी माँग थी कि घिसी-पीटी, पुरानी शासन-प्रणाली में सुधार लाया जाय। उन्होंने राज्य-सचिव (Secretary of State) से पत्र-व्यवहार करके एक ऐसे राज्यपाल की माँग की जो श्रमिक वर्ग के प्रति सच्ची सहानुभूति रख सके। उनकी दूसरी माँग थी–एक शासकीय जाँच आयोग की नियुक्ति, जिसमें मजदूरों के प्रतिनिधि हों ताकि वे मॉरीशस में श्रम-कानून और काम की शर्तों का पुनरावलोकन कर सकें। उन्होंने बताया–"इस देश में श्रम-कानून मात्र एक तमाशा है। सरकार धनिक वर्ग के विचारों के अधीन रहती है।" उन्होंने 20 अगस्त, 1937 को पोर्टलुई के शादेमार्स के मैदान में एक भारी जन-सभा बुलाई जिसमें लोग अपने को छिपाने के लिए घास-फूस की बड़ी-बड़ी टोपियाँ पहन कर शरीक हुए। श्रमिकों को अन्याय के विरुद्ध उकसाया गया। डॉक्टर कीरे के देशव्यापी आन्दोलन के प्रभाव से अगस्त मास में मजदूरों ने भारी हड़ताल की जिसके परिणाम-स्वरूप फलाक और लेस्कालिये में चार मजदूर मिल-मालिकों की गोलियों के शिकार हुए।

तदुपरान्त इस हत्याकाण्ड की जाँच के लिए एक जाँच कमीशन की नियुक्ति की गई जिसकी अध्यक्षता हूपर (Hooper) महोदय ने की। जाँच आयोग ने सिफारिश की कि भविष्य में अशांति और अव्यवस्था को रोकने के लिए एक ट्रेड यूनियन और एक श्रम-विभाग की स्थापना की जाय तथा श्रमिकों की न्यूनतम मजदूरी के लिए कानून बनाया जाय।

उपर्युक्त सिफारिशों के फलस्वरूप 1938 का श्रम-अध्यादेश पास किया गया जिससे मॉरीशस के इतिहास मे एक नये मोड़ के दर्शन हुए। जहाँ इस कानून ने लेबर दल की अधिकांश माँगों की पूर्ति करके मजदूरों को सन्तुष्ट किया, वहाँ लेबर पार्टी को भी कमजोर बना दिया। टी० ओसवैल (T. W Oswell) महोदय के निर्देशन में श्रम-विभाग की स्थापना की गई। इसके अलावा प्रत्येक जिले में भारतीय मूल के कुछ व्यक्तियों को श्रम-निरीक्षक नियुक्त किया गया। श्रम-विभाग एवं नियुक्त व्यक्तियों के सहयोग से औपनिवेशिक सरकार जनता के दिल में अपने प्रति पुनः विश्वास पैदा करने लगी। श्रम-समस्या को सुलझाने के लिए सरकार पूर्णतः श्रम-विभाग पर ही निर्भर हो गई। इसी विभाग के माध्यम से वह डॉक्टर कीरे के "मजदूर दल" की कमर तोड़ने में लग गई। उस समय तक ट्रेड यूनियन अवैध था। इसलिए डॉ० कीरे ने सन् 1937 में एक श्रमिक परोपकारिणी सभा (Societe de Bienfaisance des Travailleurs de L'ile Maurice) की स्थापना की। इस सभा को सरकारी मान्यता नहीं मिली। गोरों द्वारा संचालित बैंकों ने भी इस संगठन का बहिष्कार किया। इस सभा के निमित्त धन संग्रह करने वालों एवं इसके अभिकर्त्ताओं के विरुद्ध मुकदमा चलाया गया। फलतः यह सभा विघटित हो गई। इसके संचालन के लिए जो रुपये इकट्ठे किये गये थे, वे प्रेस खरीदने के लिए "लेबर पार्टी" को दे दिये गये। उसी प्रेस से "ले पप्ल मोरिसियें" (Le Peuple Mauricien) नामक पत्र निकाला गया जिसका सम्पादन आँकचिल द्वारा होता था। इस तरह डॉक्टर कीरे द्वारा की गई समस्त माँगों को क्रियान्वित करके सरकार ने अपनी ही लोकप्रियता का प्रसार किया।

तत्कालीन नये राज्यपाल सर बिड क्लिफोर्ड (Sir Bede Clifford) और डॉक्टर कीरे के बीच भारी संघर्ष जारी रहा। इस सघर्ष के परिणाम-स्वरूप जहाज से माल उतारने वाले मजदूरों ने सन् 1938 के दिसम्बर मास में एक बड़ी हड़ताल का। यह बताया गया कि आँकचिल ने श्रम-विभाग के नियमों का उल्लंघन किया। अतः उन्हें देश से निकाला गया, उन्हें रोड्रिग टापू के लिए निर्वासन का दण्ड मिला। सर बिड क्लिफोर्ड ने डॉ० कीरे के प्रभाव को घटाने के लिए सरकारी स्तर पर आन्दोलन शुरू किया जिसका नाम उन्होंने "जन-शिक्षा" अभियान रखा।

सन् 1939 तक आते-आते डॉक्टर कीरे थक चुके थे। उनकी लोकप्रियता घटने लगी थी। वे अपने संघर्ष को जारी न रख सके अतः सन् 1942 में मजदूर दल का नेतृत्व आँकचिल को सुपुर्द करके सक्रिय राजनीति से अलग हो गये। कुछ वर्ष बाद 1946 में सरकारी परिषद के मनोनीत सदस्य नियुक्त हुए। सन् 1947 में वे कार्यपालिका परिषद् के सदस्य बनकर संवैधानिक सुधार के प्रश्न पर अनुदान दल के सदस्यों का समर्थन करने लगे। यद्यपि डॉ० कीरे हताश होकर "अनुदार दल" के समर्थक बन गये, तथापि उनकी उपलब्धियाँ अद्वितीय थीं। उन्होंने मजदूर दल की स्थापना करके सामाजिक एवं राजनीतिक परिवर्तन लाने के लिए एक नये युग की शुरुआत की। साथ ही उन्होंने "ट्रेड यूनियन" आन्दोलन आरम्भ करके तत्कालीन शासन को सावधान किया। मजदूरों, छोटे किसानों और श्रमिकों पर मिल-मालिकों द्वारा डाले जाने वाले दबाव को खत्म किया। किन्तु डॉक्टर कीरे के नेतृत्व को दूर-दर्शितापूर्ण नहीं कहा जा सकता। उन्होंने अपने साथियों, सहयोगियों तथा उनके प्रति सहानुभूति रखने वालों को अपनी ओर आकृष्ट करके अपनी स्थिति को अधिक से अधिक मजबूत बनाने का यत्न नहीं किया। उस समय के योग्य बुद्धिजीवियों को एकत्र करके मजदूर दल की नींव को एक मजबूत धरातल पर नहीं रखा। उलटे जो लोग स्वेच्छापूर्वक उनको सहयोग देना चाहते थे, उन्होंने उन्हें ठुकरा दिया। डॉक्टर रामगुलाम के साथ भी ऐसा ही किया। सन् 1936 के अन्त में डॉक्टर रामगुलाम उस समय के दो प्रसिद्ध बैरिस्टर, श्री रामखेलावन बुधन और रामपरसाद निरंजन को लेकर डॉ० कीरे के पास पहुँचे। उन्होंने उनके आन्दोलन को सहयोग देने की इच्छा प्रकट की। किन्तु कीरे साहब ने तीनों युवकों की उपेक्षा करते हुए उनकी सहायता लेने से इन्कार किया। जिस पर भी तीनों डॉ० कीरे और आँकचिल को सहयोग देते रहे।

डॉ० मोरिस कीरे ने एक ही समय में दो बड़ी शक्तियों से टक्कर लेने की नीति अपनाकर गलती की। वे दो शक्तियाँ थीं : औपनिवेशिक सरकार तथा पूँजी-पति गोरों का शासन। उन्हें गोरों के कुलीनतन्त्र के विरुद्ध ब्रिटिश सरकार को अपने पक्ष में करना चाहिये था। किन्तु उन्होंने राज्यपाल का विरोध करके अपने ही मजदूर दल की शक्ति घटा डाली। जनता उनकी नीति समझ न सकी, इसीलिए उसने डॉक्टर कीरे का साथ छोड़ दिया। डॉक्टर साहब गलत फहमी में पड़कर घोषित कर बैठे, "जनता कितनी कृतघ्न है" (Le public se foutait de moi)। इसलिए वे सन् 1946 में मनोनीत सदस्य बनकर कुलीनतन्त्र का पक्ष लेने लगे।

पंचम परिच्छेद

एडवांस पत्र

डॉक्टर रामगुलाम देश के पूर्ववर्ती नेताओं की अच्छाइयों को अपनाते रहे और उनकी भूलों से सीखते गये। वे अपने नेतृत्वकाल में उन नेताओं द्वारा की गई भूलों से सदा बचते रहे। सन् 1940 का साल उनके लिए तीन कारणों से बड़ा महत्त्वपूर्ण था। उन्होंने 4 अक्तूबर को मित्रों की एक मंडली बनाकर एड़वांस (Advance) पत्र निकाला। 18 नवम्बर को सरकारी परिषद् के मनोनीत सदस्य नियुक्त हुए और 9 दिसम्बर को पोर्टलुई नगरपालिका के सदस्य निर्वाचित हुए। उन्होंने निश्चय किया कि देश के हित के लिए अपना सम्पूर्ण जीवन न्यौछावर कर देंगे। भविष्य ने बताया कि उनकी सारी शक्ति, उनका उपार्जित ज्ञान, विभिन्न परिस्थितियों एवं घटनाओं से प्राप्त अनुभव देश को समर्पित हो गए। जीवन की आखरी साँस तक वे उत्साह पूर्वक तथा सामर्थ्यानुकूल देश-सेवा में तल्लीन रहे।

सर्वहारा वर्ग की रक्षा के लिए "एडवांस" पत्र एक शक्तिशाली शस्त्र था। इस पत्र के निकलने से पूर्व भारतीय आप्रवासियों के बचाव के लिए डॉक्टर मणि. लाल ने "हिन्दुस्तानी" पत्र निकाला था। गजाधर ने "मॉरीशस इंडियन्स टाइम्स" (Mauritius Indians Times) तथा "मॉरीशस मित्र" आदि पत्र निकाले थे। किन्तु ये पत्र लम्बे समय तक जीवित न रह सके। उस समय के निकलने वाले अधिकांश पत्र गोरों के थे जो कुलीनतन्त्र की जड़ को मजबूत बनाने में ही लगे हुए थे। उन पत्रों के माध्यम से गोरे अपनी तथा मध्यवर्गीय रंगीन जाति के लोगों की हित-साधना किया करते थे। दूसरे शब्दों में, ये पत्र हिन्दू-विरोधी थे जिनमें खुल्लम-खुल्ला हिन्दुओं के विरोध में लेख छपते थे। डॉक्टर कीरे का एकमात्र पत्र–"ल पप्ल मोरिसिये" (Le Peuple Mauricien) मजदूर दल का अंग होने के कारण श्रमिकों का पक्ष लेता था। किन्तु दुर्भाग्यवश डॉक्टर कीरे भारतीय मूल के बुद्धिजीवियों को अविश्वास की दृष्टि से देखते थे और सदा उनसे शंकित रहते थे।

भारतीय आप्रवासियों के उत्थान के लिए इच्छुक युवास्नातक जयनारायण राय "ले जेंजियें आ लिल मोरिस" (मॉरीशस में भारतीय) के प्रसिद्ध रचयिता तथा

"राजीकाल" (Radical) पत्र के नियमित लेखक, अनत विजाधर, प्रसिद्ध व्यापारी रामचन्दर रामा और अन्य मित्रों की पूरी एक टोली ने "एडवांस" पत्र को चलाने में डॉक्टर रामगुलाम की सहायता की। डॉक्टर साहब गाँव-गाँव घूमकर इस पत्र के सचालन के लिए चन्दा उग्रहण करते तथा हिस्सेदारों की खोज करते। "एडवांस" पत्र के निकलते ही विरोधियों का पूरा दल उस पर टूट पड़ा। डॉक्टर रामगुलाम को वामपंथियों और दक्षिणपंथियों, दोनों की ही आलोचनाओं का सामना करना पड़ा। किन्तु उनके साथ एक योग्य लेखक मंडल था। शीघ्र ही विरोधियों को तर्कपूर्ण लेखों द्वारा शान्त कर दिया गया। डॉक्टर रामगुलाम ने एक बड़ी खोजपूर्ण लेखमाला प्रस्तुत की। सामान्य जनता और भारतीय मूल के लोगों में उनके लेखों का बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा। इस लेखमाला से वे लोकप्रिय होते गये। सभा को उनकी योग्यता एवं दूरदर्शिता का परिचय मिला। कहने की आवश्यकता नहीं कि उन लेखों में वे श्रमिकों तथा भारतीय मूल के लोगों का पक्ष लेकर शोषकों से उनकी रक्षा करते थे। डॉक्टर साहब भारतीय मजदूरों को सचेत करते थे कि गोरों के हाथों की कठपुतली बनकर उनके सामने भिक्षा की प्रार्थना न करें, उनके पैरों पड़कर उनसे दया की भीख न माँगें, अपने अधिकारों के लिए सजग हों। वे अपने लेखों के माध्यम से हिन्दू-मुसलमानों को राजनीतिक मुक्ति दिलाने का प्रयास करते थे। उनके लेखों से अनुदार दल के पक्षधर चिढ़ गये। राउल रिवेट अपनी लोह-लेखनी से डॉक्टर रामगुलाम पर वार करने लगे। डॉक्टर साहब ने रिवेट महोदय के प्रत्युत्तर में एक लेखमाला प्रस्तुत की।

उन्होंने भारतीय आप्रवासियों के हक में ठीक उसी तरह लड़ने का निर्णय किया जिस प्रकार एक शताब्दी पूर्व रेमी ओलिये ने रंगीन जाति के लोगों के लिए संघर्ष किया था। डॉक्टर साहब भारतीय मूल के लोगों को विश्वास दिलाना चाहते थे कि वे एक ऐसे राजनीतिक युग में जी रहे थे कि उन्हें अपने देश के मामलों में दखल देने का पूरा अधिकार था, उन्हें अपने मौलिक अधिकारों की रक्षा के लिए आवाज बुलन्द करने का पूरा हक था।

लेखनी के धनी

राउल रिवेट अपने "ले मोरिसिये (Le Mauricien) पत्र के द्वारा भारतीयता का विरोध करता था। मॉरीशसीय संस्कृति की आड़ में आप्रवासियों की महान् भारतीय संस्कृति को रौंद रहा था और उन्हें फेंच-संस्कृति में मिला लेने का प्रयत्न करता था।

डॉक्टर रामगुलाम ने रिवेट और उसकी टोली को आप्रवासियों का राजनीतिक गुरु मानने से साफ इनकार किया। उन्होंने अपने लेखों के माध्यम से भारतीयों

के सांस्कृतिक व्यक्तित्व की रक्षा की। विभिन्न विचारधाराओं को जनता के सामने रखते हुए सत्ता को मुट्ठी-भर गोरों के हाथ से मुक्त करना चाहा। इस काम में उन्हें उन भारतीय मूल के लोगों की सहायता मिली जो तत्कालीन समाज में मध्य-वर्गीय प्राणी के रूप में प्रतिष्ठित होने लगे थे। यह बुद्धिजीवियों और व्यापारियों का वर्ग था। इस वर्ग का विकास तब हुआ था, जब सन् 1926 में धनपत लाला और राजकुमार गजाधर को आम चुनावों में सहायता पहुँचाई गई थी। इस वर्ग के छोटे किसान राजनीतिक सत्ता में सम्मिलित होने की जोरदार माँग कर रहे थे। पोर्टलुई में इस वर्ग को मुसलमान व्यापारियों का सहयोग मिल रहा था।

"एडवांस" पत्र पर डॉक्टर रामगुलाम के छपे लेखों के कुछ अंश निम्न प्रकार हैं :—Give and bake (इस हाथ दे उस हाथ ले) शीर्षक के अन्तर्गत वे बताते हैं कि देश में बुनियादी एकता कैसे आ सकती है।

"याद रहे कि केवल देने और लेने (Give and take) की नीति एवं अनुशासन और सहकारिता के जरिये हम उस बुनियादी एकता को पा सकते हैं, जिसके लिए हम सब इतनी मेहनत से प्रयत्न करते चले आ रहे हैं।" (8. 12. 1940) Policy of begging (भीख माँगने की नीति) शीर्षक से लिखते हुए भारतीयों को सावधान करते हैं·—

"हमें भारतीय समुदाय के लिए उन लोगों से भीख माँगने की नीति छोड़ देनी चाहिए, जो हमारी राजनीतिक उन्नति रोकने पर तुले हुए हैं।" "14. 12. 40" सन् 1940 में पोर्टलुई नगरपालिका के चुनाव के बाद डॉक्टर रामगुलाम और राउलरिवेट में वादविवाद छिड़ गया। चुनाव में दो दल खड़े हुए थे। लोराँ, फुक्रो तथा रिवेट एक दल के मुखिया थे, और दूसरे दल के मुखिया श्री आचिया थे। आचिया दल के विरुद्ध सुनियोजित लड़ाई लड़ी गई। फलतः डॉक्टर रामगुलाम के अलावा आचिया दल के सभी उम्मेदवार चुनाव हार गये। राउल रिवेट को यह पसन्द न था कि भारतीय मूल के लोग राजनीति में दखल दें। उक्त चुनाव में उसका षड्यन्त्र सफल हुआ। 20 दिसम्बर, 1940 को डॉक्टर रामगुलाम ने अपने एक लम्बे लेख में लिखा —"जो था, वह सदा रहेगा। चीता अपने धब्बे बदल नहीं सकता। इस उपनिवेश में तो केवल भारतीय ही सीधे-सादे हैं, जिन्हें आसानी से ठगा जा सकता है। वे परछाई को असली रूप समझ लेते हैं और इस बात पर विश्वास कर लेते हैं कि समय के साथ उनके विरोधियों की मानसिक वृत्ति में परिवर्तन होगा........एक शताब्दी तक जी-तोड़ मेहनत करने और संकट झेलने के बाद भी बहुसंख्या में पाये जाने वाले भारतीय मजदूरों ने अब तक दुनिया का एक अच्छा प्रभात नहीं देखा है। उन्हें अपने हित से सम्बन्धित आवश्यक मामलों में बोलने का अधिकार नहीं है।"

21 जनवरी, सन् 1942 में "द इण्डियन पिपुल" (The Indian People) लेख के अन्तर्गत रिवेट के सामने डॉक्टर रामगुलाम ने निम्नलिखित विचार प्रस्तुत किये– "भारतीय लोग अशान्त एवं अधीर हैं, क्योंकि वे इस उपनिवेश के राजनीतिक मामलों में एक बेहतर प्रबन्ध देखने के इच्छुक हैं, । वे एक ऐसी राजनीतिक परिस्थिति के दर्शन करना चाहते हैं, जिसमें उनके अस्तित्व को महत्वहीन न समझा जाय । हमने भारतीय समुदाय के विचारों को संगृहीत रूप में सबके सामने रखने का प्रयत्न किया था । यदि हमारे राजनीतिक विरोधी उन विचारधाराओं को पसन्द नहीं करते तो दोषी हम नहीं हैं, बल्कि वे लोग हैं, जो समझते हैं कि यह दुनिया एक सीप है और इसमें पाई जाने वाली सभी वस्तुएं उन्हीं लोगों की हैं, यहाँ पर मांगने का अधिकार केवल उनका है........। हमें विदित है कि हमारी अति उचित माँगों एवं अभिलाषाओं की सिद्धि में बाधा डालने के लिए 'ले मारिसियें" (Le Mauricien) कुछ भी कर सकता है । लेकिन हमारे आदर्शों का विरोध करके वे हमें अपने कर्तव्य-पथ से विचिलित नहीं कर सकते और न हीं हमें अपनी उचित माँगों को ठुकरा देने के लिए बाध्य कर सकते हैं ।"

डॉक्टर साहब 24 जनवरी, 1942 को "एडवांस" पर "गाइडेंस" (Guidance) शीर्षक के अन्तर्गत लिखते हुए रिवेट महोदय को निम्न प्रकार सावधान करते हैं :—"ये वे तरीकें हैं जिन्हें श्री रिवेट ने हम हिन्दू-मुसलमानों को अलग-अलग करने के लिए अपनाया है । हम उन्हें केवल इतनी चेतावनी दे सकते हैं कि वे भविष्य में अधिक सावधान हो जायें तथा इस देश में हिन्दू-मुस्लिम सवाल को न उठायें । हम हिन्दू हैं अथवा मुसलमान, यह प्रश्न हमारे दैनिक जीवन में कभी उठता ही नहीं और अगर कभी-कभी किसी तीसरी पार्टी द्वारा उठाया भी जाता है तो हम इस प्रकार के धर्मोन्माद को मॉरीशस के विकास के लिए घातक समझते हैं ।"

इसी लेख में डॉक्टर साहब आगे लिखते हैं —

"इस बात को मानने से इनकार नहीं किया जा सकता कि यहाँ के भारतीय अपने पितृदेश "भारत" से प्रेरणा एवं मार्गदर्शन पाने की आशा करते हैं । यदि हमने इस देश "मॉरीशस" को अपनी जन्मभूमि मान लिया है तो इसका मतलब यह नहीं कि कटु आलोचनाओं और झूठे आरोपों से बचने के भय से हम अपनी संस्कृति और परम्परा को ठुकरा डालें ।"

डॉक्टर रामगुलाम "थम्ब मार्क टु" "अंगूठा छाप द्वितीय" उपनाम से लिखते थे । 19 दिसम्बर, 1940 को वे अपने लेख–"वी स्टैंड फॉर आवर राइट्स" (We Stand for our rights) के अन्तर्गत लिखते हैं:—

"इसमें कोई शक नहीं कि जब भी हम साहसपूर्वक इस टापू के शासन प्रबन्ध में समानाधिकार की माँग करते हैं तब रिवेट साहब की टोली के कुछेक दूरदर्शी तथा सहृदय सदस्यों को छोड़कर उनके बाकी अनुयायी चिल्लाने लगाते हैं। हमें यह देखकर खुशी होती है कि दिन-प्रतिदिन उनकी संख्या बढ़ती जाती है। वे हम पर पृथकवादिता तथा अन्य पापों का दोष लगाते हैं। हम यह बात नहीं समझ पाते कि हमारी उचित माँगों को वे अपने विशेषाधिकारों पर आक्रमण कैसे समझते हैं? वे सदा से इस देश में एक बेहतर जीवन बिताने के आदी रहे हैं। अपने अधिकारों की माँग करके जनता के अन्य वर्गों को डुबाने का हमारा कतई इरादा नहीं। हम तो इस देश के शासन-प्रबन्ध में केवल अपने उचित अधिकारों की ही माँग करते हैं। जब तक हमें जीवन के हर क्षेत्र में अपना अधिकार नहीं मिल जाता तब तक राष्ट्रीयता की बात करना सम्भव नहीं। मॉरीशसीय राष्ट्र के निर्माण की बात कहना, प्रदर्शन-मात्र होगा। दबाव की नीति इस देश के विकास और वृद्धि के तार को तोड़ डालेगी। यह निश्चित है कि जो लड़ाई आज लड़ी जा रही है, वह इसलिए नहीं कि समस्याएँ ज्यों की त्यों बनी रह जायें, बल्कि एक वर्ग का दूसरे वर्ग पर जो शोषण है, वह समाप्त किया जाय, हमारे अधिकारों के मार्ग में जो लोग बाधक बन रहे हैं, वे इस बात को भली-भाँति समझ जायें।

22 जनवरी, 1942 में "इन दी वर्ल्ड ऑफ मिस्टर रिवेट" (In the World of Mr. Rivet) लेख के अन्तर्गत डॉक्टर रामगुलाम जोरदार शब्दों में लिखते हैं—" इस देश के शासन में हमारे लोगों को भाग लेने की जो स्वाभाविक चाह है, उसकी पूर्ति करनी ही चाहिए। मिस्टर रिवेट और उनके साथी जो भी हथकंडे अपनायें, वे हमें अपने लक्ष्य तक पहुँचने से रोक नहीं सकते।

24 जनवरी, 41 को "इन दी वर्ल्ड ऑफ रिवट" लेखमाला के अन्तर्गत डॉक्टर साहब लिखते हैं– "पहले के अपने एक लेख में हमने कहा था कि, "विभाजन करके राज्य करने एवं हथकंडे अपनाने के चिर आदी रिवेट साहब एक बार पुनः उसी परम्परागत चालाकी पर उतर आये, ताकि हर तरीके से हमें नीचे गिरा सकें। उन्होंने निश्चय रूप से ज्यादा देर तक इन्तजार नहीं किया। एक स्थानीय मामले में भारत के प्रश्न को उभारना उन्हें उचित लगा। ऐसा उन्होंने इस विचार से किया कि आम जनता को और सम्भवत: सरकार को भी बता सकें कि हम भारतीय राष्ट्रीयता के समर्थक हैं और सत्ता द्वारा हम को थोड़ी शंका की दृष्टि से देखा जाना चाहिए। इस राष्ट्र के प्रति हमारी ईमानदारी को भी गलत ढंग से प्रस्तुत किया जा रहा है।"

हम उतने ही भारतीय हैं जितने कि यहाँ के फ्रेंच वंशज अपने को फ्रेंच समझते हैं। ऐसा होना स्वाभाविक ही है, लेकिन हमने इस देश को अपने रहने

का स्थान बना लिया है। अपने को आरोपों से बचाने के लिए हम अपनी संस्कृति और परम्परा को त्याग नहीं सकते।

मॉरीशस में बसे हुए भारतीय लोग इस प्रकार के सभी फरेबों (छल) को बस घृणा की दृष्टि से देख सकते हैं। इस प्रकार का आरोप पलट कर उन्हीं व्यक्तियों के ऊपर जा सकता है, जो उसे सामने रखने का दुःसाहस करते हैं।

परन्तु बात बस यही नहीं है, हम बता चुके हैं कि विभाजन करके शासन करने के हथकंडों का प्रयोग खूब हो रहा है। अब भारतीयों की स्थिति में सुधार आने से पहले पूरी सावधानी और तर्क पर ध्यान दिया जा रहा है, क्योंकि उनकी सुधरी हुई हालत रिवेट साहब के लिए खतरनाक सिद्ध हो सकती है। व बेशक अपने पुराने लेखों से कुछ लेकर उसे उल्टा करके प्रस्तुत करने की कोशिश करेंगे।

डॉक्टर रामगुलाम ने अनुभव किया कि सार्वजनिक मंच पर खड़े होकर अपने को नेता घोषित करने वाले बहुत दिखाई देते हैं। किन्तु जब तक दिल में जनता की सेवा की अग्नि न जलती हो तब तक ऐसे नेताओं का नेतृत्व किसी का कोई भला नहीं कर सकता। वे 28 फरवरी सन् 1950 को अपने "सुपरमैन" (Superman) लेख में लिखते हैं

"आज इस देश को उन लोगों की जरूरत है, जो जनता की सेवा कर सकते हैं, न कि ऐसे लोग जो सार्वजनिक मंचों से लोगों पर अपनी नेतागिरी का रोब जमाये। जो अपने को असाधारण मनुष्य (Superman) समझते हैं, वे जनता की कभी भी भलाई नहीं कर सकते।"

डॉक्टर साहब अपने एक लेख में जनता के प्रतिनिधियों को सावधान करते हुए लिखते हैं—"विधान परिषद् के सदस्यों को उन पूँजीपतियों से हमेशा सावधान रहना चाहिए जो जनता के प्रतिनिधियों को खरीदने तथा उनमें फूट डालकर विभाजित करने में हर मुमकिन कोशिश करते हैं ताकि प्रगति का पहिया रुक जाय।"

डॉक्टर रामगुलाम चाहते थे कि देश में एक स्वस्थ समाज का निर्माण हो। यह तभी सम्भव हो सकता था, जब प्रगति के क्षेत्र में पिछड़े दीन-हीन व्यक्तियों की दयनीय दशा में सुधार हो। इसलिए "अ गुड सोसाइटी" (A good society) शीर्षक के अन्तर्गत वे कहते हैं—"एक अच्छे समाज का निर्माण तभी सम्भव है जब उसे नीचे (गरीबों) से आरम्भ किया जाय। कोई भी सदस्य अपनी जिम्मेदारी से नहीं बच सकता। नागरिक चेतना और शिक्षा देहाती स्तर पर पहुँचायी जाय।"

डॉक्टर साहब प्रगति के शत्रुओं के प्रति खेद प्रकट करते हैं जो गलत रवैये को अपना कर श्रमिकों को आगे बढ़ने से रोकते हैं। 25 दिसम्बर, 1953 को "पाथ

ग्राफ प्रोग्रेस" (Path of Progress) लेख के अन्तर्गत वे लिखते हैं—"प्रगति के शत्रुग्रों ने श्रमिकों को हमेशा से अपने पशु-धन की तरह समझा है जिन्हें वे अपने काम में किसी भी तरह लगा सकते हैं। प्रगति की राह सीधी है और दुनिया की कोई भी ताकत इस मार्ग में दीवार बनकर खड़ी नहीं हो सकती।"

"एडवांस" पत्र पर डॉक्टर रामगुलाम ने सैंकड़ों लेख लिखकर एक वीर योद्धा का परिचय दिया। उनके हृदय में देश, जाति, धर्म, संस्कृति के प्रति प्रेम था। वे चाहते थे कि उन्नति का द्वार सबके लिए, बिना भेद-भाव से खोला जाय। सभी नागरिकों के मौलिक अधिकारों की रक्षा की जाय। सबको प्रजातन्त्र और समाजवाद के सिद्धान्तों के अनुसार समानाधिकार प्राप्त हो तथा शासन में भाग लेने का समान अवसर दिया जाय। पिछड़े वर्गों को प्रगति-पथ पर बढ़ने से रोका न जाय। देश के नेता वास्तविक नेता, बनकर निःस्वार्थ भाव से अपने कर्तव्यों का पालन करें। भारतीयों को तुच्छ न समझा जाय। देश के आर्थिक विकास में उनके योगदान को नकारा न जाय। सबको शिक्षा-स्वास्थ्य की सुविधा दी जाय प्रत्येक को अपने धर्म, भाषा, संस्कृति को अपनाने की स्वतन्त्रता दी जाय। शोषण, दबाव और घृणा की नीति को खत्म करके भाईचारे का विस्तार किया जाय। मॉरीशस को सबके सहयोग से सम्पन्न राष्ट्र बनाया जाय। इस कार्य में श्रमिक वर्ग के श्रम का सम्मान किया जाय। उनके उचित भरण-पोषण के लिए, उनकी कठिन मेहनत के बदले उचित वेतन दिया जाय। हिन्दू-मुसलमानों में फूट न डाली जाय।

डॉक्टर साहब ने अपने लेखों के माध्यम से एक नये युग का आह्वान किया। भारतीय मूल के लोगों में आत्म सम्मान, आत्मविश्वास और अपनी महान् संस्कृति के प्रति प्रेम की भावना पैदा की। आप्रवासी अपनी हीन भावना को त्यागने लगे। अपने मौलिक अधिकारों की प्राप्ति के लिए डॉक्टर रामगुलाम के नेतृत्व को स्वीकारने लगे। मिल मालिकों और गोरे किसानों को अपने माँ-बाप मानने से इनकार करने लगे। पूरी एक शताब्दी से गौरांग प्रभु भारतीय आप्रवासियों के माँ-बाप बने हुए थे। अब रामगुलाम की शकल में उन्हें अपने असली त्राता नजर आने लगे। उनका ध्यान राजनीति और शिक्षा की ओर लगा। डॉक्टर रामगुलाम ने अपने भाषणों और लेखों द्वारा ऐसी दवा पिलाई कि आत्म-हीनता का असाध्य रोग नौ दो ग्यारह हो गया। वे कमर कसकर राजनीतिक क्षेत्र में खड़े होने के लिए तैयार हो गये।

सचमुच, डॉक्टर रामगुलाम ने अपनी कलम रूपी तलवार से गरीब देशवासियों की रक्षा प्राण पण से की। आप्रवासियों के शत्रु उस लोह-लेखनी के सामने झुकते गये। उन्हें एक नये युग के आगमन की सूचना मिल गई। अनुदार दल के पक्षधर सचेत होने लगे।

कौंसिल के मनोनीत सदस्य

18 नवम्बर सन् 1940 को डॉक्टर रामगुलाम सरकारी परिषद के मनोनीत सदस्य नियुक्त हुए। उनकी इस नियुक्ति के पीछे अखबारों पर लिखे गये उनके लेखों का प्रभाव अवश्य रहा होगा। स्मरण रहे कि सन् 1909 के जाँच आयोग ने सरकारी परिषद् में बहुसंख्यक आप्रवासियों के प्रतिनिधित्व के लिए भारतीय मूल के प्रतिनिधियों की माँग की थी। बाद में डॉक्टर कीरे ने कौंसिल में श्रमिकों का प्रतिनिधित्व किया अपने लेखों और भाषणों के जरिये डॉक्टर रामगुलाम शासन-प्रणाली में सुधार लाने तथा वयस्क मताधिकार देने पर जोर देते रहे थे। डॉ० रामगुलाम की माँग और चाह औपनिवेशिक सचिव को जरूर न्याय संगत लगी होगी। इसके अतिरिक्त माननीय गुलाम मुहम्मद आचिया सरकारी परिषद् के मनोनीत सदस्य थे, जो डॉक्टर रामगुलाम के बड़े निकट थे। लन्दन में पढ़ाई के समय रामगुलाम की आर्थिक कठिनाई को दूर करने के लिए उन्होंने सहायता भी दी थी। परन्तु मनोनीत सदस्य के रूप में डॉक्टर रामगुलाम की नियुक्ति का सबसे बड़ा कारण था श्री बरनचौवे की सिफारिश। श्री बरनचौवे सहकारी विभाग के एक उच्च कर्मचारी थे।

उस समय तक के अधिकतर मनोनीत सदस्यों का झुकाव सरकार एवं गोरों के कुलीन तन्त्र के समर्थन की ओर ही थी। अत: जब डॉक्टर रामगुलाम कौंसिल के मनोनीत सदस्य बने तब बहुत से लोगों ने यही सोचा कि वे जनता की समस्याओं पर ध्यान देने के बजाय अन्य मनोनीत सदस्यों की तरह सरकार का ही समर्थन करेंगे। डॉक्टर साहब के कुछ राजनीतिक विरोधी उनसे जलते भी थे। इस नियुक्ति से उन्हें ईर्ष्या हुई। इसलिए जनता की दृष्टि में डॉक्टर साहब को कलंकित करना चाहते थे। वे कहने लगे कि ब्रिटिश कार्यकर्त्ताओं से रामगुलाम का निकट का सम्बन्ध है। उन सभी ने अन्दर-ही-अन्दर षड़यन्त्र रचना शुरू किया। किन्तु डॉक्टर रामगुलाम द्वारा कौंसिल में दिये गये भाषणों पर एक दृष्टि डालने से पता चलेगा कि विरोधियों के आक्षेप कितने निराधार थे। डॉक्टर साहब एकमात्र सदस्य थे जो सरकार और कुलीनतन्त्र के विरुद्ध में खड़े थे।

डॉक्टर रामगुलाम स्वभाव से मितभाषी थे। वे उतनी ही बातें करते थे, जितनी आवश्यक समझते थे। अपनी प्रशंसा करना, व्यर्थ की झूठी प्रतिज्ञाएँ करना, जनता को झूठा आश्वासन देना, उन्हें कतई पसन्द न था। वे बड़े सम्भलकर बोलते थे। वे इस बात से पूर्ण अवगत थे कि गलत विचार खतरनाक होते हैं जिनका विस्फोट होने से तबाही हो जाती है। अन्य नेताओं की तरह गाल बजाने की अपेक्षा करके दिखाना श्रेयस्कर समझते थे। कौंसिल के सदस्य बन जाने पर उनका उत्तर-

दायित्व बढ़ गया था। डॉक्टर कीरे सक्रिय राजनीति से हट चुके थे। श्रमिकों के पक्ष-लेवा एकमात्र डॉक्टर रामगुलाम ही रह गये थे। बैरिस्टर रामखेलावन बुधन गाँव-गाँव घूमकर जनता की समस्याओं और अभिलाषाओं को जानने में डॉक्टर साहब की सहायता तो करते थे, किन्तु कौंसिल में पीड़ित जनता के पक्ष में बोलने वाले केवल डॉक्टर रामगुलाम ही थे। उनके सामने बहुत बड़ा काम पड़ा था। उन्हें श्रमिकों को अपने पैरों पर खड़ा करना था। उन्हें एक ऐसे समाज का निर्माण करना था, जिसमें लाभ कड़ी मेहनत करने वालों को मिल सके। सामाजिक न्याय, स्वतंत्रता और विकास की नींव पर खड़ा किये जाने वाला समाज परिश्रमपूर्वक होना था उसे। उनकी माँग थी कि परिश्रमपूर्वक अध्ययन करके, अच्छे प्रमाण-पत्र प्राप्त करने वालों को अच्छी नौकरियाँ मिलनी चाहिए। मालिकों के अन्याय-अत्याचार से दबे हुए मूक मजदूरों को स्वतन्त्र व्यक्तियों की तरह अपने विचारों को व्यक्त करने का अधिकार देना चाहिए। नागरिकों को आपस में मिलने, अपनी समस्याओं पर विचार-विनिमय करके हल ढूँढने का अवसर देना चाहिए।

डॉक्टर रामगुलाम ने विलायत में चौदह वर्ष अध्ययन करके अनेक समस्याओं का हल ढूँढ निकालने की योग्यता प्राप्त की थी। उन्हें पता था कि मॉरीशसीय समाज में किस तरीके से बेहतर परिवर्तन लाया जा सकता है। उन्होंने पाया कि कार्ल मार्क्स और यूरोप के साम्यवादियों से ग्रहण किये हुए विचार एवं तौर-तरीके मॉरीशस की समस्याओं को दूर करने के लिए पूर्णतः लागू नहीं किये जा सकते। सही विधि को अपनाने से पहले वे बार-बार गम्भीरता से सोच-विचार करते थे।

मनोनीत सदस्य के रूप में कौंसिल में पहुँचकर डॉक्टर रामगुलाम ने महत्व-पूर्ण अनुभव प्राप्त किये। अपने देशवासियों की सेवा में उन्हें वे अनुभव बड़े काम आये सरकारी विभागों एव संस्थाओं की गतिविधियों में भाग लेते रहने के अवसर मिले। भविष्य में जब वे मजदूर दल के नेता बने और उन पर सरकार का उत्तर-दायित्व आया तब जिम्मेदारी को भली-भाँति सम्भालने में उन्हें प्राप्त अनुभवों से बड़ी सहायता मिली। वे अपने साथियों को सलाह देने एवं उनका मार्गदर्शन करने में पूर्ण समर्थ बने। अतः कौंसिल में उनकी नियुक्ति पूँजीपतियों के शोषण के समर्थन के लिए नहीं थी, जैसा कि उनके विरोधी बताते थे, बल्कि शोषकों के लिए वह नियुक्ति एक कांटा सिद्ध हुई।

सन् 1940 में मॉरीशस की धारा परिषद् एक क्लब की तरह थी जिसके अध्यक्ष राज्यपाल हुआ करते थे। उस परिषद् का कार्य मॉरीशस-स्थित फ्राँसीसी गोरे कृषकों के हितों पर ध्यान देने और श्रमिक वर्ग को चूसकर पूँजीपतियों की सम्पत्ति

में अभिवृद्धि करने तक ही सीमित था। उस धारा परिषद् में दीन-हीन मजदूरों का पक्ष कौन लेता। जब डॉक्टर रामगुलाम ने 19 नवम्बर 1940 को कौंसिल में प्रवेश किया, तब तत्कालीन राज्यपाल बिड क्लिफॉर्ड (Bede Clifford) ने मनोनीत सदस्य के रूप में उनका स्वागत करते हुए कहा............मुझे विश्वास है कि डॉ० रामगुलाम सामाजिक विषयों पर बहस करने में हमारे सहायक होंगे।"

जब डॉक्टर साहब ने अपना समाजवादी रूप दिखाया तब अनुदार दल के पक्षधरों को निराशा हुई। वे जन-साधारण की रक्षा में जी-जान से जुट गये पूँजी-पति गोरों को डॉक्टर रामगुलाम के विचार और कार्य कतई पसन्द न आये। उनके विरुद्ध प्रतिक्रियाएँ होने लगीं। धारा परिषद् तो अनुदार दल का ही शिकार-क्षेत्र था। उस समय परिषद् की बैठक में निम्नलिखित सदस्य बैठते थे :—पोर्ट लुई जिले से डॉक्टर एडगार लोराँ और राउल रिवेट, पाम्प्लेमूस जिले से एस. फुकरो, रिव्येर जु राम्पार जिले से टी. मालाक, फ्लाक से पी. मोंतोकियो, ग्रॉपोर से ए, राफ्रे. प्लैन विल्येम्स से पी. हगनीन, सावान से आर. हें, ब्लैक रिवर से पी. राफ्रे और मोका जिले से जे. लेक्लेजियो। उपर्युक्त निर्वाचित सदस्यों के अतिरिक्त निम्नलिखित व्यक्ति मनोनीत सदस्य थे :—एच. जी. रोबिनसन, जी, एम. डी. आचिया, जी. ई. बोडके, ए. जेल, ए. एम. ओसमान, पी. काँतें, ई. एफ. वार्ड, ए. ई. देशाजाल और डॉक्टर एस. रामगुलाम।

उपर्युक्त सदस्यों में आचिया और डॉक्टर रामगुलाम ही दो ऐसे सदस्य थे जो मजदूरों और पददलितों के हितों के बारे में कौंसिल में प्रस्ताव पेश करते थे। 14 फरवरी सन् 1941 को संसद में दिये गये अपने प्रथम भाषण में डॉक्टर साहब ने श्रमिकों के पक्ष में कहा—"मैं सोचता हूँ कि इस देश के लोग सिनेमा और सार्वजनिक मनोरंजन के कारण अपनी नौकरी से अनुपस्थित नहीं होते, बल्कि कुपोषण और रोगों के शिकार होने की वजह से अपना नियमित काम नहीं कर पाते। इस कुपोषण और अस्वस्थता का मूल कारण है उनका अल्प वेतन और उनकी रोग फैलाने वाली संकुचित कोठरी।

शक्कर-कोठियों के मालिक कभी भी अपने श्रमिकों को उनके कठिन श्रम के बदले पर्याप्त मजदूरी देने को तैयार न थे। दीन-हीन मजदूरों को अपनी इच्छाओं का दमन करके निराशा की दुनिया में जीना पड़ता था। डॉक्टर रामगुलाम को गरीबों की दयनीय दशा देखकर बड़ा दुख होता था। भला कौंसिल के सदस्य हो कर वे चुप कैसे रह सकते थे। कौंसिल के अन्य सदस्य यह नहीं चाहते थे कि कोई मजदूर, मालिक के सामने अपना दुखड़ा रोए। डॉ० साहब उन सदस्यों से सहमत

नहीं थे कि श्रमिकों को अपने मालिकों के हित के लिए मशीन की भाँति काम में लगा रहना चाहिए। 9 दिसम्बर, सन् 1941 को उन्होंने कौंसिल में बलपूर्वक कहा--"एक श्रमिक का अपनी रक्षा करने का एकमात्र उपाय है हड़ताल का अधिकार। यही वह शक्ति है जिसके द्वारा वह सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न अपने मालिक को समझा सकता है।"

डॉ० साहब ने श्रमिकों को बताया कि शोषकों से अपनी रक्षा करना उनका जन्मसिद्ध अधिकार है। इसके लिए उन्होंने उनके हाथों में हड़ताल रूपी शस्त्र थमा दिया। अनुदार-पंथियों को डॉ० रामगुलाम का असली रूप दिखाई पड़ने लगा। विदित हो गया कि डॉ० साहब मामूली मिट्टी के नहीं बने हैं। उनको उनके संकल्प से बदलना सम्भव न था। 16 जून 1942 को कौंसिल की बैठक में डॉ० जी ने अपनी आवाज बुलंद करते हुए कहा—"यह अति खेद का विषय है कि सरकार शक्कर-कोठियों में मजदूरों को काम करना अनिवार्य बता रही है। मिल-मालिकों की समृद्धि के लिए ये लोग खून-पसीना एक करके मेहनत करते रहे। शक्कर-कोठियों के मालिकों ने इन्हीं के बल पर विपुल सम्पत्ति एवं सुख-सुविधाएँ प्राप्त की हैं। ये गरीब मजदूर अति कम वेतन पाकर भी काम करते रहे। सरकार अनेक अन्य कारणों से बड़ी-बड़ी रकम खर्च कर रही है। फिर मेरी समझ में यह नहीं आता कि वह ऐसी व्यवस्था क्यों नहीं करती कि इन श्रमिकों को स्वस्थ रखा जाय तथा इनका जीवन सुगम बनाकर इन्हें थोड़ी-सी खुशी दी जाय। ... मेरा मतलब है वे सुविधाएँ उपलब्ध होनी ही चाहिए, जैसे बुढ़ापे की पेंशन, रोगियों को भत्ता आदि। एक सभ्य समाज में श्रमिकों को ये सुविधाएँ मिलनी ही चाहिए।"

धनिक वर्ग के बच्चों की पढ़ाई सुव्यवस्थित थी। उन्हें स्कूलों में स्वास्थ्य सुविधाएँ प्राप्त थीं। उन बच्चों के स्वास्थ्य और शिक्षा पर पूरा ध्यान दिया जाता था। मजदूरों के बच्चों को वे सुविधाएँ प्राप्त नहीं हो पाती थीं। 27 मई 1941 को डॉ० रामगुलाम ने कौंसिल की बैठक में भाषण देते हुए कहा—"मैं समझता हूँ कि गवर्नर महोदय द्वारा नियुक्त किये गये डॉक्टरों को समय-समय पर स्कूल के बच्चों का स्वास्थ्य-परीक्षण करना चाहिए ताकि वे डॉक्टर बालकों के शारीरिक और मानसिक विकास के सम्बन्ध में शिक्षा विभाग के निर्देशक को उचित सलाह दे सकें। साथ-साथ वे समय-समय पर स्वास्थ्य सम्बन्धी रिपोर्ट भी तैयार कर सकेंगे और समस्याओं का हल भी बता सकेंगे। ऐसा करने से जहाँ बच्चों का शैक्षिक विकास होगा, वहाँ शारीरिक उन्नति भी होगी। मेरी दृष्टि में प्राइमरी स्कूलों में बच्चों की जो दयनीय स्थिति है, उसका मुख्य कारण स्वास्थ्य और पुष्टिकर भोजन का अभाव हैं। उनके माँ-बाप उन्हें अच्छा भोजन नहीं दे सकते। मैं सोचता हूँ कि

डॉक्टरों को केवल स्कूलों का दौरा नहीं करना चाहिए, वरन् अध्यापकों और माँ-बाप को बच्चों के स्वास्थ्य-सम्बन्धी सलाह भी आवश्यकतानुसार देनी चाहिए इस तरह बच्चों को मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य दोनों की प्राप्ति होगी ।"

अपूर्व त्याग और घोर परिश्रम के फलस्वरूप बहुत से भारतीय आप्रवासी छोटे किसान बन गये थे । वे सादा जीवन व्यतीत करते थे और बड़े मितव्ययी थे । चीनी कोठियों से अलग गाँवों में रहने लग गये थे । उन्होंने अपने लिये घर बना लिये थे । तथा दो-चार बीघा जमीन खरीद कर गन्ने की खेती करते लगे थे । किन्तु गोरे कृषक जिनका सरकार पर पूरा नियन्त्रण था, हिन्दू किसानों की आर्थिक प्रगति देखकर चिढ़ते थे । अतः सरकार की सहायता से उन्होंने उठते हुए आप्रवासियों को दबाना चाहा । कौंसिल में प्रस्ताव आया कि चीनी भरने के बोरों और उसकी ढुलाई के खर्च में मिल-मालिकों को वृद्धि करने का अधिकार दिया जाय । जब सरकार ने 28 जुलाई 1942 में विधेयक को पारित करना चाहा तब डॉक्टर रामगुलाम ने कहा—"यदि सरकार इस विधेयक को पारित कर दे तो अनुचित होगा, क्योंकि इससे मिल मालिकों को छोटे किसानों का शक्कर ढोने के लिए उनसे अधिक दाम माँगने का अवसर मिलेगा । गन्ने उपजाने में छोटे किसानों को नाना प्रकार के खर्च करने पड़ते हैं । चीनी कोठियों के मजदूरों की अपेक्षा, वे अपने श्रमिकों को मजदूरी देते हैं । मेरे विचार में शक्कर के बोरों के लिए मिल-मालिकों को ही सारा खर्च करना चाहिए ।"

इसी प्रकार जब पूँजीपति अपनी सम्पत्ति की वृद्धि में मजदूरों के योगदान और कठिन मेहनत के महत्व को उपेक्षादृष्टि से देखते थे, तब 16 जून, 1942 की बैठक में डॉटर साहब ने अपने भाषण के दौरान कहा—" मुझे पूँजीपतियों पर विश्वास नहीं है । वे अपने को उदार समझते हैं, किन्तु मैं उन्हें श्रमिकों के शोषक के अलावा और कुछ नहीं मानता ।"

सरकार और उसके गोरे सलाहकारों की दृष्टि में भारतीय मूल की बहुसंख्यक जनता की भाषा-संस्कृति का कोई महत्व न था क्योंकि भारतीय भाषाएँ मजदूरों और श्रमिकों द्वारा बोली जाती थीं । भला शासकों और शोषितों की भाषाओं को सम- दृष्टि से कैसे देखा जाता । इसलिए यह कहा जाता था कि भारतीय आप्रवासियों की भाषाओं के अस्तित्व की रक्षा के लिए किसी प्रकार के अधिकार की माँग नहीं करनी चाहिए । इसलिए स्कूलों में इन भाषाओं की पढ़ाई उचित रूप में नहीं होती थी । 27 मई 1942 को डॉक्टर रामगुलाम ने संसद में कहा मुझे इस बात की खुशी होगी अगर सरकार प्राथमिक स्कूलों में पढ़ाई जाने वाली भारतीय भाषाओं की नींव को मजबूत धरातल पर रखे........मुझे यह उचित नहीं लगता कि

हम भारतीय वंशज अपने बच्चों को अपनी भाषा बोलने में असमर्थ पावें। "सात दिसम्बर को डॉक्टर साहब ने पुनः कहा—"मेरे समुदाय के लोग इच्छा करते हैं कि उनकी भाषाएँ, जैसे हिन्दी ऊर्दू और तामिल उनके बच्चों को स्कूलों में पढ़ाई जायें........इसलिए मैं बलपूर्वक कहूँगा कि सरकार इन तीन भाषाओं की विधिवत् पढ़ाई की व्यवस्था करे।"

उन दिनों मॉरीशस की प्राथमिक पाठशालाओं और रॉयल कॉलिजों में अभारतीय विद्यार्थियों को उनके धर्म एवं संस्कृति की शिक्षा देने की अच्छी व्यवस्था थीं जबकि भारतीय मूल के बच्चों को उनके धर्म एवं संस्कृति की शिक्षा से वंचित रखा जाता था। स्पष्ट है कि तत्कालीन शिक्षा-प्रणाली न्यायसंगत न थी। डॉक्टर साहब ने इस अन्याय के विरुद्ध 22 फरवरी, 1942 को आवाज उठाते हुए कहा— "शिक्षण-संस्थाओं का संचालन करने वाली धार्मिक संस्थाओं, रॉयल कॉलिजों तथा टापू के अन्य स्कूलों में धार्मिक शिक्षा की ओर निर्देश किया गया है। अध्यक्ष महोदय, मैं इस विषय को आगे बढ़ाना नहीं चाहता, किन्तु यह शिक्षा-प्रणाली मेरी जाति के लोगों को संतुष्ट नहीं कर सकती, क्योंकि उनके बच्चों को उनके धर्म की शिक्षा की सुविधा नहीं दी जा रही है, जैसे कि दूसरी जाति के बच्चों के लिए, धार्मिक शिक्षा की व्यवस्था की गई है। धार्मिक संस्थाओं द्वारा चलाये जाने वाले विद्यालय हमारे बच्चों को भी अपने धर्म की शिक्षा देने की सुविधाजनक स्थिति में हैं।" इसी विषय पर बोलते हुए डॉक्टर साहब ने आगे कहा "अभारतीय धार्मिक संस्थाओं को एक प्रकार का अनुदान मिल रहा है जिसके फलस्वरूप ईसाई पादरी प्रति सप्ताह या प्रतिदिन आधे घण्टे के लिए स्कूलों में ईसाई मत की शिक्षा देते हैं। भारतीय मूल के छात्र-छात्राओं को अपने धर्म की शिक्षा पाने की सुविधा प्राप्त नहीं है। कहने का तात्पर्य है कि हमको समदृष्टि से नहीं देखा गया है।"

रॉयल कॉलिज में भारतीय मूल के बच्चों का प्रवेश अनुपात की दृष्टि से नहीं मिलता था। छात्रों के प्रवेश के बारे में पक्षपातपूर्ण रवैया अपनाया जाता था। डॉक्टर रामगुलाम ने 7 दिसम्बर, 1943 को कौंसिल की बैठक में इस गलत रवैये के बारे में कहा—"शिक्षा-निर्देशक को इस बात पर ध्यान देना होगा कि प्राथमिक पाठशाला से निकलने वाले प्रत्येक समुदाय के बच्चों को अनुपात की दृष्टि से रॉयल कॉलिज में प्रवेश मिले। जहाँ तक मुझे पता है, एक समुदाय विशेष के बच्चों को अनुपात से अधिक सख्या में प्रवेश मिलता है। आज मुझे किसी व्यक्ति से कुछ आँकड़े मिले हैं। यदि ये आँकड़े गलत हों तो शिक्षा-निर्देशक मुझे कहें। आजकल रॉयल कॉलिज में भारतीय मूल के कुछ ही विद्यार्थी हैं, जबकि प्रायमिक विद्यालयों में इस समुदाय के बीस हजार से अधिक बच्चे पाये जाते हैं।

मजदूरों से आशा की जाती थी कि वे अपने जीवन के अंतिम समय तक गोरे कृषकों के खेतों में काम करें। गोर-प्रभु और सरकार दोनों ने कभी यह नहीं सोचा था कि कई दशाब्दियों के घोर परिश्रम के पश्चात् जान लेवा काम से टूटे मजदूरों को उनकी त्याग-भरी सेवाओं के लिए एक छोटी पेंशन देनी चाहिए। बुढ़ापे में दवा और भोजन के बिना, बीमारी तथा भूख से पीड़ित श्रमिकों का खुले मैदान में तड़फते हुए मरने को छोड़ देना, कितना अमानुषिक व्यवहार था। 13 जुलाई, सन् 1943 को बजट पर बहस करते हुए डॉक्टर रामगुलाम ने कहा—"सरकार को बुढ़ापे की पेंशन की व्यवस्था करनी होगी। इस बजट में उन लोगों के लाभ के लिए कुछ उपाय करने होंगे, जो वृद्ध और कमजोर हो रहे हैं, जो लोग "रोगी होने के कारण" काम छोड़ चुके हैं। उनको अपने गुजर-बसर के लिए कुछ देना चाहिए। सर, आपने इस बजट में जजों, सरकारी कर्मचारियों एवं अध्यापकों की पेंशन की व्यवस्था की है। किन्तु अपने मालिकों की पचास साल तक कठोर परिश्रम द्वारा सेवा करने वाले श्रमिकों के हित के लिए इस बजट में कोई प्रबंध नहीं किया गया है। हम भारतीयों में, भारतीय राजनीतिक ग्रन्थों की एक कहावत प्रचलित है—"साधारण धर्म" और "साधारण अधिकार" जिसका आशय है सबके कर्तव्य और सबके अधिकार। इस कौंसिल के मेम्बरों द्वारा श्रमिकों को अपने कर्तव्य का पालन तथा अच्छी तरह से अपनी जिम्मेदारी सम्भालने का आदेश देने से पहले, उन्हें स्वयं उन मजदूरों के अधिकारों का सम्मान करना चाहिए।

डॉक्टर रामगुलाम के उपर्युक्त विचार से स्पष्ट होता है कि वे मॉरीशसीय इतिहास की धारा को बदल रहे थे। अब तक गोरे कृषक और मिल मालिक मजदूरों के कर्तव्य की बात कर रहे थे, किन्तु डॉक्टर साहब ने उन श्रमिकों के अधिकार तथा उनके मालिकों के कर्तव्य की बात करना शुरू किया। सरकार और धनिक कृषक समुदाय को पता हो गया कि डॉक्टर रामगुलाम आम जनता के नेता के रूप में उभर रहे थे। वे पूँजीवादी शासन-प्रणाली के शोषण को समूल उखाड़ने में लगे हुए थे। सरकार को श्रमिकों के हित के बारे में सही विचार करने को प्रेरित कर रहे थे।

13 जुलाई, 1943 को बजट पर हो रही बहस के दौरान डॉक्टर साहब ने जहाँ श्रमिकों के लिए बुढ़ापे की पेंशन, बीमारी के भत्ते आदि सामाजिक सेवाओं की माँग की; वहाँ उन्होंने कहा, "इस सरकारी परिषद में श्रमिकों का कोई भी प्रतिनिधि चुनाव में निर्वाचित होकर नहीं आता। लेकिन सर, मैं आपको विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि आज श्रमिक वर्ग का धीरज हद तक पहुँच गया है........ श्रमिक लोग बहुत समय से असमर्थताओं के शिकार हैं और उनके पास आप तक

अपनी आवाज पहुँचाने का कोई साधन नहीं है। आज परिस्थिति ऐसी है कि इस टापू का सर्वहारा वर्ग एक सार्वनिक सभा भी नहीं बुला सकता और यदि मीटिंग करने की आज्ञा की माँग करता है तो वह माँग ठुकरा दी जाती है........सर, वास्तव में यह मॉरीशस एक विचित्र देश है।"

मॉरीशस का पुराना संविधान गरीब जनता के हक में नहीं था, इसलिए जब भी आम चुनाव होता था, श्रमिक वर्ग का कोई भी प्रतिनिधि निर्वाचित नहीं हो पाता था। 5 सितम्बर, 1944 को डॉक्टर रामगुलाम ने कहा—"सर, मैं सोचता हूँ कि इस उपनिवेश की जनता को इतने लम्बे समय तक प्रतीक्षा कराने के बाद उसी पुराने संविधान, जो वर्षों पहले बनाया गया था, के अनुसार निर्वाचन करना बुद्धिमता नहीं होगी..........यह कौंसिल समस्त जनता का प्रतिनिधित्व नहीं कर सकता क्योंकि इसमें बैठे लोग सीमित मतदाताओं के द्वारा निर्वाचित हैं।"

डॉक्टर रामगुलाम जहाँ शोषण, अन्याय और अत्याचार के खिलाफ आवाज उठाते हुए दीन-हीन की आर्थिक परिस्थिति में सुधार लाना चाहते थे, वहाँ अपनी जाति के लोगों को अपने धर्म, भाषा और संस्कृति की ओर भी उन्मुख देखना चाहते थे। इसीलिए जब व्यवस्थापिका परिषद् में किसी हिन्दू-विरोधी सदस्य ने प्रोफेसर विष्णुदयाल के विरुद्ध प्रस्ताव किया तब डॉक्टर साहब चुप न रह सके।

प्रोफेसर विष्णुदयाल का आन्दोलन

प्रोफेसर वासुदेव विष्णुदयाल सन् 1939 के दिसम्बर मास में भारत से उच्च शिक्षा प्राप्त कर मॉरीशस लौटे। यद्यपि उन्होंने अंग्रेजी में एम. ए. की डिग्री प्राप्त की थी तथापि हिन्दी, संस्कृत, फ्रेंच, उर्दू आदि पर उनका पूरा अधिकार था। मॉरीशस आते ही प्रोफेसर साहब सेवा के क्षत्र में उतर आये। उन्होंने विशेषकर भारतीय वंशजों में जागरण लाने के लिए एक जबर्दस्त आन्दोलन चलाया। उनके आन्दोलन का उद्देश्य था आप्रवासियों को अपनी भाषा, संस्कृति, धर्म आदि की ओर उन्मुख करके सबको अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिए संगठित करना।

सन् 1941 में क्यूपीपं नगरपालिका में "भारत तथा विश्व" विषय पर प्रोफेसर विष्णुदयाल ने अंग्रेजी में एक ऐसा भाषण दिया, जिसे सुनने के लिए हजारों की संख्या में श्रोता उपस्थित हुए। श्रोताओं में डॉक्टर शिवसागर रामगुलाम तथा अन्य प्रतिष्ठित व्यक्ति भी थे। उस भाषण का अनुवाद हिन्दी में करके भारत तथा मॉरीशस में उसकी हजारों प्रतियाँ वितरित की गईं।

प्रोफेसर वासुदेव विष्णुदयाल ने अपने प्रवचनों एवं आयोजनों के माध्यम से आप्रवासी भारतीयों द्वारा मनाये जाने वाले धार्मिक तथा सामाजिक पर्वों के महत्व पर प्रचुर प्रकाश डाला और सभी को धूमधाम से अपने त्योहारों को मनाने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने भारत से गीतों की पुस्तकें मंगाकर युवकों को संगीत और हिन्दी सीखने के लिए प्रेरित किया। उनके तप-त्याग के प्रभाव से सैकड़ों युवक भविष्य में हिन्दी अध्यापक बने।

सन 1935 तक जितने भी युवक विद्याध्ययन के लिए विदेश गये उनमें युवक वासुदेव विष्णुदयाल निराले थे। उनके विद्योपार्जन का उद्देश्य स्वांत: सुखाय न होकर बहुजन हिताय था। वे फिल्मी अभिनेताओं के भारत में पढ़ने नहीं गये थे। उनका भारत तो ऋषि-मुनियों की पुण्य भूमि था जहाँ वेद-शास्त्रों और आर्य ग्रन्थों की ही ध्वनि सुनाई देती थी। अध्ययन-स्थल लाहौर चुना गया था जहाँ वे सन् 1933 से 1937 तक रहे। डी.ए.वी. कॉलेज में पंडित बुद्धदेव विद्यालंकार, पंडित भावदत्त रिसर्च स्कॉलर और कलकत्ता में पंडित अयोध्या प्रसाद सरीखे ज्ञानी-ध्यानी तपोनिष्ठ विद्वानों का आशीर्वाद पाकर ही वासुदेव विष्णुदयाल मॉरीशस लौटे थे। उन्होंने भारतीय स्वतन्त्रता-संग्राम में जूझे हुए महात्मा गाँधी, नेता सुभाष चन्द्र बोस, पंडित नेहरू आदि देशभक्तों के संघर्ष को अपनी आँखों से देखा था। भला वे इन महामानवों के तप-त्याग और राष्ट्रीय भावना से कैसे प्रभावित न होते ?

मॉरीशस लौटने पर प्रोफेसर वासुदेव विष्णुदयाल को अच्छी सरकारी नौकरी मिल सकती थी। किन्तु उन्होंने सुख-आराम का मार्ग छोड़कर काँटों-भरा पथ अपनाया। जाति के उद्धार-सुधार में ही अपना तन-मन-धन लुटा दिया। उन्होंने रामायण एवं गीता से आन्दोलन-कार्य शुरू करके उपनिषदों और वेदों के अनमोल वचन जन-जन तक रखना आरम्भ किया। देश में जागरण हुआ। प्रोफेसर का नाम वन की आग की तरह देश भर में फैल गया। प्रवचन सुनने के लिए श्रोता बाढ़ की तरह उमड़ पड़े। वे रामायण, गीता और उपनिषदों की सरल-सरल कथाएँ सुबोध भाषा में सुनकर आनन्द-विभोर हो उठते। अठारह मास लगातार गीता की कथा होने लगी। गीत-कथा के दौरान श्यामपट पर संस्कृत पाठ लिखा जाता था। श्रोता दिये जाने वाले कार्य को करके अगले मास की कथा के अवसर पर ले आते। गद्दी पर बहियों के ढेर लग जाते। स्त्री-पुरुष स्पेशल बस लेकर दूर-दूर से परिवार सहित पहुँचते थे। हिन्दू ही नहीं, मुस्लिम भी सस्कृत सीखने लगे। श्री अब्दुल वाहब फुन्दन ने तो संस्कृत सीखकर संस्कृत में लघु कथा लिखने की योग्यता भी प्राप्त कर ली।

सन् 1943 के दिसम्बर मास में पंडित वासुदेव विष्णुदयाल ने एक महायज्ञ का आयोजन किया जिसमें देश के कोने-कोने से साठ हजार नर-नारियों ने भाग

लिया। इस महायज्ञ की तैयारी कई महीने पूर्व से ही शुरू हो गई थी। इसकी अभूत-पूर्व सफलता को देखकर तत्कालीन शासक वर्ग का माथा ठनका। पंडित जी ने उस अपार जन समूह के नियन्त्रण और व्यवस्था के लिए अपने हजारों स्वयं सेवकों से काम लिया था। यह महान् कार्य निर्विघ्न एवं शांतिपूर्ण तरीके से सम्पन्न हुआ था। सरकार के कान खड़े हो गये।

प्रोफेसर विष्णुदयाल के भाषणों में भारतीय मूल के लोगों के प्रति सरकारी नीति की आलोचना अधिकाधिक कटु होती जा रही थी। लोगों को भड़काने के जुल्म में उन्हें तीन बार जेल की यात्रा करनी पड़ी। जेल-यात्रा से वे आप्रवासियों के बीच और भी लोकप्रिय होते चले गये।

चूँकि पंडित विष्णुदयाल भारत जाने से पहले अध्यापक थे और उनमें अध्यापन की वृत्ति ओत-प्रोत थी, उन्होंने हिन्दी पाठय पुस्तकें और व्याकरण लिखकर सभी हिन्दी पाठशालाओं में चालू कर दी। उनकी हिन्दी अंग्रेजी और फ्रैंच में पुस्तकें एक के बाद एक निकलने लगी जिन्हें पढ़-पढ़कर हिन्दू अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए उद्यत होने लगे।

प्रोफेसर विष्णुदयाल के सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक आन्दोलन को देखकर शासक वर्ग शंकित हो उठा। हिन्दुओं की एकता देखकर गोरे भी चौकन्ने हुए! सरकार प्रोफेसर जी को भयभीत करने के अनेक उपाय अपनाने लगी किन्तु पंडित वासुदेव विष्णुदयाल कबके डरने वाले थे, उनको लांछित करके उनके आन्दो-लन को दबाने का यत्न किया गया। डॉक्टर रामगुलाम अनुदार पंथी सरकार की इस नीति को सहन न कर सके। 17 दिसम्बर सन् 1943 की बैठक में डॉक्टर साहब ने कहा—"मैं सोचता हूँ कि वे रिव्येर जु राम्पार के प्रतिनिधि थे, जिन्होंने संकेत किया कि टापू मे विद्रोही प्रचार हो रहा है। यदि उस मानवीय प्रतिनिधि का संकेत उस हिन्दू प्रचारक की ओर है जो सारे द्वीप का दौरा करके श्रमिकों-मजदूरों को उनके धर्म और दर्शन की शिक्षा देकर जगा रहे हैं तो मैं कहूँगा कि रिव्येर जु राम्पार के माननीय प्रतिनिधि को समझना चाहिए कि हमें अपने पूर्वजों के धर्म को बचाये रखना है। यह हमारे लिए आवश्यक है। मैं उन्हें विश्वास दिलाता हूं कि किसी भी प्रकार का विध्वंसकारी प्रचार नहीं हो रहा है। उन्हें ऐसा कोई भय नहीं होना चाहिये। यह हिन्दू प्रचारक लोगों के मनोमस्तिष्क में धार्मिक ज्ञान की छाप लगाने में रत है।"

रामनारायण के कार्य

उसी समय हरिप्रसाद रामनारायण भी हिन्दुओं में व्याप्त कुछ कुरीतियों

को दूर करने में लगे हुए थे। उनका आन्दोलन शराव के खिलाफ था। वह शराब जिसको दुःख मिटाने के लिए हिन्दू ग्रहण करते थे और उसी बोतल के पानी में डूबकर अपने परिवारों का सत्यानाश कर डालते थे।

हरिप्रसाद रामनारायण भारतीय मूल के एक युवा ट्रेड यूनियनिष्ट थे जिन्होंने उत्तर प्रान्त में मजदूरों को संगठित करने में सहायता पहुँचाई। रामनारायण की कहानी नाना विषमताओं के बावजूद, अपनी आध्यात्मिक और सांस्कृतिक बल-बूते पर ऊपर उठने वाले, स्वयं शिक्षित भारतीय आप्रवासियों का ज्वलन्त उदाहरण है।

उनका जन्म 2 अक्टूबर, 1914 को कॉटेज (Cottage) में हुआ। उनके पिता एक छोटे किसान थे जिनके पास पाँच एकड़ जमीन थी। बचपन में रामनारायण छः मील चलकर पुद्र दोर (Poudre do'r) सरकारी पाठशाला पहुँचते थे जहाँ से उन्होंने छठी की परीक्षा पास की। जब उनके माता-पिता की सारी सम्पत्ति, कर्ज और सूद न चुका पाने के कारण, जब्त कर ली गई तब उनके बुरे दिन आ गये। यह एक ऐसा संकट था जो संघर्ष करने वाले छोटे किसानों में प्रचलित था। फिर कुछ समय के लिए रामनारायण को मजदूरी करनी पड़ी।

1936 में बेनीप्रसाद आलगू ने उन्हें मजदूर दल में प्रवेश कराया। वे डॉ० कीरे तथा मजदूर दल के कोषाध्यक्ष जेनेविऐव से पोर्ट लुईस में मिले और दल के एजेंट बन गये। अधिकाधिक लोगों को प्रभावित करने के लिए वे साईकिल द्वारा उत्तर प्रान्त के गाँवों का दौरा करने लगे। इससे उन्हें दस प्रतिशत कमीशन मिलता था, जो पाँच या छः रुपये होता था। हर मास वे सदस्यों से 25 सेंट बटोरते थे। मजदूर दल के सभी उतार-चढ़ावों से वे गहरा सम्बन्ध रखते थे। यूनियन फ्लाक (Union Flacq) में 1937 की हड़ताल, 8 सितम्बर, 1938 में जहाजी मालघाट में काम करने वालों की हड़ताल और उस दिन से 30 नवम्बर, 1938 तक ऑकचिल का निर्वासन 1938 के श्रम कानून ने औद्योगिक संघों की स्थापना की अनुमति दे दी। 6 अगस्त, 1938 को एक कटहल के वृक्ष के नीचे तथा ऑकचिल की उपस्थिति में रामनारायण ने उत्तर तथा केन्द्रीय रिव्येर जु राम्पार औद्योगिक संघ (Central Riviere du Rempart Industrial Association) की स्थापना की। गोरे मालिकों ने ट्रेड यूनियन के सदस्यों के प्रति अपना वैर प्रदर्शित किया। उन सदस्यों को शक्कर कोठियों में डराया-धमकाया जाता था। उनके सामने बाधाएँ उपस्थित करके उन्हें अनेक प्रकार से अधिकारहीन कर दिया जाता था। रामनारायण के समक्ष बड़ा दुष्कर कार्य था, क्योंकि अधिकतर कोठियों में वे आ-जा नहीं सकते थे। मापू और अन्य कोठियों में बगैर अधिकार के जाने के कारण उन पर अभियोग

चलाया गया था। किन्तु श्रमिकों एवं श्रम विभाग (Department of Labour) की सहायता से सभी निषेधात्मक आज्ञाओं को समाप्त कराने में वे सफल रहे।

द्वितीय विश्व युद्ध के समय सरकार ने सभी ट्रेड यूनियन-गतिविधियों को कुचलने का यथासम्भव प्रयत्न किया। 1941–1942 में अनेक भूख हड़तालें हुईं। कम तनख्वाह, आवश्यक चीजों की मँहगाई तथा खाद्य पदार्थों के अभाव के कारण हालत बिगड़ रही थी, मजदूरों में अशान्ति बढ़ रही थी। ऐसी ही स्थिति में "बेल वी आरेल" शक्कर कोठी के मजदूरों ने 27 सितम्बर, 1943 में हड़ताल की। वे ज्यादा तनख्वाह और काम की बेहतर शर्तों की माँग कर रहे थे। ट्रेड यूनियन के नेता उन्हें ऐसा करने को भड़का रहे थे और उन नेताओं का नेतृत्व कर रहे थे रामनारायण तथा जगदम्बी। हड़ताल करने वालों की एक टोली बैठक में एकत्रित हुए जहाँ एक व्यक्ति पुलिस के साथ बहस करने लगा। हुआ यह कि लोग पुलिस वालों पर पत्थर चलाने लगे। पुलिस ने गोलियाँ चलानी शुरू कीं जिससे तीन मजदूर मारे गये। उनमें एक दस वर्षीय लड़का था और थी अंजली नाम की एक गर्भवती स्त्री। रामनारायण ने भूख हड़ताल शुरू की। जिसके फलस्वरूप एक राजकीय जाँच आयोग नियुक्त किया गया जिसकी अध्यक्षता औपनिवेशिक सचिव (Colonial Secretary) मूडी ने की। इससे ट्रेड यूनियन में और ज्यादा परिवर्तन हुए। बाद में डा. रामगुलाम को खुद ऐसी विभिन्न संस्थाओं में शरीक होना पड़ा जो श्रमिकों के कल्याण का ध्यान रखती थी, जैसे (Labour Advisory Board) जिसकी स्थापना मार्च, 1944 में हुई थी। एक दूसरी ध्यान देने योग्य बात थी कि रामनारायण का शराब के प्रति आन्दोलन। वे गाँव-गांव पैदल घूमकर शराब न पीने का प्रचार करते थे। (Defence Regulation) के विषय को लेकर उन्हें कैद भी होना पड़ा। पोर्ट लुई के लाइन बेराक्स में डा. रामगुलाम उन्हें कैद में मिले। दस महीने बाद उनकी रिहाई हुई, परन्तु अन्य छः मास तक उन्हें पुलिस की निगरानी में रहना पड़ा। उस काल में रामनारायण श्रमिकों की विभिन्न समस्याओं के विषय में डॉक्टर साहब से परामर्श लेते थे और वे जहां तक हो सकता था, उनकी सहायता करते थे, कौंसिल के बाहर भी और कौंसिल में भी।

1947 में रामनारायण ने प्लैन विल्येम्स में गाय-बैलों के चारे से सम्बन्धित एक आन्दोलन की शुरूआत की। इस बात के प्रति उन्होंने अपनी आवाज उठाई कि गाय पालने वालों को सरकारी जमीन में घास काटने की अनुमति क्यों नहीं दी जा रही थी। सरकार तथा कोठियों की जमीन में घास काटने वाली स्त्रियों पर घास चुराने का दोष लगाया जाता था और पुलिस उन्हें परेशान करती थी। अनेकों बार तो ऐसा भी होता था कि गायों की घास पाने के लिए स्त्रियों को कोठियों में बगैर पैसे का काम करना पड़ता था। इस पर भी न्यायाधीश उनसे इस बात पर

जुर्माना भरवाते थे कि उनके श्रम की तुलना में उनके द्वारा काटी गई घास का भाव ज्यादा रहता था। रामनारायण ने 20,000 गौ-पालकों को इकट्ठा किया जो अपनी गायों के साथ चलकर ले रेज्वी में गवर्नर के मकान तक पहुँचे। गवर्नर को विवश होकर घास काटने से सम्बन्धित हर प्रतिबन्ध को हटाना पड़ा।

हरिप्रसाद रामनारायण के आन्दोलन से हिन्दुओं में एकता और जागरण आया। हिन्दुओं की यह एकता गोरों की सरकार को पसन्द न थी। रामनारायण गिरफ्तार कर लिये गये। 25 जनवरी सन् 1944 को डाक्टर रामगुलाम ने सरकार से इस गिरफ्तारी का कारण पूछा। उत्तर में कहा गया कि पक्षपातपूर्ण कार्य में पड़कर हरिप्रसाद रामनारायण सार्वजनिक शान्ति के लिए खतरा पैदा कर रहे थे।

अतः स्पष्ट दिखाई देता है कि कौंसिल के मनोनीत सदस्य बनने पर डाक्टर रामगुलाम कभी भी कुलीनतन्त्र के अन्याय, एवं अत्याचार शोषण के सामने झुके नहीं। सरकारी परिषद् के वे एकमात्र विरोधी सदस्य थे, जो भारतीय मूल के लोगों के ही नहीं बल्कि पूरे देश की श्रमिक जनता के अधिकारों की रक्षा के लिए लड़ते थे। वे संवैधानिक सुधार करके शोषक वर्ग से मजदूरों को मुक्त करने के प्रयत्न में उस समय तक जुटे रहे जब तक कि उन्हे अपने उद्देश्य की पूर्ति में पूर्ण सफलता न मिली। उन्होंने व्यवस्थापक परिषद् में पहुँचकर यह सिद्ध कर दिया कि राजनीति पर न सरकार की और नाहीं गौरे पूंजीपतियों का एक छत्र अधिकार रह सकता है। वास्तव में उन्होंने कौंसिल में जिन विचारों को प्रस्तुत किया, वे नये थे, जिन्हें सुनकर परिषद् उनकी और आश्चर्यचकित होकर देखा करते थे। वे केवल एक भारतीय आप्रवासी के पुत्र और श्रमिक वर्ग के प्रतिनिधि ही नहीं थे, वरन् लन्दन में सुशिक्षित एवं प्रशिक्षित हुए एक दृढ़ समाजवादी थे। उन्होंने अपना संघर्ष उस समय तक जारी रखा जब तक कि सन् 1848 में देश को नये संविधान की प्राप्ति न हो गई। सभी को वयस्काधिकार देकर ही उन्होंने देश को प्रगति-पथ पर आरूढ किया। वास्तव में उनका सपना मारीशस को एक स्वतन्त्र, प्रगतिशील राष्ट्र बनाने का था। उन्होंने अपने महान उद्देश्य की प्राप्ति के लिये जीवन की आखरी साँस तक काम किया।

नगरपालिका के सदस्य

सन् 1940 में डॉक्टर रामगुलाम के राजनीतिक जीवन की तीसरी मुख्य घटना थी उनका पोर्टलुई नगरपालिका के सदस्य के रूप में निर्वाचित होना। उन दिनों किसी भारतीय मूल के व्यक्ति को चुनाव जीतना एक असाधारण बात थी।

पोर्टलुई नगरपालिका का इतिहास गौरवमय है। यह नगरपालिका मॉरीशस की पहली संस्था है जो चुनाव का आयोजन करके निर्वाचित सदस्यों द्वारा अपनी कमेटी का गठन करती थी। इस टापू के अधिकांश राजनीतिक पुरुष इसी संस्था के चुनाव में खड़े होकर, राजनीति का प्रशिक्षण पाकर प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ बने। आरम्भिक काल में इसके सदस्य केवल गोरे पूँजीपति ही निर्वाचित होते थे। बाद में रंगीन तत्व के लोग भी चुनाव जीतने लगे। इस नगरपालिका के चुनाव में वही व्यक्ति मतदान कर सकते थे जो अचल सम्पत्ति के मालिक होते थे। दूसरे वे लोग थे जो किरायेदार होते थे और जो लाइसेंस पाने के अधिकारी थे। सन् 1886 में मासिक वेतन पाने वालों को भी मतदाता बनाने के लिए आवाज उठाई गई। बहुतों ने इस माँग का विरोध किया। अन्त में सदा से शासन करने वाले अनुदार पंथियों ने स्वीकार किया कि जिसकी चालीस रुपये माहवार तनख्वाह होगी, वह मतदान का अधिकारी समझा जायेगा। सन् 1923 में चालीस रुपये के वेतन वाले को हटाकर सौ रुपये मासिक वेतन वाले को ही वोट डालने का अधिकार दिया गया। कुछ सदस्य, जैसे जी. एम. इसाक और जी. एम. डी. आचिया ने जोर दिया कि चालीस रुपये का वेतन पाने वालों को मतदान का अधिकार देने से पोर्टलुई शहर के संचालन-कार्य में जनता के एक अच्छे भाग को अवसर मिलेगा। सन् 1932 में जब आचिया इंग्लैण्ड गये तब सरकारी अधिकारियों से बातचीत की कि वेतन वालों को मताधिकार देने वाला नियम रद्द किया जाय। तब से आचिया ने वेतन के खिलाफ जनमत पैदा करना शुरू किया, क्योंकि इस नियम के आधार पर केवल धनिकों को नगरपालिका के सदस्य बनने का मौका मिलता था। कुछ साल बाद इस विषय पर कौंसिल में बहस हुई। कौंसिल में आचिया का प्रस्ताव गिर गया और मतदाता होने के लिए मासिक वेतन भोगी होना आवश्यक बताया गया।

सन् 1940 के चुनाव में 28 उम्मेदवार खड़े हुए थे। मतदाताओं के रजिस्टर के अनुसार दो हजार आठ सौ सत्तर निर्वाचकों के नाम दर्ज थे, किन्तु केवल दो हजार चार सौ छियासठ मतदाताओं ने ही मतदान किया, 9 दिसम्बर, 1940 का चुनाव-परिणाम निम्न प्रकार रहा :

उम्मेदवार	**वोट की प्राप्ति**
डॉ. एडगार लोराँ	1,600
फुरसी आदेल	1,492
राउल रिवेट	1,435
गाब्रियेल मारीशयाल	1,349

सामुएल फुक्रो	1,330
फिलिप ग्राँतेल्म	1,307
फेरनाँ एस्पीतालिये नोवेल	1,300
डॉ. एडगार मिलियें	1,190
फिलिप रुस्सेत	1,127
गी फोरजेत	1,010
मोरिस पुपार	955
डॉ. शिवसागर रामगुलाम	904

उपर्युक्त नतीजे को देखकर स्पष्ट पता चलता है कि भारतीय मूल के उम्मेदवारों को चुनाव जीतना कितना कठिन काम था। बारह निर्वाचित सदस्यों में एकमात्र हिन्दू डॉ रामगुलाम थे जो बारहों में से अन्तिम विजेता निकले। गुलाम मुहम्मद ग्राचिया निर्वाचित न हो सके। डॉ० रामगुलाम कहते हैं, "मेरे विचार में राजनीति सर्वाधिक कठिन ग्रापत्तिपूर्ण, गुरुत्तम उत्तरदायित्व वाला पेशा है, जिसके लिए विशेष समझ, सोचने की अपूर्व शक्ति, चरित्र-बल तथा जीवन के अपार ज्ञान और अनुभव की जरूरत है। कोई राजनीति में यों ही प्रवेश नहीं कर सकता, बल्कि इसके लिए अनेक वर्षों के अध्ययन की आवश्यकता है ताकि व्यक्ति में प्रौढ़ता और आत्मविश्वास आ सके। सामाजिक सेवाएँ तथा सार्वजनिक प्रशासन करते हुए ही राजनीतिक सीढ़ी के पहले सोपान पर पैर रखकर ऊपर की ओर जाने की चेष्टा करनी चाहिए। चूँकि मैं गम्भीरतापूर्वक राजनीतिक क्षेत्र में काम करना चाहता था, इसलिए मैंने महसूस किया कि राजनीति में प्रान्तीय एवं सरकारी स्तर पर अनुभव प्राप्त करना चाहिए।"

सन् 1940 से 1959 तक डॉक्टर रामगुलाम ने पोर्टलुई नगरपालिका की गतिविधियों में सक्रिय रूप से भाग लिया। वे बड़ी दिलचस्पी से म्युनिसिपल कौंसिल की बैठकों में अपने विचार प्रस्तुत करते रहे। वे चाहते थे कि अधिक से अधिक लोगों को मतदान का अधिकार दिया जाय। 28 फरवरी, 1948 को उन्होंने सरकारी परिषद् में अपने भाषण के दौरान कहा—"जहाँ तक म्युनिसिपल कौंसिल का सवाल है, इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस देश में सभी लोगों के साथ-साथ सरकार और उपनिवेशों के सचिव भी यह सोचते हैं कि अब समय आ गया है कि लेजिस्लेटिव कौंसिल और म्युनिसिपल कौंसिल के लिए वयस्क मताधिकार पर पुनर्विचार किया जाय। सर, मेरा विचार है कि म्युनिसिपल कौंसिल को अब आगे बढ़ाने का समय आ गया है, अर्थात् पोर्टलुई के वयस्क निवासियों को, उनकी आय या तनख्वाह पर ध्यान दिये बगैर मतदान करने का अधिकार प्राप्त होना चाहिए। सर,

मैं यह मानने को तैयार हूँ कि पोर्टलुई के सम्पत्ति वालों को वोट डालने का अधिकार रहे, लेकिन नगरपालिका के चुनाव में मतदान करने की अनुमति वेतन पाने वालों को देना, प्रजातान्त्रिक नियमों के विरुद्ध होगा।"

डॉक्टर रामगुलाम चाहते थे कि सभी वयस्क व्यक्तियों को बिना किसी भेद-भाव के मतदान करने का अधिकार दिया जाय। व्यक्ति की आमदनी को ध्यान में रखकर मतदान का अधिकार देना वे प्रजातान्त्रिक सिद्धान्तों के विरुद्ध समझते थे। अनुदारपंथियों ने उन पर कीचड़ उछालने का बहुत यत्न किया। लोग चाहते थे कि उन्हें राजनीतिक क्षेत्र से सदा के लिए हटा दिया जाय। सन् 1948 के आम चुनाव में उदारपंथियों की भारी जीत हुई जिसका प्रभाव नगरपालिका के चुनाव पर भी पड़ा। सन् 1950 में म्युनिसिपल कौंसिल के निर्वाचन में 53 उम्मेदवार थे। मजदूर दल ने निम्नलिखित उम्मेदवारों को खड़ा किया : गी. रोजमों, डॉ. रामगुलाम, आर. रो. आर. बागजी, आर. बालगोबिन, वी. जुकास, जी. जामुजियो, सी. दावातें, ए. एच. जी. एम इसाक और जे. एस. चाप सिंग। नौ हजार पाँच सौ इक्कीस मतदाताओं ने मतदान किया। मजदूर दल के नौ उम्मेदवार विजयी हुए। डाक्टर रामगुलाम की शक्ति बढ़ती गई।

पोर्टलुई के मेयर

1953 में डॉ. रामगुलाम व्यवस्थापिका परिषद् के चुनाव में निर्वाचित हुए और फलस्वरूप मजदूर दल और अधिक विख्यात हो गया। इससे डॉ. रामगुलाम पर पहले से और ज्यादा शक किया जाने लगा। देश के शासन-व्यवस्था सम्बन्धी सुधारों पर बात करने के लिए 1966 में सेक्रेटरी ऑफ स्टेट मजदूर दल की प्रार्थना पर एक शिष्ट मण्डल से मिले। यह याद रखने योग्य है कि डॉ. रामगुलाम दल के नेता बन चुके थे। जहाँ तक सभी वयस्कों को मतदान देने के अधिकार का सवाल था अनुदारपंथी (Conservative) मजदूर दल की माँगों का विरोध कर रहे थे। यह सोचा जा रहा था कि उस साल में होने वाले नगरपालिका के चुनावों के फल-स्वरूप लन्दन में किये जाने वाले विचार-विमर्श की प्रक्रियाओं पर बुरा प्रभाव पड़ेगा। अतः मजदूर दल को हराने तथा 1953 की तरह डॉ. रामगुलाम के चरित्र पर कीचड़ उछालने के लिए अनुदारपंथियों ने एक बड़ा मजबूत आयोजन किया। डॉ. रामगुलाम चुनाव में खड़े न होने की बात सोच सकते थे, परन्तु उन्होंने अपने विरोधियों का सामना करने का निर्णय किया। 1953 में अपनी हार से वे निराश नहीं हुए। रालीमाँ मोरिसियें दल (Rallimenl Mauricien) और 'ले सेरने पत्र' ने उनके विरुद्ध जो द्वेषयुक्त आन्दोलन किया था, उससे उनका जोश ठंडा पड़ा था क्योंकि वे सही राह पर चलते आये थे। चुनाव में दो प्रमुख दल खड़े हुए थे जिनके उम्मेदवार इस प्रकार थे :—

लेबर पार्टी	राली मोरिसियें
श्रीमती इस्साक दामू	जी. जुवाल
कामील देवाँतें	ए. भुजोहारी
डॉ. जुप्रे	जे. कोंस्ताँतें
श्रो. लाकाज	जी. कोलार
जे. लेगुई	वी. जुकास
डॉ. मिलियें	श्रार. हें "जूनियर"
एच. पीरबोय	जी. इस्साक
डॉ. रामगुलाम	ए. श्रार. जूमाइ
श्रार. रो	जुल केनिग
वी. रिंगाडू	जे. कोंफोसियों
श्रार. सिनीवासेन	ए. श्रार. मोहामेद
एच. श्रार. वागजी	ए. श्रार. नहाबू
एच. वाल्टर	एम. नाजरू
डबल्यु. लेताँ	श्रार. रे
इ. चांगकाइ	एम. दे सोरने
गी फोजेत	डॉ. पी. तिलकधारी

चुनाव 2 सितम्बर. 1956 को हुए। 24,068 निर्वाचकों में से 22,539 ने श्रपनी पसन्द के उम्मेदवारों के लिए वोट डाले। परिणाम इस प्रकार रहा :—

नाम	वोट
इ. चाँगकाइ	11,517
डॉ. जुप्रे	11,505
गी. फोरजेत	11,427
डॉ. मिलियें	11,247
जुल केनिग	11,118
श्रार. सिनीवासेन	11,110
श्रार. रो	11,099
ए. भुजोहारी	11,003
एच. वालटेर	10,873
श्रार. रे	10,766
श्रार. हें	10,660
डॉ. रामगुलाम	10,638

श्रीमती इस्साक डामू	10,634
वी. रिंगाडू	10,614
एम. दे सोरने	10,580
डबल्यु लेताँ	10,583

इस चुनाव में मजदूर दल को ग्यारह कुरसियाँ हासिल हुईं, जबकि रालीमाँ मोरिसियें को केवल पाँच । जुवाल, मोहम्मद और वागजी उन उम्मेदवारों में थे, जो हार गये थे । पूरी कोशिश के बावजूद भी अनुदारपंथी डॉ. रामगुलाम को हरा नहीं सका । उनकी सफलता से मजदूर दल को इस कदर ख्याति प्राप्त हुई कि सेक्रेटरी ऑफ स्टेट को इस ख्याति के बारे में सोचने को बाध्य होना पड़ा । फलतः लन्दन में एक दूसरा सम्मेलन हुआ ।

जहाँ तक चुनाव का प्रश्न था, श्री चाँकाई ने प्रस्ताव रखा कि 1957 के लिए डॉ. मिलियें को नगर-निगम का अध्यक्ष नियुक्त किया जाय और इसका अनुमोदन श्रीमती इस्साक दामू ने किया । यह बहुमत से पास हुआ । इसके अतिरिक्त डॉ. मिलियें ने प्रस्ताव किया कि डॉ. रामगुलाम डिप्युटी मेयर (Deputy Mayor) नियुक्त किये जायें । रेमों रो ने इसका अनुमोदन किया । 23 दिसम्बर, 1950 को डॉ. मिलियें ने प्रस्ताव किया कि 1958 के लिए डॉ. शिवसागर रामगुलाम नगर-निगम के अध्यक्ष नियुक्त किये जायें और उसका अनुमोदन चांकाई ने किया । वोट लिये गये और डॉ. रामगुलाम पोर्टलुई शहर के मेयर पद पर नियुक्त हुए । उन्होंने इस पद को दिसम्बर, 1958 तक सम्भाला और नगगपालिका के सदस्य 1959 तक बने रहे । सन् 1959 में संविधान में सुधार के प्रश्न को लेकर अपने कुछ अन्य साथियों के साथ उन्होंने इस्तीफा दे दिया । उस समय उन्हें बहुत मान मिला । नगरपालिका में अपने कार्यकाल के दौरान जिस साहस, संकल्प और दूरदर्शिता का परिचय दिया था । उसके लिए वे प्रशंसा के पात्र बने अपने विदाई-भाषण के उत्तर में उन्होंने कहा :

"इस्तीफा देने वाले अपने साथियों की ओर से हम आपके अच्छे शब्दों के लिए, आपके प्रति अपना आभार प्रकट करते हैं । दरअसल, हम में से कुछ लोगों ने म्युनिसिपल कौंसिल में अपना कार्य शुरू किया था । उसको छोड़ते हुए कष्ट हो रहा है और हमारा मन उदास हो रहा है । हम सब जानते हैं कि संविधान के सम्बन्ध में यह देश प्रगति कर रहा है और सेक्रेटरी ऑफ स्टेट की स्वीकृति एवं उनके अनुमोदन से इस टापू के गवर्नर को यह लगा कि देश के हित के लिए कुछ सुधार होने चाहिए और हम इस विचार से सहमत हैं ।"

अतः हम देखते हैं कि उन्नीस वर्ष तक डॉक्टर रामगुलाम पोर्टलुई नगर-पालिका सदस्य के रूप में बड़ी दिलचस्पी से कार्य करते रहे। उन्हें अनुदारपंथी सदस्यों से भारी संघर्ष करते रहना पड़ा। नगरपालिका की बैठकों में बहस के दौरान अनेक बार वे एकमात्र विरोधी सदस्य बन जाते थे, क्योंकि उनके विचार समाजवाद और प्रजातंत्र के सिद्धांतों पर आधारित थे। वे सुधारवादी थे तथा अपने साथियों को सुधार-कार्य के लिए प्रेरित करते रहे।

षष्ठम परिच्छेद

मॉरीशस लेबर पार्टी

सन् 1935 से 1945 तक डॉक्टर रामगुलाम मॉरीशस की जनता की दयनीय दशा से पूर्ण परिचित हो चुके थे। उन्हें इस देश की राजनीति का पूरा ज्ञान प्राप्त हो चुका था। वे कुलीनतन्त्र के दाव-पेंचों को भली-भाँति समझ चुके थे। तत्कालीन राजनीतिज्ञों की कार्य विधि, नीति-रीति सभी से परिचित हो गए थे। उन्होंने अडवांस पत्र में अपने लेखों के माध्यम से, कौंसिल में मनोनीत सदस्य बनकर तथा पोर्टलुई नगरपालिका के सदस्य निर्वाचित होकर जिस विचारधारा का परिचय दिया था, उससे साफ जाहिर होने लगा कि वे भारतीय आप्रवासियों के सच्चे त्राता थे। वे इस देश की बहुसंख्यक जनता के नेता बन गये। भारतीय मूल के लोगों ने पाया कि मणिलाल डॉक्टर की भाँति ही डॉक्टर रामगुलाम उनके रक्षक हैं। यद्यपि डॉक्टर साहब सन् 1947 के मई मास में औपचारिक तौर पर लेबर पार्टी के सदस्य बने, तथापि वर्षों पहले से इस दल के नेताओं को अपना पूरा सहयोग दे रहे थे, क्योंकि यही एक ऐसा राजनीतिक दल था जो मजदूरों के पक्ष में आवाज उठाता था। इस दल का इतिहास बड़ा ही गौरवमय है।

बीसवीं शताब्दी में जितने भी आन्दोलन मॉरीशस में चलाए गये, उनमें सबसे महत्वपूर्ण रहा है— " लेबर मूवमेंट " यानी श्रमिक आन्दोलन। यह आन्दोलन 23 फरवरी 1936 में, मजदूर दल की स्थापना के साथ शुरू हुआ था। मॉरीशस लेबर पार्टी ही वह चाबी थी, जिससे हरेक के लिए स्वतन्त्रता, शांति, प्रगति, सामाजिक न्याय और समानता के दरवाजे खोले गये। दरअसल उससे अनेक क्रान्तिकारी परिवर्तन पैदा हुए। ट्रेड यूनियन तथा समाजवाद का जन्म, प्रजातान्त्रिक परिवर्तन, उपनिवेश बसाने वालों तथा पूंजीपतियों की तानाशाही के विरुद्ध आम लोगों का आन्दोलन, मॉरीशस की स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष आदि।

इस आन्दोलन के जरिये अनेक नेता तथा शहीद उत्पन्न हुए जिन्होंने अपने देश और देशवासियों के हित के लिए जीवन न्यौछावर कर दिये। उन्हीं में डॉ. कीरे, आँकचिल (Emmanuel Anquctil) गी रोजमों (Guy Rozemont) रेंगानादेन सीनीवासेन (Renganaden Seeneeuasen) तथा रामगुलाम थे।

यह आन्दोलन 23 फरवरी, 1936 में उस समय आरम्भ हुआ जब डॉ. कीरे ने शाँ दे मार्स, पोर्टलुई में एक सार्वजनिक जुटाव के दौरान मॉरीशस मजदूर दल की स्थापना की थी। उस समय से यह तीव्रगति से आगे बढ़ता रहा। इसी के जरिये घटनाओं की एक श्रृंखला शुरू हुई जिसके माध्यम से पूरे मॉरीशस के इतिहास को बदलना था।

मॉरीशस का मजदूर दल एक सदाबहार बट-वृक्ष की तरह बढ़ा और उसकी जड़ें मॉरीशस की इस धरती में फैलने लगीं, जिसमें उत्पन्न होकर, उसने शक्ति पाई थी। उसकी सिंचाई जनसाधारण के आँसू और खून-पसीने से हुई, उसका पोषण उसके रक्षकों के त्याग और कौशल से हुआ। इन सबके कारण वह कठिन स्थितियों में भी जीवित रहा। उसके तने को ट्रेड यूनियन, मजदूर आन्दोलन तथा पार्टी के आयोजनों आदि द्वारा बल मिला। रक्षा के लिए उठने वाली उसके नेताओं की बाहें, धरती को स्पर्श करती हुई शाखाओं की भाँति फैलीं। लोकमत की हवा में वे नेता हिलते तो थे, पर टूटते कभी नहीं थे। इस शोषण के पिशाच से जनता की रक्षा करने के लिए उन्होंने लोकतन्त्र और समाजवाद की छाया दी। मजदूर दल वह वृक्ष है जो पत्तों तथा लाल फलों से लदा है। ये पत्ते और फूल वास्तव में पार्टी की विचारधाराएँ हैं। उस पेड़ को समय के आघात भी सहने पड़े। उसके तने और शाखाओं को काटने के लिए अनेक आततायियों ने प्रतिक्रिया की कुल्हाड़ी चलाने की बारम्बार कोशिश की। उसे परिवर्तनों के तूफानों, चुनावों के भूकम्प आदि से गुजरना पड़ा। उसने शान्ति-पूर्वक समय एवं परिवर्तन के प्रभावों को सहा।

उस वृक्ष को विरोधों के झंझावात तथा आलोचना के पत्थरों के आघात सहने पड़े जो भूख, अधीरता एवं विपरीत स्थिति में राहियों द्वारा, उस पर चलाए गये। लताएँ जो उसे सहारा देने अथवा तबाह कर देने के लिए फैली आईं, उसी के साथ मिलकर एक हो गईं। दुनिया-भर के रंग-बिरंगे पक्षियों ने उसका गुणगान किया। परन्तु सूखी डालियों को छाँटना एवं उस पर फैलने वाली हानिकारक बेलों अथवा कीड़ों-मकोड़ों को नाश करना भी तो जरूरी है। वह वृक्ष लम्बे समय तक मॉरीशसवासियों के जीवन का आधार बना रहा और उनके जीवन का एक अंश हीं बन गया। अब हर हालत में उस वृक्ष को जीवित रखे रखना है, ताकि वह आने वाली पीढ़ियों का भी हित कर सके। उसकी चोटी पर मॉरीशस का राष्ट्रीय चौरंगा झंडा गर्व के साथ फहर रहा है।

मॉरीशस लेबर पार्टी की पहली बैठक निम्नलिखित सदस्यों की उपस्थिति में बुलाई गई थी :— अध्यक्ष के रूप में डॉ० कीरे थे और अन्यों में डॉ० जीतू, आसेनजी, ओशान, कारपेन बारबे और पंडित सहदेव थे। इस पार्टी का मुख्य ध्येय था

श्रमिकों को मतदान का अधिकार दिलाने का प्रयास करना। इसके लिए आवश्यक था कि मजदूरों की आवाज कौंसिल तक पहुँचती, उनका प्रतिनिधित्व होता। मजदूर दल ने सरकारी परिषद् में प्रतिनिधि भेजने का देशव्यापी आन्दोलन किया।

मॉरीशस लेबर पार्टी, ब्रिटिश लेबर पार्टी का ही एक नमूना था। उसने दुनिया की अन्य प्रसिद्ध पार्टियों की तरह ही प्रशंसनीय भूमिका निभायी। जहाँ तक देशवासियों को लोकतन्त्र और समाजवाद का सबक सिखाकर देश को स्वतन्त्रता दिलाने का प्रश्न है, वहाँ इस दल की तुलना 'इण्डियन नेशनल कांग्रेस' से की जा सकती है। इसके आदर्श और कार्यक्रम भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस के ही ढाँचे पर ढले थे। मॉरीशस मजदूर दल से पहले यहाँ कई छोटी-मोटी राजनीतिक टोलियों और आन्दोलनों का जन्म हुआ था जिनका संचालन संकीर्ण लोगों ने किया था, जो मुट्ठी-भर लोगों के हित के लिए ही प्रयत्नशील रहे थे। जो भी राजनीतिक जुटाव किये जाते थे, उनमें फ्रेन्च भाषी श्रोता ही उपस्थित होते थे। यही कारण है कि फ्रेंच भाषा में अखबार पढ़ सकने वाले लोग ही राजनीति में रुचि लेते थे। आम जनता को तो राजनीति से दूर ही रहना पड़ता था। गाँवों तक राजनीति के पहुँचने का तो सवाल ही पैदा नहीं होता था। मजदूर दल ने गाँव-गाँव पहुँचकर श्रमिकों में राजनीतिक चेतना पैदा की। जनसाधारण को अपने अधिकारों के प्रति सजग किया और सबकी रग-रग में संघर्ष का खून दौड़ा दिया।

मजदूर दल के विरोध में खड़े होने वाला प्रमुख दल "पार्ची मोरिसियें", था जो गोरों के अधिकारों की रक्षा के लिए कटिबद्ध था। इस दल को "तामिल यूनाइटड पार्टी" (Tamil United Party) से सहायता मिलती थी। बाद में मुसलमानों के हित के लिए कौमिते दाक्सियों मुजिलमां (Comite d'Action Musulma) का जन्म हुआ। लेबर पार्टी की कार्य-प्रणाली के विरोध में Independance Forward bloc (स्वतन्त्र अग्रगामी दल) सामने आया और अन्त में "मूवमाँ मिलिताँ मोरिसियें" (Mouvement Militant Mauricien) कमर कस कर मैदान में आया।

डॉक्टर शिवसागर रामगुलाम युगपुरुष थे। वे न्याय, समता स्वतन्त्रता के अग्रदूत थे। ऐसे लोग मॉरीशस के इतिहास में समय-समय पर अपनी करामात दिखा गये थे। अन्यों की सेवा में अपना जीवन न्यौछावर कर देने वालों में पिछली सदी के पादरी लावाल थे, जो देव-तुल्य थे। उन्होंने स्वतन्त्र हुए दासों को दिलासा देकर, उन पर प्रेम की वर्षा की थी। दूसरे त्राता रेमी ओलिये थे, जिन्होंने रंगीन तत्व के लोगों को सामाजिक अन्याय से बचाने के लिए अपनी आवाज बुलन्द की थी। वे इस वर्ग की जनता को कानूनी अधिकार दिलाने में सफल रहे। आदोल्फ दे प्लेवित्स भुलाये नहीं जा सकते, जिन्होंने भारतीय आप्रवासियों को क्रूर गोरे

मालिकों के शोषण और आतंक से बचाने के लिए अनेक खतरों का सामना किया था।

एमानुएल आँकचिल एक और व्यक्ति थे जिन्हें विधाता ने श्रमिकों की आँखें खोलने तथा ट्रेड यूनियन के जरिये उनकी शक्ति बढ़ाने के लिए भेजा था। ये अपने जीवन को न्यौछावर करके निष्काम भाव से सेवा करने वाले थे और इनका जीवन एक सन्त जैसा था। आँकचिल ने गाँवों से लेबर पार्टी को ले जाकर पोर्ट लुई में उन मजदूरों के बीच स्थापित किया जो जहाजों से माल उतारने का काम करते थे।

मॉरीशस के इतिहास में उपर्युक्त बड़े-बड़े नेताओं के बीच डॉ० शिवसागर रामगुलाम का एक अद्वितीय स्थान है। भारतीय राष्ट्रवादी नेताओं एवं लन्दन में ब्रिटिश मजदूर नेताओं के सम्पर्क से उन्होंने जो राजनीतिक ज्ञान और अनुभव प्राप्त किये, उनके बलबूते इस देश को विदेशी शासन से छुटकारा दिलाने तथा श्रमिकों को शक्कर पैदा करने वाले गोरों के अत्याचार से मुक्त करने में अपना जीवन लगा दिया। उनके बिना मॉरीशस भी, तीसरी दुनिया के अनेक देशों की तरह पिछड़ा हुआ होता। उन्होंने गरीबी, रोग, निरक्षरता, अन्याय, बेरोजगारी आदि समस्याओं को अपने घोर परिश्रम और सुप्रयास से दूर करके न्याय, शांति और स्वतन्त्रता के दर्शन कराये। अनेक कुरीतियों को समाप्त करके मॉरीशस की धरती पर अच्छाइयों का साम्राज्य स्थापित कर दिया। 1935 को लन्दन से आते ही, डॉ० रामगुलाम टापू भर के लोगों को इस बात का आश्वासन देने लगे कि अगर वे जाग जायें और अपने संकटों को समाप्त करने हेतु संघर्षरत हो जायें तो उनका जीवन सचमुच बेहतर बन सकता है। 1936 के फरवरी से डॉ० कीरे, पंडित सहदेव और फिर आँकचिल ने टापू का दौरा करके सार्वजनिक जुटावों के दौरान लोगों की दशाओं पर बोलना आरम्भ किया था। डॉक्टर रामगुलाम का मत था कि अगर श्रमिक मतदान देने का अधिकार हासिल करलें और अपने अधिकारों की रक्षा के लिए विधान परिषद् में अपने प्रतिनिधि भेज सकें तो इससे प्रजातन्त्र कायम किया जा सकता है। उन दिनों विधान परिषद् में केवल गोरे खेतिहर भरे पड़े थे, जिन्हें सिर्फ अपने हित की चिन्ता थी।

हम पहले लिख आये हैं कि 1937 में, मॉरीशस के इतिहास में पहली बार के लिए छोटे किसानों एवं मजदूरों ने एक हड़ताल की थी जिसका प्रभाव पूरे चीनी उद्योग पर पड़ा। फुलाक में गोलियाँ चलाई गई। चार मजदूर जान से जाते रहे। इन समस्याओं पर गौर करने के लिए श्री हूपर (Hcoper) महोदय की अध्यक्षता में एक जाँच आयोग की नियुक्ति हुई। परिणामस्वरूप यह पाया गया कि मजदूरों का जीवन

अति दुष्कर बन गया था। वे अच्छी तनख्वाह तथा मतदान देने का अधिकार माँग रहे थे। उन्हें अति कम वेतन दिया जाता था, जिसके कारण वे बड़ी ही गरीबी में जीते थे। शक्कर उद्योग से प्राप्त लग-भग सारा मुनाफा मिल-मालिकों की जेबों में चला जाता था। 1943 में पुनः एक दूसरी हड़ताल उत्तर प्रान्त में भड़क उठी, जिसके फलस्वरूप बेलवी आरेल में गोलियों की वर्षा हुई। श्री मूडी (Moody) की अध्यक्षता में नियुक्त किये गए एक दूसरे जाँच आयोग से यह पाया गया कि चीजों के भाव बहुत बढ़ गए थे, जबकि वेतन में कोई वृद्धि नहीं की गई थी। मूडी महोदय ने औपनिवेशिक सरकार को ट्रेड यूनियन्स को मान्यता देने की सलाह दी। इस बीच आँकचिल, पंडित सहदेव और रामनारायण ट्रेड यूनियन्स की शक्ति बढ़ाने में लगे हुए थे।

मॉरीशस और भारत

आर्य समाज और प्रोफेसर वासुदेव के आन्दोलन से हिन्दुओं में आत्म-विश्वास की भावना पैदा होने लगी थी। कुछ समय बाद भारतीय आप्रवासियों ने स्वामी विवेकानन्द की बुलन्द की हुई आवाज को सुना :– "उठो, जागो और जब तक मंजिल सामने न आ जाये, रुको मत।" भारतीय-आप्रवासी जाग गए थे। उनका उत्साह सभी संघर्षों में दृष्टिगोचर हो रहा था। राजनीतिक, ट्रेड यूनियन, सांस्कृतिक, सामाजिक, आध्यात्मिक आदि क्षेत्रों में एक नया युग जन्म ले रहा था। वे भारतीय स्वतन्त्रता-संग्राम पर ऐसी उत्सुकता से ध्यान दे रहे थे, जैसे कि वह उन्हीं का संघर्ष था। भारतीय-आप्रवासी अभी तक भारत से एकदम जुड़े हुए थे। लगभग सभी घरों में गांधी, नेहरू, सुभाषचन्द्र बोस जैसे राष्ट्रवादी नेताओं के चित्र लगे हुए थे। भारतीय आप्रवासी अपनी धर्म-संस्कृति पर गर्व का अनुभव करने लगे थे। जब से स्वामी दयानन्द सरस्वती के आर्य समाज ने हिन्दू नवजागरण आन्दोलन को शुरू किया था, तब से अनेक सामाजिक और धार्मिक परिवर्तन हो रहे थे। भारत में जब से राजा राममोहन रॉय ने ब्रह्म समाज की स्थापना की थी तब से प्रगति हो रही थी, उस नवजागरण आन्दोलन को स्वामी दयानन्द और स्वामी विवेकानन्द के सराहनीय कार्य से बढ़ावा मिला, वह और अधिक विकसित होने लगा। भारत अब पहले का न था, बल्कि एक नया जीवन शुरु कर रहा था। भारत में शुरू किए गये, नवजागरण-आन्दोलन ने सर्वत्र अच्छा राजनीतिक प्रभाव डाला, भारतीयों को स्वदेश में जगाया और विदेशों में भी। उससे लोगों में आत्मविश्वास पैदा हुआ। उनके सामने नये आदर्श रखे गये। उसने उनका चरित्र-निर्माण करके उन्हें अन्याय करने वाले शासकों के विरुद्ध संघर्ष करना सिखाया।

अब भारतीय आप्रवासी पहले के डरे-धमके वे अशिक्षित लोग नहीं थे

जिनसे कोई भी दुर्व्यवहार किया जा सकता था। उन्हें तो अब खुद पर विश्वास हो गया था। वे अपनी संस्कृति, अपने धर्म और भाषाओं पर गर्व करते थे। सामाजिक और धार्मिक सुधार-आन्दोलन ने उन्हें स्वतन्त्रता और समाज में समानता के महत्व की जानकारी दे दी थी। वे अब ऐसा नहीं सोचते थे कि यूरोपीय अथवा गोरे उनसे बेहतर थे। जिन अन्धविश्वासों ने भारतीय परम्पराओं को खराब किया था, उन्हें उन्होंने छोड़ दिया था। अंग्रेजी और फ्रेंच में शिक्षा पाकर तथा पाश्चात्य विचारों एवं नेताओं के राजनीतिक व्याख्यानों के माध्यम से भारतीय आप्रवासियों ने तर्क और ज्ञान पर आधारित विचारों को ग्रहण करना सीखा। अब वे वैयक्तिक स्वतन्त्रता और समाज में समानता पाने के लिए उत्सुक थे। पूरा भारतीय आप्रवासी समाज एक परिवर्तन के दौर से गुजर रहा था। वे बीते दिनों के पारम्परिक समाज से एक नूतन समाज की ओर बढ़ रहे थे। नई आशाएँ एवं चेतनाएँ उत्पन्न हुई थीं। भारतीय मूल के लोगों को आगे न बढ़ने देने के विचार से गोरे हर प्रकार की अड़चनें पैदा करते थे। अतः एक वर्ग-संघर्ष का उत्पन्न होना स्वाभाविक था। मजदूर वर्ग मुट्ठी-भर गोरे कृषकों का विरोध करने लगे।

सामाजिक और धार्मिक आन्दोलनों से लोगों को ज्यादा शक्ति प्राप्त हुई। सामाजिक और धार्मिक नेता, बैठकाओं, हिन्दी पाठशालाओं एवं अन्य संस्थाओं की स्थापना करने लगे।

भारतीय आप्रवासियों की महानता, उनकी शक्ति और सामर्थ्य का कारण उनकी वह पुरानी संस्कृति थी, जो पहले छिपी हुई थी। अब फलने-फूलने के लिए वह धरती फाड़कर निकलने लगी थी। यह एक अद्वितीय नवजागरण था। नवजागरण कहलाने का पहला कारण यह था कि उसने शिक्षित आप्रवासियों तथा धार्मिक नेताओं को अतीत की भारतीय संस्कृति के अध्ययन के जरिये नए विचार एवं प्रोत्साहन हासिल करने के लिए प्रेरित किया। इसके अलावा यह एक सुधार भी था, क्योंकि धर्म के क्षेत्र में अनेक सुधार किये गये। उदाहरणार्थ, बाल विवाह की कुरीति को जड़ से उखाड़ने का यत्न किया गया और विधवाओं के पुनर्विवाह को मान्यता दी गई। इसी तरह शिक्षा पर जोर दिया गया, खासकर स्त्री-शिक्षा पर। जात - पाँत की कुप्रथा को मिटा देने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी गई। हर हिन्दू को धार्मिक ग्रन्थ पढ़ने का समान अधिकार दिया गया। आर्य समाज के अनुयायी हिन्दू धर्म पर गर्व करते थे। जिन हिन्दुओं ने इस्लाम और ईसाई मत को अपना लिया था, उनकी शुद्धि करके पुनः उन्हें हिन्दू बनाया गया। भारतीय मूल के लोगों ने चन्द बातों के महत्व का अनुभव किया। अपने धर्म, भाषा और संस्कृति पर स्वाभिमान, अपने अतीत के गौरव वेद, उपनिषद, भगवद् गीता, रामायण आदि में निहित संदेशों, उपदेशों और आदेशों की महानता आदि का. कृष्ण, बुद्ध, राजा-

राममोहन रॉय, स्वामी दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द और महात्मा गांधी जैसे महान् धार्मिक नेताओं की ओर भी उनका ध्यान गया।

मॉरीशस के शिक्षित वर्ग ने ब्रिटेन से राजनीतिक और सामाजिक सिद्धान्तों के बारे में काफी कुछ सीखा। जिन लोगों ने ब्रिटेन में शिक्षा पाई थी, वे ब्रिटेन के प्रचलित मतों के प्रवाह से परिचित हुए। हम पहले ही यह देख चुके हैं कि किस प्रकार डॉ० रामगुलाम ने ब्रिटिश लेबर पार्टी के आन्दोलन (British Labour Party Mouvement) में हिस्सा लिया था। डा० लोरॉं, डा० कीरे, पेजानी, आंकचिल, रोजमों और सीनीवासेन सब के सब ने ब्रिटिश लिबेरल पार्टी और मजदूरों के आन्दोलनों से राजनीति सम्बन्धी ज्ञान और अनुभव पाया था। ब्रिटेन में व्याप्त प्रवृत्तियाँ वैयक्तिक स्वतन्त्रता, सहिष्णुता, लोकतन्त्र, ट्रेड यूनियनवाद, समाजवाद और विकास, मॉरीशस के राजनीतिक नेताओं की गतिविधियों के माध्यम से श्रमिक वर्ग तक पहुँच रहा था। परिणामस्वरूप मॉरीशस में भी लोकमत उसी तरह बदल रहा था, जैसे कि ब्रिटेन में। भारत ने आजादी की राह को अपना लिया था। फलतः मॉरीशस में भारतीय मूल के लोगों को भारत के स्वतन्त्रता सग्राम से सहानुभूति थी पंडित वासुदेव विष्णुदयाल जैसे कुछ नेता तो गाँधी के अहिंसात्मक तरीके को अपनाकर आजादी के लिए आन्दोलन शुरू कर चुके थे।

दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान स्वेज नहर (Suez Canal) के बन्द हो जाने से तथा जापान द्वारा दक्षिण पूर्व एशिया में स्थित यूरोपीय उपनिवेशों के जब्त होने से मॉरीशस का महत्व युद्ध कौशल की दृष्टि से बढ़ गया था। अब भारत को ललकारा जा रहा था और इसके साथ हिन्द महासागर को भी जब्त करने का प्रयास किया जा रहा था। जापानियों के इस ललकार से सावधान होकर उन्हें रोकने के लिए ब्रिटिश वालों ने वाक्वा शहर में एक फौजी अड्डा स्थापित किया। ब्रिटिश वालों की सुरक्षा के लिए 1945 से ही मलेरिया को जड़ से उखाड़ दिया गया था। प्रधान मन्त्री एटली (Atlee) की ब्रिटिश मजदूर सरकार मॉरीशस के हित की ओर ज्यादा ध्यान देने लगी थी, खासकर जब से 1949 में भारत ने अपनी आजादी हासिल की थी। अत. दूसरे विश्व युद्ध की समाप्ति से हा मॉरीशस में जन जीवन बड़ी तीव्रता से बदलने लगा।

यहाँ के मजदूर नेताओं ने जनजागरण के इस काल से लाभ उठाया। तत्कालीन राज्यपाल, सर मार्केंजी केनेडी (Sir Donald Mackenzie Kennedy) ने मजदूर दल के नेताओं से बातचीत करके संवैधानिक सुधार करने की इच्छा प्रकट की।

स्मरण रहे कि अब तक डॉ० कीरे आम चुनाव में असफल होकर निराश-

हताश हो गए थे और मजदूर दल को त्याग चुके थे। उनके अलग हो जाने से मजदूर दल में जो खाई पैदा हो गई थी, उसे डॉ० रामगुलाम ने पाटा। सन् 1947 के अन्त तक वे मजदूर दल का नेतृत्व करने लग गये थे। उनके पीछे भारतीय मूल की समस्त जनता थी।

मतदान के लिए संघर्ष

सन् 1885 से पूर्व सरकारी परिषद् का गठन मनोनीत सदस्यों की नियुक्ति द्वारा होता था। राज्यपाल इन मनोनीत सदस्यों का चुनाव भूसम्पत्ति वाले धनिक गोरों और मुख्य व्यापारियों के बीच पाये जाने वाले लोगों में से ही करते थे। किन्तु सन् 1882 में लोईस राउल (Lois Raoul), सर विरजिल नाज (Sir Virgil Naaz) और सर विल्येम न्यूटन (Sir William Newton) ने एक आन्दोलन चलाया कि निर्वाचन-प्रणाली द्वारा ही सरकारी परिषद् में प्रतिनिधि भेजे जायें। सर सेंलिकुर आँतेल्म (Sir Cenlicour Antelm) ने इस आन्दोलन का घोर विरोध किया। किन्तु राज्यपाल पोप हेनेस्सी (Pope Hennessi) ने संवैधानिक सुधार का समर्थन किया फलतः निर्वाचन-प्रणाली पर आधारित नया संविधान बनाया गया जिसकी निम्नलिखत विशेषताएँ थीं :—

1. सरकारी परिषद् का गठन इस प्रकार हो : राज्यपाल, आठ एक्स ऑफिसियो मेम्बर (Ex-officio Member), नौ मनोनीत सदस्य और दस निर्वाचित सदस्य।

2. एक्स ऑफिसियो मेम्बर (पदेन सदस्य) वरिष्ट सैनिक अफसरों के बीच के व्यक्ति हों जिनमें औपनिवेशिक सचिव(Colonial Secretary), प्रोक्यूरर जनरल (Procurer general), रिसिवर जनरल (Receiver general), ऑडिटर जनरल (Auditor general), कलक्टर ऑफ कस्टम्स (Collector of Customs), प्रोटेक्टर ऑफ इमिग्रेन्ट्स (Protector of Emigrants) और सरवेयर जनरल (Surveyor General) हों।

3. मनोनीत सदस्यों को कोई भी सरकारी नौकरी करने का अधिकार न हो।

4. सदस्यों का चुनाव एक सीमित मताधिकार प्रणाली के अन्तर्गत किया जाय।

5. सभी सदस्यों में, एक्स-ऑफिसियो मेम्बरों को विशेष स्थान ग्रहण करने का अधिकार हो।

6. टापू के नौ जिलों में नौ चुनाव-क्षेत्र हों।

7. पोर्टलुई जिले से दो सदस्य निर्वाचित किए जायें और शेष आठ जिलों से एक-एक सदस्य को चुना जाय।

8. केवल वही पुरुष मतदान का अधिकारी हो जिसे निम्नलिखित अर्हताएँ प्राप्त हों :—

(अ) इक्कीस वर्ष का वयस्क पुरुष।

(आ) जो कानून द्वारा दोषी न पाया गया हो।

(इ) जो ब्रिटिश प्रजा हो।

(ई) जो निम्न शर्तों के आधार पर कम से कम तीन वर्ष तक टापू में निवास कर चुका हो :—

1. जो पिछले छः महीनों से वार्षिक तीन सौ रुपये की अचल सम्पत्ति का मालिक रहा हो।

2. जो किसी भी अचल सम्पत्ति के लिए वार्षिक तीन सौ रुपये का किराया चुकाता हो।

3. जिसके मुख्य व्यवसाय का स्थान चुनाव क्षेत्र वाले जिले में हों और जिसके पास कम से कम तीन हजार रुपये की अचल सम्पत्ति हो।

4. जिसे कम से कम छः सौ रुपये की वार्षिक तनख्वाह प्राप्त होती हो।

5. जो वर्ष में कम से कम दो सौ रुपये का लाइसेंस-कर चुकाता रहा हो।

उपर्युक्त संविधान से उस युग के पूंजीपतियों के दिलोदिमाग से निकले विचारों का पूरा परिचय मिलता है। पूँजीपति समझते थे कि साधारण जनता केवल उनकी सेवा करने के लिए पैदा हुई थी इसलिए उन्होंने एक ऐसे सविधान का निर्माण किया जिसके द्वारा उनकी पूरी भलाई हो सकती थी। यही कारण है कि उस संविधान ने इस टापू की बागडोर दीर्घकाल तक गोरों के हाथों सौंप दी। सन् 1885 के संविधान के आधार पर जो चुनाव सन् 1886, 1891, 1901, 1911, 1916, 1922, 1926, 1931 और 1936 में हुए, उनमें श्रमिक वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाला कोई भी व्यक्ति निर्वाचित न हो सका। 1909 के राजकीय आयोग को अपने प्रतिवेदन में कहना पड़ता था कि मॉरीशस की सरकारी परिषद् देश की दो तिहाई जनता का प्रतिनिधित्व कर ही नहीं सकती, क्योंकि उस परिषद् में बहुसंख्यक जनता का प्रतिनिधित्व नहीं था।

सन् 1925 में 1885 के संविधान का पुनरावलोकन करने का एक उत्साह-हीन आन्दोलन शुरू किया गया। उद्देश्य था सीमित मताधिकार में परिवर्तन लाना

ताकि कौंसिल में निर्वाचित प्रतिनिधियों की शक्ति बढ़ाई जा सके जिससे व्यवस्थापिका की शक्ति कार्यपालिका से अधिक हो। इस आन्दोलन के आरम्भिक योद्धाओं में श्री आलफ्रेड जेले (Alfred Jaley) और रेनोल्ड रोहाँ (Reynolds Rohan) थे। रोहाँ इस मत के थे कि भारतीय मूल के मतदाताओं का एक अलग रजिस्टर रखा जाय ताकि उनकी संख्या पर नियन्त्रण रखा जा सके।

रोजे पेजानी (Roger Pezzani) उस समय के एक प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ थे जो प्लैन विल्येम्स क्षेत्र से निर्वाचित हुए थे। उन्होंने संविधान के सुधार-आन्दोलन में सजीवता से भाग लिया। दूसरे प्रसिद्ध राजनीतिक नेता डॉक्टर एडगाअ लोराँ थे जिन्होंने कहा था—"हम सब सुधारवादी हैं।" रोजे पेजानी ने बड़ी निर्भयतापूर्वक नई व्यवस्थापिका सभा में प्रस्ताव किया—"सरकारी परिषद् इस मत का है कि यह उपनिवेश अब इतना प्रौढ़ हो चुका है कि इसे स्वायत्त शासन दिया जाना चाहिए।" उन्होंने आगे कहा कि सिलन (Ceylon), बारबादोस (Barbados), बहामास (Bahamas), साइप्रेंस (Cyprus), मालता और जमाइका आदि देश स्वायत्त शासन का लाभ ले रहे हैं। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि एक ऐसी सरकार की आवश्यकता है जिसमें विशिष्ट राजनीतिज्ञ हों और वे जनता के सभी वर्गों से निर्वाचित किये गये हों। उन विशिष्ट राजनीतिज्ञों के बीच उन लोगों की भी आवश्यकता है जो राजनीति में अब पदार्पण कर रहे हों। उन्होंने मनोनीत सदस्यों के लिए स्वतन्त्र मत की आवश्यकता पर जोर दिया।

डॉक्टर एडगाअ लोराँ ने बड़ी योग्यतापूर्वक उस प्रस्ताव पर बहस करते हुए उसका समर्थन किया तथा निर्वाचित सदस्यों के पक्ष में कहा कि प्रमुखता उन्हीं को मिलनी चाहिए। लेकिन प्रस्ताव गिर गया। लाला और गजाधर ने भी प्रस्ताव के विरुद्ध में अपना मत दिया।

बाद में कौंसिल के कुछ निर्वाचित और मनोनीत सदस्यों का सहयोग पाकर डॉक्टर लोराँ ने 15 फरवरी, 1932 को संविधान के सुधार सम्बन्धी विषय को पुनः संसद में उठाया। उन्होंने निर्वाचित सदस्यों की शक्ति में वृद्धि करने की माँग की। लन्दन में राज्य सचिव को एक मेमोरेंडम भेजा गया। फलतः मॉरीशस के एक शिष्टमण्डल को लन्दन आने की स्वीकृति दी गई। शिष्टमण्डल में राजकुमार गजाधर और जुल लैक्लेजियो थे। बाद में पी. राफ्रे (P. Raffray), डा. एडगाअ लोराँ (Edgar Laurent) और जी. डी. एम. आचिया (G. D. M. Achia) भी शिष्ट मंडल से लन्दन में आ मिले। पहली बार आचिया और डा. लोराँ से मिलने का अवसर युवक रामगुलाम को लन्दन में ही मिला था।

शिष्टमण्डल ने औपनिवेशिक सचिव के सामने अपना विषय रखा। सचिव महोदय के मतानुसार मॉरीशस ने स्वायत्त शासन के लिए अब तक प्रौढ़ता प्राप्त नहीं की थी। उन्होंने बस केवल इतनी सुविधा प्रदान की थी अब से राज्यपाल द्वारा दो निर्वाचित सदस्य कार्यपालिका की बैठक के सदस्य नियुक्त किये जायेंगे। स्मरण रहे कि कार्यपालिका के सदस्य अब तक केवल सरकार द्वारा नियुक्त व्यक्ति ही थे, उसमें निर्वाचित सदस्य नियुक्त नहीं किये जाते थे।

मनोनीत सदस्य बनने पर डॉक्टर रामगुलाम हर सम्भव अवसर पर कौंसिल के अप्रजातांत्रिक तरीके का खण्डन करते रहे, कौंसिल में और कौंसिल के बाहर समाचारपत्रों पर भी। डॉक्टर साहब ने बताया कि कौंसिल में जो बहस होती है, उसका सम्बन्ध सर्वहारा वर्ग से कतई नहीं है। एक मनोनीत सदस्य होने के बावजूद भी सरकार की आलोचना करते थे और कौंसिल में एकमात्र विरोधी सदस्य थे। 13 जुलाई, 1943 को उन्होंने भाषण देते हुए कहा, "मैं दृढ़तापूर्वक कह सकता हूँ कि यदि हमारे संविधान ने इस कौंसिल के सदस्यों के चुनाव-हेतु एक अन्य पद्धति अपनायी होती तो बजट पर वाद-विवाद करने का एक अन्य तरीका होता। बजट के सम्बन्ध में जनता का जो विचार है, वही सरकार को सुनने को मिलता। जनता यह देखना चाहती है कि सरकार उसके मत का किस प्रकार आदर करती है।........सर, मेरे विचार में सरकार का प्रथम कर्तव्य यह होना चाहिए कि वह जनता की आवाज को सुने, उस पर ध्यान दे........इस कौंसिल में श्रमिक वर्ग द्वारा निर्वाचित एक भी प्रतिनिधि नहीं है।"

संविधान पर पुनर्विचार करने की जो लम्बे अर्से से माँग थी, वह जोर पकड़ रही थी। वयस्क मताधिकार को व्यापक बनाने की माँग, सन् 1937, 38 और 43 की हड़तालों का प्रभाव, मजदूर दल का संघर्ष, अखबारों पर तथा कौंसिल में डॉक्टर रामगुलाम का सरकार पर आक्रमण द्वितीय विश्वयुद्ध का प्रभाव, भारत का स्वतन्त्रता-संग्राम, इंग्लैण्ड में मजदूर दल और क्लेमाँ आटली (Clement Atlee का सत्ता में आना आदि तमाम घटनाओं ने राज्यपाल सर माकेन्जी कन्नेडी (Sir Mackenzie kennedy) को 13 फरवरी, 1945 को संविधान पर पुनर्विचार करने पर विवश कर दिया।

राज्यपाल के प्रस्ताव

राज्यपाल सर माकेन्जी केनेडी मान गये कि सन् 1885 का संविधान पुराना हो चुका था। उस संविधान के अनुसार सभी समुदायों के वयस्क व्यक्तियों को मतदान देने के अधिकार से वंचित रखा गया। अतः उन्होंने राज्य सचिव के सामने निम्नलिखित प्रस्ताव रखे :—

1. कौंसिल में तीन एक्स ऑफिसियो (Ex-Officio) : औपनिवेशिक सचिव (Colonial Secretary), प्रोक्यूरर जनरल (Procuror General) और वित्त सचिव (Financial Secretary) रखें जायें ताकि देश की आर्थिक व्यवस्था पर उचित कार्य हो सके।

2. 6 गैर सरकारी (unofficial) अर्थात् निर्वाचित सदस्य और आठ मनोनीत सदस्य रखे जायें।

राज्यपाल महोदय ने कहा कि कोई भी समुदाय ऐसा महसूस न करे कि कौंसिल में उसका प्रतिनिधित्व नहीं हो रहा है। उन्होंने आगे कहा कि इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि मॉरीशस की आबादी अनेक समुदायों में विभाजित है। उन्होंने यह भी कहा कि वयस्कों को मतदान का अधिकार देना ही अन्तिम उद्देश्य होना चाहिए। उस समय के लिए, राज्यपाल ने प्रस्ताव किया कि मतदान का अधिकार पाने के लिए निम्नलिखित अर्हताएँ आवश्यक हैं :—

1. वार्षिक दो सौ रुपये के मूल्य की अचल सम्पत्ति वाले व्यक्ति को वयस्क मताधिकार प्राप्त हो अथवा वह व्यक्ति जो पच्चीस रुपयों का मासिक वेतन चुकाता हो।

2. अथवा कोई व्यक्ति जो पच्चीस रुपये का मासिक वेतन पाता हो।

3. जिसके पास छठी कक्षा का प्रमाण पत्र हो।

राज्यपाल की घोषणा के फलस्वरूप अनुदार पंथियों ने अपने मेमोरैंडम में कहा—"रंगीन तत्व के लोगों को पर्याप्त सुरक्षा दिये बिना जो संविधान भारतीय समुदाय को राजनीतिक प्रमुखता देना चाहेगा, वह घोर विरोध से बच नहीं सकेगा।"

दो शताब्दियों तक देश की बागडोर को अपने हाथों में थामे रखने और देश की सत्ता पर एकाधिकार रखने के बाद नये संविधान के नाम से गोरों का कुलीनतन्त्र शंकित हो उठा। कुलीनतन्त्र के समर्थकों ने साम्प्रदायिक तरीके को अपनाकर प्रत्येक जाति के मतदाताओं का अलग-अलग रेजिस्टर तैयार करने की माँग की। यह विचार डॉक्टर रोहाँ ने सन् 1937 में ही हूपर कमीशन (Hooper Commission) के सामने प्रस्तुत किया था कि मतदाताओं के तीन अलग-अलग रेजिस्टर हों जिनसे कौंसिल के लिए सत्रह सदस्यों का चुनाव हो। इनमें बारह ईसाई, तीन हिन्दू और दो मुसलमान हों, डॉक्टर एडगाअ लोराँ भी अनुदारपंथी बन गये थे। उन्होंने राउल रिवेट तथा राफ़े के साथ डॉक्टर रोहाँ की माँग का समर्थन किया जो साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व पर आधारित थी।

पहली परामर्श समिति (First Consultative Committee)

दरअसल भारतीय आप्रवासियों को मतदान देने के अधिकार से वंचित करके उन्हें निम्न स्तर पर रखने का ही सारा विचार था। किन्तु 1945 तक भारतीय मूल के लोगों ने "अपना निजी न्यूटन और नाज" को उत्पन्न कर लिया था जैसा कि पेजानी (Pezzani) ने चाहा था। डॉक्टर रामगुलाम अनुदारपंथियों की करतूतों को अच्छी तरह से समझते थे। वे लोग दिल से भारतीयता को नहीं चाहते थे और उलटे डॉक्टर साहब पर साम्प्रदायिक एवं अलगाववादी होने का दोषारोपण करते थे। डॉ० साहब ने प्रेस एवं परामर्श-समिति (Consultative Committee) में इन अरोपों को झुठलाया। उन्होंने 22 जुलाई, 1944 की कौंसिल की बैठक में कहा—

"इस देश के श्रमिक वर्गों और उनके साथ छोटे किसानों एवं छोटे व्यापारियों पर साम्प्रदायिक अलगाववादी होने का दोष लगाया जाता है।.... । इसका उत्तर मैं यह देता हूँ कि वे न पृथकत्वादी हैं और न ही साम्प्रदायिक विचारधारा से प्रभावित। भारत अथवा किसी देश से इस देश को जोड़ने के लिए उन्होंने कभी भी किसी प्रकार का आन्दोलन शुरू नहीं किया है। मुझे यह कहना ही पड़ेगा कि अन्य सम्प्रदायों के बारे में ऐसी बात, कही नहीं जा सकती। युद्ध का समय हो अथवा शान्ति का, वे श्रमिक अपने आदर्शों के प्रति सच्चे रहे हैं। कड़ी मेहनत करके तथा सकटों को झेलते हुए इस टापू को उन्होंने समृद्ध किया है, इसके हित और कल्याण के प्रति उनमें हमेशा श्रद्धा रही है।"

जिस सत्ता, सम्पत्ति और प्रभाव का आनन्द अल्पमत वाले शासकों ने लम्बे समय तक उठाया था, उसे खोने का जो उनका गहन और छिपा हुआ भय था, वास्तव में उससे डॉक्टर रामगुलाम अनभिज्ञ नहीं थे। सर सेलेंकूर (Sir Celincourt) ने जिसे "इण्डियन पेरिल" (Indian Peril) का नाम दिया था, उससे वे निश्चय ही चिन्तित थे। कौंसिल तथा परामर्श समिति में जो भारतीय मूल के लोग थे, उनमें डा. रामगुलाम के साथ आचिया और ए. गजाधर थे जिन्होंने उन सभी योजनाओं और बहानों का सामना किया, जिनका प्रयोग भारतीय मूल के श्रमिकों एवं कारीगरों को मतदान देने के अधिकार से वंचित रखने के लिए किया जाता था। साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व, सम्पत्ति के आधार पर वोट देने का अधिकार तथा मताधिकार के लिए छठी के प्रमाण पत्र की आवश्यकता आदि प्रस्तावों का डॉ रामगुलाम ने विरोध किया। राज्यपाल ने इस बात को स्वीकार किया कि "the electoral mechanism was out of date, archaic and creaking." अर्थात् चुनाव करने के जो तरीके थे, ये घिसे-पिटे, पुराने थे और चरमरा गये थे।

परन्तु सर मार्केंजी केनेडी (Mackenzie Kennedy) की समस्या थी, सदस्यों के विभिन्न विचारों को समझकर एक फैसला करना, ताकि वे मजदूर दल को उचित प्रतिनिधित्व दे सकें, क्योंकि भारतीय आप्रवासियों के समस्त वोट मजदूर दल के ही भाग के थे। उन्हें सभी सम्प्रदायों के लिए सही प्रतिनिधित्व को कायम करना था। परामर्श समिति के वाद-विवादों के दौरान जो भिन्न-भिन्न मत व्यक्त किये गये थे, उनसे राज्यपाल पूरी तरह अवगत हो गये थे। उन्होंने कौंसिल को बताया कि संविधान में परिवर्तन लाने के प्रश्न को लेकर वे लन्दन के लिए रवाना होंगे ताकि राज्य-सचिव (Secretary of State) के सामने वे विभिन्न बयानों को रख सकेंगे।

सर मार्केंजी ने 1946 में राज्य-सचिव से लन्दन में मुलाकात की। राज्य-सचिव ने पाया कि राज्यपाल मार्केंजी उनके सामने जिन परिवर्तनों के लिए प्रस्ताव रख रहे थे, वे उनसे कहीं ज्यादा प्रभाव वाले सुधारों की उम्मीद करते थे।

अतः सर मार्केंजी (Sir Mackenzie) ने न साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व पर हठ किया और ना ही सम्पत्ति के आधार पर वोट देने की बात पर। जिन विषयों पर डॉक्टर रामगुलाम ने परामर्श समिति मे बल दिया था उन्हीं विचारों पर अधिक जोर दिया। परन्तु मताधिकार के लिए छठी कक्षा के प्रमाण पत्र वाली बात को उन्होंने नहीं छोड़ा। चन्द बातों की सिफारिश भी की।

जैसे–1. व्यवस्थापिका और कार्यपालिका सभा में परस्पर निकट का सम्बन्ध होना चाहिए। 2. तीन "एक्स आफिसियो" अर्थात् पदेन सदस्यों के अतिरिक्त बाकी सरकारी व्यक्तियों को व्यवस्थापिका सभा से हटाया जाय। 3. व्यवस्थापिका सभा में योग्य मनोनीत सदस्यों का एक सुदृढ़ गुट स्थापित किया जाय। 4. मताधिकार की पत्रिका प्राप्त करने के लिए सम्पत्ति अथवा आय वाली अर्हतायें हटाई जायें तथा साधारण साक्षरता प्राप्त व्यक्ति, जो अपना नाम पढ़ और लिख सके, को मताधिकार दिया जाय। 5. व्यवस्थापिका सभा में सभी सदस्यों में से निर्वाचित सदस्यों का ही बहुमत हो।

डॉक्टर रामगुलाम कहते हैं—"पहली परामर्श समिति का कार्य हमारे लिए एक कठोर संघर्ष रहा। यह भी अब जाहिर था कि संविधान पर ध्यान देने के कार्य को ब्रिटिश औपनिवेशिक दफ्तर का सहयोग प्राप्त होगा। इस नीति को राज्य सचिव, माल्कोम माकदोनाल्ड (Malcolm Macdonald) ने सात दिसम्बर, 1938 को हाऊस आफ कॉमन्स (House of Commons) में अच्छी तरह से घोषित कर दिया था।

"ब्रिटिश साम्राज्य का महान उद्देश्य है कि साम्राज्य की सभी प्रजाओं में धीरे-धीरे स्वतन्त्रता का विस्तार करना, चाहे वे दुनिया के किसी भी कौने में रहती हो। इस स्वतन्त्रता का विस्तार एक क्रमिक विकास की रीति है। कुछ देशों में यह अन्य मुल्कों की अपेक्षा अधिक तीव्र है। साम्राज्य के कुछ अंशों में, इस विकास की रीति को पूरा कर दिया गया है।"

साम्राज्य के अनेक उपनिवेशों को स्वायत्त शासन प्राप्त हो चुका था। सिलोन को 1931 से सभी वयस्कों को मतदान देने का अधिकार प्राप्त हो गया था और इसके साथ-साथ अपने निजी मामलों पर अमल करने की छूट भी। 1946 तक सिलोन को नया सविधान मिल गया था। जमाइका और बारबादोस आंशिक स्वायत्त शासन का लाभ ले रहे थे और भारत को पूरी आजादी मिलने ही वाली थी।

लेकिन नये संविधान के लिए जो लड़ाई थी, उसमें अभी विजय नहीं मिल पाई थी। राज्य सचिव ने संविधान की रूपरेखा में अनुदारपंथी लोगों को और ज्यादा बातों की छूट दे दी। चुनाव के विषय में उन्होंने यह स्वीकार किया कि वोट देने के लिए छठी कक्षा का प्रमाणपत्र होना चाहिये। साथ ही 200 से 300 रुपये का वार्षिक किराया चुकाने की बात को मान्यता मिली। स्त्रियों को वोट देने के अधिकार के लिए सिफारिश करते समय वे कार्यपालिका सभा के पक्ष में थे जिसमें ज्यादा आफिसियल सदस्य थे।

डॉक्टर रामगुलाम नये संविधान की प्रस्तावित रूपरेखा से सहमत नहीं हुए। वे चाहते थे कि देश के प्रत्येक वयस्क को बिना भेदभाव के मतदान का अधिकार दिया जाय। पूंजीपतियों को इस बात का भय था कि कहीं सबको मताधिकार देकर, उनके कुलीन तन्त्र का खात्मा न कर दिया जाय। मॉरीशस में भारतीय मूल के लोग ही बहुसंख्यक थे। सबको मताधिकार देने का मतलब था बहुसंख्यक हिन्दुओं के हाथ में शासन की बागडोर सौंप देना। भला जो हिन्दू पिछली एक शताब्दी से गोरे पूंजीपतियों के खेतों में गुलामी करते आ रहे थे, अब उन्हें वे गोरे देश के शासक वर्ग के रूप में कैसे स्वीकार कर सकते थे, वे श्रमिक तो केवल खेतों में काम करने के लिए ही पैदा हुए थे।

29 जनवरी, 1947 को सरकारी परिषद् में डॉ. रामगुलाम ने वयस्क मताधिकार पर भाषण देते हुए कहा : "वयस्कों को मतदान देने के अधिकार तथा उस अधिकार की प्राप्ति के लिए शैक्षणिक योग्यता पर बहुत-कुछ कहा गया है। बहुत लोग चाहते हैं कि वयस्कों को वोट देने का अधिकार मिले और बहुत ऐसे लोग भी हैं जो नहीं चाहते हैं। हमें एक समझौता करना चाहिए। हम इस देश में विदेशी

नहीं हैं। श्रमिक लोग वे व्यक्ति हैं, जिन्होंने इस देश को अपना घर बना लिया है। वे हैं तो भारतीय, पर यहाँ रहते और काम करते हैं। उनका अन्त भी यहीं पर होगा। वे विदेशी नहीं। वे सरकार के नये कौंसिल में प्रतिनिधित्व की माँग करते हैं। यह माँग न्यायसंगत है। उनकी तरफ से हमने इस कमिटि में वयस्क मताधिकार पर जोर दिया। हम समझौता करने को तैयार हैं, अगर उससे विचारों की एकता हमारे देश में आ सके और उस एकता से देश का वास्तविक विकास हो सके। हम चाहते हैं कि हमारे लोगों को अपना प्रतिनिधित्व कराने का मौका मिले, भले ही तनख्वाह और वर्तमान प्रगति कम हो जाये। हम यह नहीं चाहते कि सरकार के इस कौंसिल में किसी वर्ग का प्रतिनिधित्व न हो, चाहे अपना प्रतिनिधित्व करने वालों ने हमारे बारे में कभी नहीं सोचा हम मिलजुल कर एक-दूसरे के साथ सहयोग करते हुए रहना चाहते हैं और जहां तक बन पड़े इस देश के राजनीतिक विकास में सहयोग करना चाहते हैं।

मतदान का अधिकार तथा शिक्षा एक हद तक साथ चलती है। डॉ. ड्रमोड शिल्ड्स (Dramond Shields) ने कहा है कि उपनिवेशों में शिक्षा का अभाव रहा है, क्योंकि जहाँ तक जनसाधारण की जरूरी शिक्षा का सवाल है, शासक वर्ग ज्यादा अनुदार और लापरवाह रहे हैं। इस प्रकार ये लोग पूरी नागरिकता की योग्यता नहीं रखते जैसा कि आज हममें से बहुत इसकी उम्मीद करते हैं। लेकिन डॉ. शिल्ड्स ने ये भी कहा है कि निरक्षरता वोट देने की क्षमता में कोई बाधा उपस्थित नहीं कर सकती। निरक्षरता का मुकाबला करने के लिए वयस्कों को मतदान का अधिकार एक बेहतर साधन है, क्योंकि जनसाधारण की शिक्षा की माँग सर्वत्र प्रबल है। यह सच है कि राजनीतिक ज्ञान और अनुभव आरम्भ में मतदाताओं को एक प्रकार की अड़चन में डाल सकता है, लेकिन इससे कोई क्रान्ति नहीं आयेगी, क्योंकि इसकी सम्भावना है कि वे वैसे ही लोगों को वोट देंगे जो पहले सत्ता में थे। वे गलतियाँ करेंगे जिस प्रकार शिक्षित मतदाता भी कभी-कभी करते हैं। पर वे अपनी गलतियों से कुछ सीखेंगे और धीरे-धीरे राजनीतिक कौशल का भण्डार जुटा लेंगे। डा. शिल्ड्स ने यह भी कहा है कि निर्वाचक राजनीतिज्ञों के लिए जरूरी है। उन्हें अपने मालिकों को शिक्षा, स्वास्थ्य-सुविधाएँ, रोजगार, यातायात और एक सभ्य जीवन के लिए जरूरी अन्य सभी अंगों पर विचार करते हुए राजनीतिज्ञों को निर्वाचकों का भी ध्यान रखना चाहिए। हम यह देखना चाहते हैं कि मॉरीशस में हर स्त्री और पुरुष को उनका अधिकार मिले।

उस व्यक्ति पर ध्यान देना चाहिए क्योंकि वह एक ईमानदार श्रमिक है, एक अति महत्वपूर्ण आर्थिक कार्य में लगा हुआ है। जो भी स्त्री अथवा पुरुष

इस टापू में प्रचलित किसी भी भाषा में चुनाव सम्बन्धी फार्म को भर सके, उसे मतदान देने का अधिकार मिलना चाहिए।

वयस्कों को मताधिकार देने का मतलब रहेगा निर्वाचकों की संख्या में वृद्धि, इससे एक ऐसे वर्ग के लोगों को वोट देने का अधिकार मिलेगा, जिनका प्रतिनिधित्व बिल्कुल नहीं हुआ है, क्योंकि निर्वाचन करने के योग्य वे समझे ही नहीं गये हैं, उन्हें ऐसा कोई मौका कभी मिला ही नहीं है। परन्तु अब उन्हें वह मौका मिलना चाहिए। यही इस समस्या का एकमात्र हल है। हमारे साथी जो आज हमारा विरोध कर रहे हैं, उनकी तरह हम अतीत से जुड़े नहीं रह सकते हैं। वे कहेंगे कि मताधिकार की इस प्रकार की योग्यता स्वीकार करने से अपार जनसंख्या का प्रतिनिधित्व हो सकता है, जिससे होगा यह कि सरकार के कौंसिल के महत्वपूर्ण लोग भुलाये जा सकते हैं। इतिहास की दृष्टि से यह सच नहीं ठहर सकता, क्योंकि जिस भी देश के संविधान में सुधार हुआ है, लोगों ने सर्वदा अनुदार वृत्ति से सामना किया है। इस उपनिवेश का इतिहास बताएगा कि हालाँकि कुछ वर्ग या सम्प्रदाय भी कुछ जिलों में बहुसंख्यक है, फिर भी उन्होंने चुनाव में इसका लाभ उठाकर साम्प्रदायिक ढंग से निर्वाचन नहीं किया। सरकार का वर्तमान कौंसिल इसका एक उदाहरण है। अभी हाल ही में फ्लाक के जिले में श्री गजाधरजी निर्वाचित हुए, उन्होंने हमेशा एक-दूसरे वर्ग के व्यक्ति को निर्वाचित किया है, हालाँकि रंगीन तत्व वाले बहुसंख्यक हैं, ग्राँ-पोर एक दूसरा उदाहरण है। सरकार के कौंसिल में केवल निर्वाचित सदस्य ही नहीं, अन्य लोग भी हैं। गवर्नर महोदय न्यायपूर्वक अपना चयन करेंगे और ध्यान देंगे कि जिस सम्प्रदाय का प्रतिनिधित्व नहीं हो रहा है, उसका प्रतिनिधित्व होने की व्यवस्था करेंगे।"

डॉक्टर रामगुलाम द्वारा कौंसिल में दिये गये उपर्युक्त भाषण से स्पष्ट होता है कि मॉरीशस के श्रमिकों को मतदान का अधिकार दिलाने के लिए उनके दिल में कितनी छटपटाहट थी। वे यह मानने को हरगिज तैयार नहीं थे कि भारतीय मूल के श्रमिक इस देश में विदेशी थे। वे उन श्रमिकों को इस देश का निर्माता समझते थे। धरती के उन पुत्रों ने ही मॉरीशस के जंगलों को काटकर यहाँ शहर बसाये थे। उन्हीं के खून-पसीने से इस धरती ने सोना उगला था। सफेद चीनी पैदा करके उन्होंने ही देश को सम्पन्नता की ओर मोड़ा था। यह कैसी विडम्बना थी कि जिन लोगों ने इस देश को सजाया-सँवारा था, उन्हीं को यहाँ विदेशी समझा जाता था और नागरिक अधिकारों से वंचित रखने की सरतोड़ कोशिश की जाती थी। डॉक्टर रामगुलाम इस अन्याय को सह नहीं सकते थे। इसलिए उन्होंने अपने भाषण में कहा कि ये मजदूर यहाँ काम करते हैं, देश के आर्थिक विकास में लगे हैं, यहीं

रहेंगे और उनकी मृत्यु भी इसी देश में होगी। भारतीय श्रमिक किसी भी हालत में यहाँ विदेशी नहीं हैं, वे इस देश के नागरिक हैं। अतः उन्हें नागरिक अधिकार देने ही पड़ेंगे। मतदान का अधिकार पाकर वे अपने मन पसंद प्रतिनिधि को व्यवस्थापिका सभा में भेज सकेंगे। वे शोषण और अन्याय से अपनी रक्षा करा सकेंगे। इसलिए उन श्रमिकों का प्रतिनिधित्व सरकारी परिषद् में होना ही चाहिए।

दूसरी परामर्श समिति

तत्कालीन राज्यपाल, सर मार्केंजी को श्रमिकों के मताधिकार पर पुनः विचार करने के लिए बाध्य होना पड़ा। 'आवर स्ट्रगल' पुस्तक के पृष्ठ सत्तर पर डॉक्टर रामगुलाम कहते हैं—"संघर्ष एक बार पुनः शुरू हो गया। चुनाव को सम्पत्ति और शिक्षा के आधार पर करने तथा स्त्रियों को इस अधिकार से वंचित करने के लिए जो भी प्रयत्न किये जाते थे, मुझे उन सबका विरोध करना पड़ता था। ये अन्तिम दो तरीके इसलिए अपनाये जाते थे, ताकि श्रमिक वर्ग को वोट देने के अधिकार से वंचित रखा जा सके। राज्यपाल सर मार्केंजी ने एक दूसरी परामर्श-समिति (Second Consultative Committee) का गठन किया, जिसमें ज्यादा प्रगतिशील सदस्य थे जो मजदूर दल के समाजवादी आदर्शों को अपनाते थे। प्लाजा (Plaza) में एक सार्वजनिक जुटाव के दौरान, जब मैं मजदूर दल के मंच पर खड़ा हुआ था, तभी से निश्चित रूप से मई, 1947 को मजदूर दल की कमिटि में सम्मिलित हो गया। सीनीवासेन, डॉ० मिलिये, आंकचिल, डॉ० कीरे, कभी-कभी चन्द विषयों पर अनुदारपंथी वालों के पक्ष में भी हो जाया करते थे। रामनारायण जगदम्बी, बालगोबिन, बिजाधर, आचिया, सिवगोबिन, वागजी और स्वयं मैं–हम सब प्रगतिशील सदस्यों में थे। जुलकेनिग (Jules Koenig) लोराँ (Laureut) रिवेट (Rivet) तथा अन्य गोरे अनुदारपंथियों का सामना करने के लिए डॉ० मिलियें तथा सीनीवासेंन द्वारा मुझे अच्छा सहयोग मिलता था। मैं एक-एक विषय को लेकर तर्क-वितर्क द्वारा तथ्य प्रस्तुत करता था। श्रमिकों को मतदान का अधिकार दिलाने के लिए शिक्षा और सम्पत्ति आदि कठोर शर्तों के विषय में हम शान्त नहीं रह सकते थे।

अन्त में मैंने मताधिकार के लिए सम्पत्ति सम्बन्धी अर्हता की शर्त को बिल्कुल समाप्त कर देने का प्रयत्न किया और छठी कक्षा की शैक्षिक योग्यता के विषय में एक समझौता करने का प्रस्ताव रखा। मैंने साक्षरता की एक साधारण सी कसौटी को प्रस्तावित किया। 21 साल से ऊपर के व्यक्तियों को मतदाता बनने के लिए साधारण वाक्य पढ़ने की योग्यता होनी चाहिए तथा किसी भी भाषा में अपना नाम पढ़ने और हस्ताक्षर करने में उन्हें समर्थ होना चाहिए, अर्थात्, अंग्रेजी,

फ्रेंच, हिन्दी, तामिल तेलुगू, उर्दू और चीनी भाषा में। हमने इसका भी प्रबन्ध किया कि कार्यपालिका सभा (Executive Council) के लिए चार निर्वाचित सदस्य व्यवस्थापिका सभा द्वारा चुने जायें।

21 अप्रेल, 1947 को दूसरी परामर्श समिति के निर्णय राज्य-सचिव के सामने राज्यपाल द्वारा रखे गये। राज्य-सचिव ने 16 अगस्त को उत्तर भेजा। नये संविधान को उन्होंने स्वीकार किया था। उसमें हमारी अधिकतर माँगें निहित थीं। साक्षरता की साधारण सी कसौटी, मतदान देने के अधिकार को बढ़ाना, सम्पत्ति की कसौटी की समाप्ति, स्त्रियों को वोट देने का हक, कार्यपालिका सभा के लिए व्यवस्थापिका द्वारा गैरसरकारी सदस्यों का चुनाव....आदि।

नया संविधान फरवरी, 1948 में जारी किया गया। मॉरीशस में प्रजातांत्रिक युग के प्रभात का स्वागत राउल रिवेट (Raoul Rivet) ने भी किया। परन्तु परामर्श समिति, कौंसिल की बैठक आदि में जो लापरवाही दिखाई गई थी, उससे उन्हें कष्ट हुआ। इसका कारण उन्होंने 1939 से चुनावों का न होना बताया। यह ध्यान रखने योग्य बात थी कि दुनिया के मुट्ठी भर देशों में मॉरीशस एक था, जिसमें स्त्रियों को वोट देने का अधिकार मिला था। वास्तव में फ्रांस ने दो ही साल पहले स्त्रियों को मतदान देने का हकदार बनाया था।"

1948 के अखाड़े में

साक्षरता की साधारण सी कसौटी पर आधारित निर्वाचकों का रेजिस्ट्रेशन मार्च में शुरू हुआ और दिसम्बर 1946 में संख्या 11,844 से 71,782 हो गई। सरकारी परिषद (Council of Government) का विसर्जन गुरुवार 3 जून, 1948 को हुआ और नामांकन-दिवस (Nomination day) 24 जून को रखा गया। पोर्टलुई में चार कुरसियों के लिए 12 उम्मेदवार थे, प्लेन विल्येंम्स में 6 कुरसियों के लिए चौदह, ग्राँपोर-सावान के तीन कुरसियों के लिए नौ और पांप्लेमूस-रिव्येर जुरां पार में तीन कुरसियों के लिए दस उम्मेदवार। 11 जुलाई, 1948 में लगी मजदूरों की एक कार्यकारिणी की बैठक ने निम्नलिखित उम्मेदवारों को स्वीकार्य बताया। रोजमों (Guy Rozemont), डॉ० मिलियें, गोंत्रां जामुजियो (Gontrand Zamudio) और सीनीवासेन (Renganaden Seeneevasen) पोर्ट लुई के लिए, श्रीमती रोशकुत (Mrs Rochecouste), दाविद (Essaie David), गी फोरजेत (Gay Forzet) रेमों रो (Raymond Rault) और बेन नूराया (Ben Nooraya), प्लेन विल्येंम्स के लिए, फिलिप रोजमों (Philip Rozemont), सुखदेव विसुनदोयाल (Sookdeo Bissondoyal) और विलफ्रेद लेतां (Wilfred L'

Etang) ग्राँ-पोर-सावान के लिए; सत्यदेव सलावी और सुकदेव बालगोविन मोका-फलाक के लिए तथा प्रसाद आलगू, दोनाल्ड फ्रांसिस तथा खुद डॉ० रामगुलाम मॉरीशस के उत्तर प्रान्त में पांप्लेमूस, रिव्येर जु राम्पार के लिए।

उन दिनों की प्रथा के अनुसार हर अखबार अपनी पसन्द के उम्मेदवारों की प्रशंसा करने लगा। सभी समाचार पत्रों ने सोनीवासेंन की अति प्रशंसा की, एडवांस पत्र ने उन्हें एक अति प्रतिभावान वकील के रूप में प्रस्तुत किया। "ले मोरिसियें" पत्र (Le Mauricien) ने भी उनका वर्णन करते हुए लिखा कि वे एक अद्वितीय बौद्धिक क्षमता वाले व्यक्ति हैं। रेमों रो एक प्रसिद्ध वकील था। उसे समाजवादी बताया गया जो राउल रिवेट को अच्छा नहीं लगा हालाँकि उन्होंने स्वीकार किया कि समाजवाद के लिए अच्छी बौद्धिक सामर्थ्य वाले, योग्य प्रतिनिधियों का होना आवश्यक है। रिवेत का सबसे प्रिय उम्मेदवार जुलकेनिग था जो 1930 के चुनाव में उसी रिवेट के साथ राजनीति में आया था। रिवेट का कहना था कि अगर मॉरीशस को एक ही उम्मेदवार चुनना होता तो वह उस एक उम्मेदवार के रूप में केनिग को ही स्वीकार्य ठहराता। एडवांस ने डॉ० रामगुलाम को एक टोली-नायक के रूप में प्रस्तुत किया बिजाधर, वागजी और खुद डॉ० रामगुलाम उत्तर प्रान्त में थे और बालगोविन मौका-फ्लाक में और जय नारायण राय दक्षिण में थे। 24 जुलाई, 1948 के एडवांस पत्र ने लिखा, 'डॉ० रामगुलाम तर्क विद्या में निपुण है।" वे स्पष्ट वक्ता और दूरदर्शी हैं। सरकार की कौंसिल में मिली जुली प्रतिक्रियात्मक शक्तियों के विरुद्ध वे पिछले चन्द वर्षों से अकेले विरोधी के रूप में खड़े रहे। राज्यपाल से टक्कर लेने का साहस रखने वाले व अकेले व्यक्ति थे। अपनी राजनीतिक विचारधारा से वे कभी डिगे नहीं। वे समाजवादी हैं और समाजवादी ही बने रहेंगे।"

डॉ० रामगुलाम कहते हैं "भारतीय आप्रवासियों की हैसियत से हम उस समय राष्ट्रीय राजनीति में प्रवेश होरहे थे। अतः हमारे उम्मेदवारों का अति योग्य होना परमावश्यक था। हमें अपने व्यक्तित्व को निखारकर अन्य समुदायों की दृष्टि में आदर का पात्र बनाना था।"

मजदूर दल का समाजवादी घोषणापत्र

चुनाव-आन्दोलन के समय प्रत्येक उम्मेदवार ने अखबारों के माध्यम से अपने चुनाव सम्बन्धी घोषणापत्र को सामने रखा। 5 अगस्त, 1948 को चुनाव से पाँच दिन पहले डॉ० रामगुलाम, बिजाधर, वागजी आर बालगोविन और जयनारायण रॉय ने अपने इर्दगिर्द प्रगतिशील व्यक्तियों को इकट्ठा करने के लिए अपना घोषणापत्र प्रस्तुत किया। इस घोषणापत्र के बारे में डॉ० रामगुलाम "आवर स्ट्रगल" (Our

Struggle) पुस्तक के तिहत्तरवें पृष्ठ पर कहते हैं—"घोषणापत्र (Manisfesto) के विचार मेरे दिमाग में उसी समय से थे, जब मैं इंग्लैंड में विद्यार्थी-जीवन बिता रहा था। उन विचारों का मंथन मैंने अपने मन में हजारों बार किया था। बदलती हुई स्थानीय परिस्थितियों में उन्हें ढालने का प्रयत्न किया था। हमारे घोषणापत्र की कुछ बातें भविष्य से इतना मेल खाती थीं कि आज भी सार्थक रह गई हैं।" इसी पुस्तक में डॉक्टर साहब आगे कहते हैं—

"हमारे घोषणापत्र में लगभग 20 सूत्र थे जो समाजवाद से सम्बन्धित थे। पहली बात मॉरीशस में एक समाजवादी युग की घोषणा करती थी। दूसरा सूत्र हाल में हासिल की गई प्रजातन्त्रीय नींव को मजबूत बनाने की दृष्टि से महत्वपूर्ण था। हमने महसूस किया कि टापू भर में सरकारी स्तर पर, प्रजातान्त्रिक तरीके से निर्वाचित नागरिक होने चाहिए ताकि मॉरीशस की धरती में प्रजातन्त्र गहराई तक अपनी जड़ों को फैला सके। हमारा घोषणापत्र शिक्षा फैलाने के विचार को बड़ा महत्व देता था, खासकर श्रमिक वर्ग में। गोरों के कुलीनतन्त्र की नीति के कारण मजदूर परम्परागत रूप में शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़ गये थे। गोरों ने इस स्थिति से पूरा लाभ उठाने की कोशिश की थी और उन्होंने चुनाव में वोट डालने के लिए छठी कक्षा के प्रमाण पत्र वाली कसौटी को अधिक मान्यता दी थी। इस प्रकार अपने लोगों को निरक्षरता से उठाने के लिए मैंने आरम्भ से ही शिक्षा पर जोर दिया था और हमारे घोषणापत्र ने निरक्षरता को मिटाने तथा शिक्षा को अनिवार्य करने की माँग की थी। अन्ततः हम इस सदी के छठे दशक में इस नीति को मॉरीशस में लागू कर पाये।"

उक्त घोषणापत्र के बारे में डॉक्टर रामगुलाम आगे लिखते हैं—"अर्थ-व्यवस्था के बारे में हमने प्रस्ताव रखा कि कृषि में परिवर्तन तथा देश की धरती के अच्छे प्रयोग के जरिये एक संतुलित अर्थव्यवस्था को प्राप्त किया जाय। इस लक्ष्य-पूर्ति के लिए हमारे घोषणापत्र ने इस बात पर जोर दिया कि खाद्यपदार्थ के लिए निश्चित मूल्य निर्धारित होने चाहिए। साग-सब्जियों और मांस-दोनों प्रकार के आहारों के लिए भाव निश्चित होना चाहिए जिससे कि पैदावार बढ़ सके।

श्रमिकों के हित के लिए, हम चाहते थे कि उन्हें हड़ताल करने का अधिकार मिले तथा वे ट्रेड यूनियन्स की स्थापना कर सकें। हम चाहते थे कि पहली मई को श्रम-दिवस के रूप में आम छुट्टी का दिन घोषित किया जाय। हमारी माँग थी कि काम की शर्तों में, खासकर तनख्वाह से सम्बन्धित परिवर्तन हो और काम के घण्टों को घटाया जाय। जीवन-स्तर में सुधार लाने के लिए हमने "मौलिक खाद्य पदार्थों पर अनुदान" तथा 'बेरोजगारी" दुर्घटनाओं एवं बुढ़ापे के लिए राष्ट्रीय बीमा को कायम करने की नीति की माँग की।

गाँवों और शहरों के बीच जो खाई थी, उसे भी हम कम करना चाहते थे। अन्ततः हमने देहाती इलाकों में मनोरंजनों, शक्कर कोठियों में मजदूर स्त्रियों के बच्चों की दिन में देखभाल करने की व्यवस्था तथा उनकी बेहतर खुराक की भी माँग की। हम बेरोजगारी से टक्कर लेना चाहते थे और हमने श्रमिकों के रहने के लिए बेहतर मकानों के लिए भी आवाज उठाई।

शक्कर उद्योग के अधिपतियों द्वारा छोटे किसानों के प्रति किये जाने वाले शोषण को रोकने और उन्हें उनके श्रम और त्याग का उचित फल दिलाने के लिए हमने यह माँग की कि छोटे किसानों के गन्ने से अर्जित धन के दो-तिहाई भाग उन्हें मिलने चाहिए अर्थात् उनके गन्ने से हुई आमदनी के दो-तिहाई भाग के हक़दार वे रहेंगे और एक-तिहाई भाग का मिल-मालिक। ऐसा करने का मकसद था कारखाने वालों के लोभ को सीमा में रखना। यूनियन फ्लाक (Union Flacq) में गजाधर को छोड़कर बाकी सभी मिल-मालिक गोरे थे।

हम चीनी कोठियों में यातायात के साधनों के आधुनिकीकरण के भी पक्ष में थे। इसके साथ-साथ हमने विलास के सामानों पर कर लगाना भी जरूरी समझा। गाड़ीवान, सब्जी वाले और छोटे व्यापारियों को लाइसेन्स की आवश्यकता थी और कर चुकाना पड़ता था जब कि जिन्हें वास्तव में कर चुकाना चाहिये था, वे सब करों से मुक्त थे। इस कर निर्धारण रीति में हम एक क्रान्तिकारी परिवर्तन लाना चाहते थे ताकि धनी-मानी लोगों को ही कर भरना पड़े और गरीब तथा जरूरतमन्द लोगों में धन का उचित वितरण हो सके।"

उस घोषणा पत्र के बारे में अन्त में डॉक्टर रामगुलाम लिखते हैं, "हमारे घोषणा पत्र में जो तथ्य थे, सन् 1935 से वही मेरे भाषणों एवं लेखों के मुख्य विषय होते थे। मेरे भाषणों के माध्यम से हमारे लोगों में एक परिवर्तन नजर आ रहा था। वे समाज में एक अधिक अच्छी व्यवस्था देखना चाहते थे। शनैः-शनैः मैं घोषणा पत्र की लगभग सभी बातों को कार्यान्वित कर पाया, हालाँकि मुझे अक्सर सही मौके के लिये लम्बे समय तक इन्तजार करते रहना पड़ा। इस टापू के चप्पे-चप्पे में समाजवाद का विस्तार धैर्य एवं कठोर परिश्रम के बल पर हुआ।"

1948 का अविस्मरणीय चुनाव परिणाम

10 अगस्त, सन् 1948 के आम चुनाव में मॉरीशस के इतिहास में पहली बार 71,569 पंजीकृत मतदाताओं में सभी वर्गों के वयस्कों को वोट डालने का अधिकार प्राप्त हुआ। यह वह पहला चुनाव था जो प्रजातान्त्रिक सिद्धान्तों के आधार पर हुआ। इस चुनाव में मजदूर दल को आशातीत सफलता प्राप्त हुई। इस निर्वाचन में भारतीय मूल के 11 उम्मीदवार उत्तीर्ण हुए। रंगीन तत्व के

लोगों में सात उम्मीदवार उत्तीर्ण हुए और फ्रांसीसी मूल का केवल एक ही व्यक्ति निर्वाचित हो सका। उत्तीर्ण अभ्यार्थियों के नाम इस प्रकार हैं—

भारतीय मूल के उम्मीदवार	रंगीन तत्व के उम्मीदवार	फ्रांसीसी मूल के उम्मीदवार
डॉ. शिवसागर रामगुलाम	श्रीमती ई. रोशकुत	जुल केनिग
रेंगानादेन सीनीवासेन	डा. मिलियें	
सुखदेव विष्णुदयाल	गी. रोजमों	
जयनारायण रॉय	रेमों रो	
एच. आर. वागजी	गी. फोरजेट	
अनत बिजाधर	राउल रिवेट	
वी. गजाधर	एस. वी. एमील	
डी. लखीनारायण		
जे. बिदेशी		
एस. बालगोबिन		
आर. बालगोबिन		

उन्नीस निर्वाचित उम्मीदवारों में ग्यारह हिन्दुओं के उत्तीर्ण हो जाने पर कुलीनतन्त्र को वह सदमा पहुँचा, जिसकी उसने सपने में भी कल्पना नहीं की थी। यद्यपि वागजी और बिजाधर निर्दलीय उम्मीदवार थे, तथापि वे अपनी बौद्धिक और शैक्षिक योग्यता के कारण निर्वाचित उम्मेदवारों की सूची में आ गये। दोनों देश के लिए बड़े हितकारी सिद्ध हुए।

पोर्टलुई में मजदूर दल के प्रधान, गी. रोज़मों अव्वल आये थे और उनके पीछे ही डा. मिलियें, सीनीवासेन और एमील उत्तीर्ण हुए थे। पोर्टलुई में मजदूर दल का एक ही उम्मीदवार, ज़ामुजियो चुनाव में हार गये थे। इस शहर में मजदूर दल ने 52 प्रतिशत वोट प्राप्त किये। प्लैन विल्येम्स चुनाव क्षेत्र से मजदूर दल ने 39 प्रतिशत वोट हासिल किये। इस क्षेत्र से श्रीमती रोशकुत, रो और फ़ोरजेत निर्वाचित हुए थे। सरकारी परिषद् के अनुदारपंथी सदस्यों में से इस चुनाव क्षेत्र से केवल दो ही उम्मीदवार : जुल केनिग और राउल रिवेट उत्तीर्ण हुए। जुल केनिग सर्वाधिक वोट पाकर प्रथम आये, जबकि कट्टर अनुदारपंथी राउल रिवेट पाँचवें नम्बर में आये।

उत्तर प्रान्त में बिजाधर, वागजी और डॉक्ठर रामगुलाम 65 प्रतिशत वोट पाकर आशातीत सफलतापूर्वक विजयी हुए थे। डॉक्टर रामगुलाम 5982 वोट पाकर प्रथम आये थे, जबकि उनके प्रतिद्वन्द्वी, प्रसाद आलगू को केवल 397 वोट तथा फ्रांसीस को 1370 मत ही मिल पाये थे। मोका-फ्लाक प्रान्त से भगवान, आर. बालगोबिन और एस. बालगोबिन उत्तीर्ण हुए थे।

मॉरीशस के दक्षिण में सुखदेव विष्णुदयाल बड़े सबल उम्मेदवार थे। वे ग्रांपोरसावान चुनाव क्षेत्र से रॉय और बिदेसी के साथ विजयी हुए थे।

उपर्युक्त चुनाव के नतीजे को देखते हुए यह स्पष्ट हो जाता है कि मतदाताओं ने मुट्ठी भर गोरों के शासन को ठुकराकर अपने वर्षों के दबे हुए रोष को प्रकट किया था। मॉरीशस एक नये युग में कदम रख चुका था। जनता के बीच से उभरे नये नेता मॉरीशसवासियों के विश्वासपात्र बन गये। उन्होंने जनता की सेवा का उत्तरदायित्व ले लिया था।

चुनाव हारकर भी गोरे देश की बागडोर अपने ही हाथों रखना चाहते थे। वे चुनाव की लड़ाई में तो हार चुके थे, किन्तु तत्कालीन राज्यपाल को अपनी शक्ति और पूंजी से प्रभावित करके मनोनीत सदस्य के रूप में सरकारी परिषद् में पुनः आ बैठे। राज्यपाल ने बारह अनुदारपंथियों को मनोनीत सदस्य नियुक्त किया : मेग्रो (M. A. D. R. Maigrot), मैकदोनल्ड (K.S. Macdonald), आरेल (P.N.A. Harel), श्रीमती दे शाजाल (Mrs. L.M.D. de Chazal), आचुएन (J.E.M.L. Ah Chuen), दे शाजाल (A.E. de chazal), जेले (P.F.A. Gelle), रोबिनसन (H.G. Robinson), ओसमान (A.H. Osman), कीरे (Dr. J.M. Cere), नइराक (A.L. Nairac) और लोराँ (Dr. E. Laurent)

उपर्युक्त व्यक्तियों के अतिरिक्त औपनिवेशिक सचिव, प्रोक्यूरर और एडवोकेट जनरल तथा वित्त सचिव भी धारा परिषद् के सदस्य बने। फलतः मजदूर दल बहुमत में निर्वाचित होकर भी सरकार की कूटनीति के कारण अल्पमत में हो गया। यद्यपि चाल चलकर अनुदारपंथी पूंजीपति कौंसिल के मनोनीत सदस्य बन गये, तथापि उन्हें पूरा पता चल गया कि वे अब लम्बे समय तक अपनी चाल में सफल नहीं होंगे। सर्वहारा वर्ग जाग चुका था। श्रमिकों को अपनी संगठित शक्ति का प्रत्यक्ष प्रमाण मिल चुका था। अब सरकारी परिषद् में मजदूरों के कई प्रतिनिधि पहुंच चुके थे। उनके हक का गला घोंटा नहीं जा सकता था। पूंजीवाद और कुलीनतन्त्र के थप्पर खाते-खाते, अब मजदूर कमर कसकर विरोध करने के लिये उद्यत हो चुके थे। उनके नेता उनके साथ थे। रंगीन तत्व के लोगों का नेतृत्व गी रोजमों कर रहे थे और भारतीय मूल के नेता डॉक्टर रामगुलाम माने जाते थे। ये दोनों नेता मजदूर दल की रीढ़ की हड्डी थे।

सन् 1948 के चुनाव के बाद नेताओं के सामने बहुत बड़ा काम पड़ा था। देश को नया संविधान मिल चुका था। अब उस संविधान के अनुसार जनता की सेवा में प्राणपण से जुटना था। डॉ. रामगुलाम ने अपने चुनाव के घोषणा पत्र को क्रियान्वित करने के लिए हर चुनौती को स्वीकार किया। □

सप्तम परिच्छेद

निर्वाचित प्रतिनिधि

यद्यपि सन् 1940 से 48 तक डॉक्टर रामगुलाम कौंसिल में मनोनीत सदस्य के रूप में श्रमिक वर्ग का ही विशेष प्रतिनिधित्व करते रहे, तथापि वे श्रमिकों द्वारा व्यवस्थापिका सभा में भेजे नहीं गए थे। 1948 के चुनाव के बाद वे जनता द्वारा निर्वाचित होकर मजदूर नेता के रूप में धारा परिषद् में पहुँचे। अब पूर्व की अपेक्षा वे अपने को अधिक सबल समझने लगे।

इधर चुनाव में हार खाकर अनुदारपंथी आगबबूले हो रहे थे। वे डॉक्टर रामगुलाम को राजनीतिक क्षेत्र से हटाने के लिए हर चाल चल रहे थे। "फूट डालो और राज करो" की नीति सक्रिय हो चुकी थी। संवैधानिक विकास के मार्ग में रोडा डालने का हर सम्भव यत्न किया जा रहा था। किन्तु गरीबों के रक्षक और पूँजीपतियों के शोषण के विरोधी, डॉक्टर रामगुलाम निर्भीकतापूर्वक आगे बढ़ रहे थे। अब बहुसंख्यक जनता उनके पीछे थी। उन्हें रंगीन तत्व के नेताओं : गी रोजमों, रेमों रो, गी. फोरजेत और डा० मिलियें का पूरा सहयोग मिल रहा था।

कौंसिल में शिवसागर की माँगें

कई सरकारी विभागों में सुधार की जरुरत थी। स्वास्थ्य और शिक्षा के क्षेत्र में लापरवाही बरती गई थी। पूरे देश में नल बिठाकर जनता को पानी की सुविधा देनी थी, सामाजिक सेवाओं का सूत्रपात्र करना था, श्रम विभाग में सुव्यवस्था लाकर श्रमिकों के वेतन में वृद्धि करनी थी, इसके लिए देश की आमदनी बढ़ानी थी। धनिक वर्ग से कर लेना था। देश की बहुसंख्यक जनता के हित में कुछ आवश्यक कानून पारित करने थे। डॉक्टर रामगुलाम ने अपने समाजवादी विचारों को सामने रखा। वे चाहते थे कि मजदूरों को रहने के लिए अच्छे घर हों। 18 जनवरी, 1948 को आनुमानिक बजट पर टिप्पणी करते हुए उन्होंने कहा : "हम देखते हैं कि एक वास्तुकार (Architect) और उसके कर्मचारियों के लिए हमें रुपये वोट करने हैं, लेकिन जनता के घरों की समस्याओं को हल करने के लिए इस आनुमानिक बजट में कहीं कुछ दिखाई नहीं देता।"

इसी प्रकार 25 जनवरी 1949 में जब "चाय-अनुसंधान" के लिए धन खर्च करने का प्रस्ताव आया तब उन्होंने कौंसिल का ध्यान आकृष्ट करते हुए कहा-- "मैं सोचता हूँ कि अगर हम चाय पर इतना धन खर्च कर रहे हैं तो यह जरूरी है कि सरकारी खेती करने के लिए लोगों को जमीन दें। जब तक ऐसा नहीं किया जाता, मैं सोचता हूँ इस अनुसंधान-कार्य को चालू रखना हमारे लिए आवश्यक नहीं, यदि यह मुट्ठी-भर लोगों के फायदे के लिए हो, तो सरकार को ऐसे विधेयक पर क्यों ध्यान देना चाहिये, क्यों रुपया लगाना चाहिये।"

उपर्युक्त वाक्यों से स्पष्ट हो जाता है कि डॉक्टर रामगुलाम सरकारी कोष को देश के विकास में ही लगाना चाहते थे। चाय की खेती के काम में लगे हुए गरीब लोगों को जमीन देने का मतलब था कृषि-कार्य का विस्तार करना, देश का आमदनी बढ़ाना, गरीबों की गरीबी हटाना तथा बेरोजगारी दूर करना। वे यह नहीं चाहते थे कि धनिक वर्ग शोषण द्वारा और धनी बनता चला जाय और निर्धन वर्ग को भाग्य के सहारे छोड़ दिया जाय। उनकी माँग थी कि सबके हितों के लिए कार्य करें।

डॉक्टर रामगुलाम चाहते थे कि देश में प्रजातान्त्रिक सिद्धान्तों का पालन किया जाय, प्रत्येक वयस्क व्यक्ति को मौलिक नागरिक अधिकार दिया जाय। उन दिनों शहरों में सफाई, बिजली, पानी आदि की व्यवस्था करने के लिए बोर्ड हुआ करते थे। इन संस्थाओं का चुनाव उचित रूप से नहीं होता था। सभी वयस्कों को शहरों की देखभाल करने का समान अवसर नहीं दिया जाता था। डॉक्टर साहब इस रवैये को नागरिक अधिकार का हनन समझते थे। 25 मार्च, सन् 1949 को संसद में प्रस्ताव प्रस्तुत करते हुए अपने भाषण के दौरान उन्होंने कहा—

"अध्यक्ष महोदय, इस भाषण के आरम्भ में ही मैं सभा की अनुमति से उन लोगों के दृष्टिकोण का विश्लेषण करूँगा, जो चाहते हैं कि बोर्ड एक अर्धनिर्वाचित संस्था की भाँति कार्य करते जायें या यह चाहते हैं कि नगर-निगम एक ऐसी संस्था हो, जिसके लिए मताधिकार वैसा न हो, जैसा कि इस प्रस्ताव में माँगा जा रहा है। इसमें कोई शक नहीं कि जनता का ऐसा एक वर्ग है, जो इन विशिष्ट संस्थाओं को उसी प्रकार कायम रखना चाहता है, जिस तरह बीते दिनों में इन्हें रखने की आदत रही है। मैं इस सभा की अनुमति से बताना चाहूँगा कि यह मनोवृत्ति वैसी ही है, जैसी की उस समय प्रकट हुई थी जब इस कौंसिल के संविधान के लिए बहस चल रही थी। मेरे विचार में हमारे स्वर्गीय राज्यपाल ने अपने पत्र के माध्यम से इस विषय को जिस तरह सही-सही राज्यसचिव जी के सामने रखा, वैसा और किसी ने नहीं किया है। अचल सम्पत्ति के स्वामी यह सोचते हैं कि पोर्टलुई नगर-

पालिका अथवा प्लैन विल्येम्स जिले के बोर्ड में और अन्यत्र केवल उन्हीं को सभासद् निर्वाचित करने और निर्वाचक बनने का अधिकार है। इसमें कोई शक नहीं कि यह कुछ हद तक तर्क पूर्ण है। यह एक ऐतिहासिक प्रक्रिया थी, जो इन संस्थाओं के विकास के साथ न केवल मॉरीशस में, बल्कि संसार के उन देशों में भी ऐसी संस्थाओं का जन्म हुआ। लेकिन राजनीतिक दृष्टिकोण और समाज में जो परिवर्तन हुए, उन परिवर्तनों के परिणामस्वरूप हम देखते हैं कि हर राष्ट्र में केवल कर चुकाने वाले लोगों को ही निर्वाचक बनने से काम नहीं चलेगा। आज की स्थिति बदल गई है। कर चुकाने वालों को इस परिवर्तन के कारण बड़बड़ाना नहीं चाहिए, क्योंकि पोर्ट-लुई जैसे शहर में वे कभी भी बहुसंख्यक नहीं रहे हैं। अतः अध्यक्ष महोदय, उस दृष्टि से भी, मैं सोचता हूँ कि उन्हें आपत्ति नहीं होनी चाहिए। उन्हें मान जाना चाहिये कि जो सामाजिक परिवर्तन हुए हैं, उनके कारण पोर्टलुई नगरपालिका के क्षेत्र में रहने वाले सभी नागरिकों को मताधिकार पाना चाहिए, अन्यथा इन संस्थाओं के विकास की भविष्य में कोई सम्भावना नहीं है। मुझसे पूछा जा सकता है कि मताधिकार निवासियों को ही क्यों मिलना चाहिए ? उत्तर मैं यह कहूँगा सर, कि शहराती वे व्यक्ति है, जो अपने अभावों, कठिनाइयों का प्रतिदिन सामना करते हैं। अतः शहर में रहने वाले इन व्यक्तियों को जब तक म्युनिसिपल चुनाव में मतदान करने का अधिकार न दिया जाय तब तक म्युनिसिपल, नगर-निगम, कॉरपोरेशन एवं अन्य नगर-सुधार संस्थाओं को बेहतर नहीं बनाया जा सकता। अब जब विकास-कार्य हो रहा है, तब मैं सोचता हूँ कि हमें समय के साथ चलना चाहिए। जो लोग इस प्रस्ताव का विरोध करेंगे, मैं कहूँगा कि उन्हीं लोगों ने लेजिस्लेटिव चुनावों के संविधान का विरोध किया था। इसका विरोध करके वे उन लोगों का कोई हित नहीं करेंगे जिनके लिए वे काम कर रहे हैं, क्योंकि अन्यत्र उनको हार ही खानी पड़ी है।"

उपर्युक्त भाषण से साफ जाहिर होता है कि डॉक्टर रामगुलाम शहर में रहने वाले गरीब निवासियों को म्युनिसिपल कॉरपोरेशन के शासन में वही अधिकार दिलाना चाहते थे, जो एक शताब्दी से पूँजीपतियों को प्राप्त था। लोकतन्त्र को आधार बनाकर चलने वाला राष्ट्र अपने नागरिकों को भेद-भाव की दृष्टि से नहीं देख सकता। तीसरी दुनिया के देशों में बसने वाले नागरिक, अधिकांश में निर्धन, अभावग्रस्त एवं अनेक आर्थिक समस्याओं में उलझे रहते हैं। यदि उन्हें अमीरों के शोषण और अत्याचारों से न बचाया जाय तो उनका जीवन और भी दुखःपूर्ण हो जाता है। ऐसे शोषितों, पीड़ितों की रक्षा वही सेवक कर सकते हैं, जिनके दिल में उन अभागों के लिए अपार प्रेम होता है। डॉक्टर रामगुलाम सच्चे जनसेवकों की पंक्ति में खड़े होकर जन-सेवा करने वालों के लिए आदर्श सेवक सिद्ध होते हैं। उनके

हृदय में गरीबों के प्रति जो प्रेम था, वह सबके सामने साकार रूप में उपस्थित है।

यह हम अन्यत्र लिख चुके हैं कि इस देश की लगभग सारी पूँजियों, शक्कर कारखानों, गन्ने के खेतों तथा बैंकों पर गोरों का ही अधिकार था। लम्बे अर्से तक शासन की बाग-डोर उनके हाथों में रही। जब आम चुनावों में उनकी हार हुई तब मनोनीत सदस्यों के रूप में कौंसिल में पहुँच कर अपने हितों की रक्षा करने लगे। वे यह बताने की चेष्टा करने लगे कि उनके द्वारा संचालित चीनी उद्योग में घाटा हो रहा है। उनके प्रतिनिधि, माननीय नइराक ने जब व्यवस्थापिका सभा में यह बताने का दुस्साहस किया कि मिल मालिक अपने कारोबार में नुकसान उठा रहे हैं, तब तेरह सितम्बर, 1949 को डॉक्टर रामगुलाम कौंसिल में कह उठे—

"मेरे माननीय दोस्त, नइराक साहब ने अभी-अभी जो कुछ सुनाया है, उससे लगता है कि वे एक ऐसे उद्योग के लिए एक केस बना रहे हैं, जिसका दिवाला निकल गया है और अब वह उद्योग अपने पैरों पर खड़ा रह नहीं सकता। परन्तु मैं नहीं सोचता कि शक्कर उद्योग इस स्थिति में है। चाहे हर वक्त असन्तोष प्रकट किया जा रहा है और कहा जा रहा है कि शक्कर उद्योग से लाभ नहीं हो रहा है, फिर भी सम्पत्तियों के बड़े-बड़े मालिक और एकाधिकार प्राप्त लोग एश-आराम का विलासमय जीवन जी रहे हैं। उनके लिए कुछ नहीं बदला। अगर बदला है तो केवल छोटे किसानों का, जो कड़ी मेहनत कर रहे हैं, जो हर रोज एक गहरी खाई के किनारे चल रहे हैं। उनके लिए हर कटनी का मौसम अधिक अन्धकारमय है और निराशा से भरा हुआ है। परन्तु जो बैंकों और कारखानों के मालिक हैं, जिनके पास वह सब-कुछ है जो इस देश में पूँजी के नाम से जाना जाता है, उनके लिए कुछ नहीं बदला। उनके लिए तो केवल मुनाफे का प्रतिशत बढ़ गया है। मैं नहीं सोचता कि माननीय नइराक चीनी उद्योग की क्षति पर बहस करके हमें बताने के अधिकारी हैं कि यह उद्योग पॉलटेक्स(Polltax)नहीं चुका सकता जो सरकार उस पर लगा रही है। स्थिति यह नहीं है सर, स्थिति यह है कि वे चुका सकते हैं। हमारी पिछली ही फसल में, विगत वर्षों के मुनाफे की अपेक्षा पचास मिलियन रुपये का अधिक लाभ हुआ था। वे पचास मिलियन रुपये इस देश के श्रमिकों को कभी नहीं बांटे गये, उन्हें वही तनख्वाह दी गई, उनके साथ वही अन्याय किया गया। वे पचास मिलियन रुपये किसी और की नहीं, उन्हीं लोगों की जेबों में गए होंगे जिनको इस देश में एकाधिकार प्राप्त है। बैंकों और चाम्बर ऑफ एग्रीकल्चर (Chamber of Agriculture) के अधिकार में शक्कर उद्योग है। संस्थाएँ और शक्कर उद्योग के मालिक उन लोगों के विरोध में हैं, जिन्होंने हमें इस सदन में भेजा

है, इससे हम आज अवगत हैं। ये इस प्रकार प्रतिनिधित्व करते हैं कि इस सदन में जनता का निर्णय कभी-कभार ठुकरा दिया जाता है। प्रारम्भ के अध्यादेश में बहुत सारी बातें थीं, जो उन सभी के हित में नहीं थीं, जिनका सम्बन्ध शक्कर उद्योग से है और वह अन्याय इस संशोधित प्रस्ताव में भी दुहराया जा रहा है। यह कर उस कृषक की चीनी पर लगाया जाता है, जो अपनी ईख मिल-मालिक को देता है, चाहे वह सबसे छोटा कृषक ही क्यों न हो। उस पर कर तो लगाया जाता है, पर वह कर का पैसा कारखाने वालों के पास ही चला जाता है। वह छोटे किसान के पास नहीं जाता। इस अन्याय को हटाने हेतु इस विधेयक में संशोधन लाने का यह सम्भवतः वह स्थल नहीं है, फिर भी सर, मैं सोचता हूँ कि सरकार को बताना जरूरी है कि छोटे किसान पर यह कर लगाना न्यायसंगत नहीं हैं, क्योंकि जिन चीनी उद्योगों से उसका सम्बन्ध है, उससे वह पहले ही काफी कुछ खो रहा है। छोटे किसानों के पास ऐसा कुछ नहीं है, जो इस विरोध में बताया जा रहा है। उनके पास केवल दो या तीन एकड़ जमीन है और कारखाने तक अपने गन्नों को मिल मालिकों की लारियों द्वारा पहुँचाने में आज उन्हें बहुत अधिक मार्ग-व्यय चुकाने को विवश किया जाता है। अगर वे अपने प्रबन्ध से कम खर्च में अपने गन्नों को कारखाने तक पहुँचा भी सकते हैं, तो भी वे ऐसा नहीं कर सकते हैं। उन्हें मिल-मालिकों की लारियों से ही काम लेने के लिए मजबूर किया जाता है। श्रमिक-कल्याण-विरोध का उदाहरण इस सदन में प्रस्तुत किया गया है कि यह संस्था मुँड-कर (Polltax) नहीं चुकाती है। लेकिन 'लेबर वेलफेयर फण्ड' एक दूसरी ही स्थिति में है। श्रमिक कल्याण निधि का सम्बन्ध पूँजीवाद से नहीं है। वह केवल उन श्रमिकों के हितों के लिए है जो उसको शुल्क चुकाते हैं। वह सामाजिक सेवा के लिए है। यह स्पष्ट है कि समाज-सेवा करने वाली संस्था सरकार को कर चुका नहीं सकती। मनोनीत सदस्य, माननीय नइराक ने कहा कि 'लेबर वेल्फेर फण्ड' कर चुकाता नहीं है, इसलिए पूँजीपति को भी कर चुकाना नहीं चाहिए। मैं नहीं सोचता कि उनका ऐसा कहना सही है। अध्यक्ष महोदय, मैं जानता हूँ कि मै अपना सर पत्थर की दीवार पर मार रहा हूँ जैसा कि मैं पहले भी कह चुका हूँ। इस सभा की जिस प्रकार से गठन हुई, जिस प्रकार बहुसंख्यक निर्वाचकों से बरताव किया गया है, उसे देखते हुए लगता है कि हम अनन्त काल तक अपना सर पत्थरों की दीवार पर मारते रहेंगे। अतः इस मामले में केवल एक काम कर सकता हूँ :—सरकार से प्रार्थना; क्योंकि यह एक सरकारी मामला है। सरकार ने बड़ी स्पष्टता से एक विधेयक पास किया कि अब मुँड़-कर चुकाना चाहिए। अतः मैं दो बातों के लिए प्रार्थना करूँगा। वे ये हैं कि एक्स ऑफिसियो मेम्बर (पदेन सदस्य) वोट न दें और अगर दें भी तो उस बिल के लिए, जो पहले प्रस्तुत किया गया था, क्योंकि अगर हम इस देश में छोटे आदमी की सहायता करना चाहते हैं, अगर हम सामाजिक सुविधाएँ

लाना चाहते हों जो देश के हित में होंगी तो यह जरूरी है कि सरकार उन रुपयों को बटौरे जो कर के रूप में चुकाया जाना चाहिए। उसे सालों तक के लिए टालना नहीं चाहिए।"

अतः हम देखते हैं कि डॉक्टर रामगुलाम उन लोगों से बड़ी निर्भीकतापूर्वक लोहा लेते रहे जो छोटे किसानों की आर्थिक प्रगति के पथ पर रोड़ा बनने की हर मुमकिन कोशिश करते थे। पूँजीपति तो स्वयं सरकार को कर चुकाने से कतराते थे, किन्तु छोटे किसानों के विरुद्ध चाल चलकर उनको तबाह कर देना चाहते थे।

जब गोरे मिल मालिकों ने देखा कि लघु कृषकों के पुत्र शिक्षित होकर राजनीतिक क्षेत्र में पदार्पण कर रह हैं, तब उन्होंने योजनाबद्ध तरीके से उनके आर्थिक, शैक्षिक और राजनीतिक मार्ग को अवरुद्ध करना चाहा। चूँकि डॉक्टर रामगुलाम ने गहराई से राजनीति का अध्ययन किया था, उन्हें षड्यन्त्रकारियों की चाल समझने में देर न लगी।

सन् 1948 के आम चुनाव में मजदूर दल बहुमत से उत्तीर्ण होकर भी मनोनीत सदस्यों की अधिकता के कारण देश का शासन न कर सका। इससे स्पष्ट हो जाता है कि तत्कालीन सरकार अनुदार पंथियों का ही समर्थन कर रही थी। तभी तो जनता के प्रतिनिधियों की आवाज पर ध्यान नहीं दिया जा रहा था। जनसाधारण के अधिकार के लिए डॉक्टर साहब को बड़ी बुद्धिपूर्वक संघर्ष करना पड़ा। उन्होंने महसूस किया कि जब तक देश का संविधान जनता के अधिकारों को सुरक्षित न करेगा, तब तक जनता के हित में काम करना कठिन होगा। पाठक देखेंगे कि आने वाले वर्षों में डॉक्टर साहब को संविधान के संशोधन कराने में अथक परिश्रम करना पड़ा है।

रंगभेद-नीति सभ्य संसार के माथे पर एक कलंक है। यही कारण है कि मानवता का समर्थन करने वाले विश्व के अनेकानेक देश दक्षिण अफ्रीका की रंगभेद-नीति के विरुद्ध एक शताब्दी से आवाज बुलन्द करते आ रहे हैं। मॉरीशस में रंगभेद की भावना प्रच्छन्न रूप में विद्यमान रही है। गोरे अमीरों और काले गरीबों के बीच यह दुर्भावना वर्षों से विद्यमान रही। गौर प्रभुओं के बच्चे उन पाठशालाओं में पढ़ नहीं सकते, जहाँ गरीब मजदूरों के बच्चे पढ़ते थे। इस भेद-भाव के पक्षपोषक मनोनीत सदस्यों के रूप में कौंसिल में पहुँचकर गोरे बच्चों के लिए अलग से छात्रवृत्ति की माँग करते थे। डॉक्टर रामगुलाम ने बाल्यावस्था से ही मॉरीशस में गोरों के इस भेदभाव का नग्न रूप देखा था। ग्यारह अक्टूबर सन् 1949 को गौरांगों के एक प्रतिनिधि ने जब माध्यमिक पाठशालाओं में पढ़ने वाले अपने वर्ग के बच्चों के लिए कौंसिल में छात्रवृत्ति की माँग की तब डॉक्टर रामगुलाम कह उठे—

"हमारे माननीय मनोनीत सदस्य जिस वर्ग के हैं, उसी वर्ग के विचार प्रस्तुत किये हैं। मुझे उनके कुछ विचारों के संशोधन का अधिकार है। मुझे उनसे कहना है कि इस कौंसिल में जब पिछला वाद-विवाद हुआ था, तब उपाध्यक्ष महोदय पोर्ट लुई के वरिष्ठ सदस्य थे और हमारे माननीय सदस्य विल्येम्स ब्लैक रीवर के छठे प्रतिनिधि थे। कुछ मनोनीत सदस्यों को उस समय उस वर्ग का प्रतिनिधित्व करना था, जिसका पुरानी व्यवस्था के अनुसार नहीं हो पाता था। उन्होंने कौंसिल की उस बहस में भाग लिया था और जो अध्यादेश हमारे सामने हैं उसमें अन्तिम समय में सुधार किया गया था कि स्वीकृत माध्यमिक विद्यालयों को और दो छात्रवृत्तियाँ दी जायें। यह चालाकी स्पष्ट थी कि यह (छात्रवृत्ति रूपी) विशेषाधिकार उन लोगों को दिया जाने वाला था, जो प्राथमिक पाठशालाओं में जाने से इसलिए इनकार करते थे, क्योंकि इन पाठशालाओं में जाना उनकी शान के खिलाफ था। इसका कारण यही है कि इन स्कूलों में उन लोगों के बच्चे पढ़ते थे जो इस देश की रीढ की हड्डी थे और जिनकी सहायता से इस देश में सब-कुछ चल रहा है। चूँकि उनको जनसाधारण के बच्चों के साथ अपने बच्चों को बिठाना स्वीकार नहीं, इसलिए वे अपने लिए विशेष छात्रवृत्तियों का प्रबन्ध कर रहे थे। वे चाहते हैं कि यह कौंसिल अणुयुग के इस विशेष वर्ष में उन्हीं की सहायता करने में चालू रहे। यदि इस देश के इतिहास ने भूल की है, तो मैं सोचता हूं कि अब समय आ गया है कि उसका सुधार करना चाहिए। यदि सरकार गलत दिशा लेती रही है तो कौंसिल में हमारा कर्त्तव्य और अधिकार है कि हम उसका सुधार करें। इस देश में हुए परिवर्तनों को देखकर भी यदि माननीय प्रतिनिधि उन्हीं पुरातन विचारों में विश्वास रखें तो मुझे इसका बड़ा खेद है। हम इसके जिम्मेदार नहीं हैं। हम केवल उन लोगों को सिखा सकते हैं, जो सीखना चाहते हैं, जो सीखकर इस देश के सर्वोपरि हित के लिए काम कर सकते हैं। अध्यक्ष महोदय, मैं सोचता हूँ कि विशेषाधिकार युक्त छात्रवृत्ति की व्यवस्था का विचार किसी भी प्रकार देश के हित में नहीं है। लड़के-लड़कियों को छात्रवृत्ति पाने का समान अवसर देना चाहिए। छात्रवृत्ति देने के तरीके में एकरूपता होनी चाहिए।

मैं सोचता हूँ कि ऐसा करने से हम वर्षों से चली आ रही अव्यवस्था का अन्त कर देंगे जो लोग चाहते हैं कि उन्हें कोई विशेषाधिकार मिले, जो एक राष्ट्र में और एक राष्ट्र का निर्माण करना चाहते हैं, उन्हें उसके लिए चुकाना पड़ेगा, राष्ट्र नहीं चुकायेगा।"

डॉक्टर रामगुलाम के उपर्युक्त भाषण से विदित हो जाता है कि तत्कालीन समाज में गोरे अपने बच्चों की पढ़ाई-लिखाई की व्यवस्था अलग से ही करना चाहते थे और उनकी छात्रवृत्ति के लिए विशेष माँग करते थे। इसलिए डॉ. साहब कहते हैं कि अगर एक राष्ट्र में दूसरे राष्ट्र की माँग हो, तो माँग करने वालों को दूसरे

राष्ट्र के लिए चुकाना होगा अर्थात् छात्रवृत्ति के लिए अलग माँग हुई, तो छात्रवृत्ति की माँग करने वालों को चुकाना होगा। वह छात्रवृत्ति विशेषाधिकार की होने से मुक्त नहीं होगी।

डॉक्टर रामगुलाम धर्म, मंदिर, मस्जिदें और गिरजाघर को आत्मा की वस्तु मानते थे। वे इन धार्मिक संस्थाओं को आर्थिक एवं सामाजिक प्रगति में बाधक नहीं समझते थे। किन्तु जब देश-विदेशों से आये हुए बड़े-बड़े मौलाना और पादरी धर्म के नाम पर जनता में फूट डालकर देश की एकता को नष्ट करने का दुस्साहस करते थे, तब वे ऐसे धर्म-गुरुओं की स्वतन्त्रता को घातक समझते थे। मदांध उपदेशकों की हरकत को देखकर एक बार वे व्यवस्थापिका सभा में बोल उठे—"हमने बड़े-बड़े उपदेशकों को देखा है, मौलानाओं और अन्य पादरियों को देखा है जो इस देश में आते हैं और हमें पिछली शताब्दी में ले जाना चाहते हैं। मुझे अपने मित्रों से कहते हुए बहुत दुख हो रहा है कि उन व्यक्तियों का समय टल चुका है। अध्यक्ष महोदय, आज समानता एवं समानाधिकार के लिए जनता उत्सुक है। आज की यही भूख है और मैं सोचता हूँ कि इस देश की सरकार को बस इसी का ख्याल होना चाहिए। आप नामों से डरते होंगे मेरे दोस्त, पर मुझे नामों से कोई मतलब नहीं। चाहे आप कार्लमार्क्स का नाम दे सकते हैं अथवा मैकडोनल्ड या........मुझे कोई परवाह नहीं। मैं कहता हूँ कि मेरे देशवासियों को न्याय मिलना ही चाहिए।"

डॉक्टर साहब नहीं चाहते थे कि भोले-भाले लोगों को धन अथवा पद का प्रलोभन दिखाकर, उन्हें विधर्मी बनाया जाय। पादरियों द्वारा हिन्दुओं को ईसाई बनाने की पूरी कोशिश की जा रही थी। इस मदांधता को वे बुरा समझते थे। उन्होंने आजीवन सभी धर्मों का आदर किया, किन्तु अपने धर्म को कभी तुच्छ नहीं समझा। सभी के धार्मिक उत्सवों में भाग लेते हुए भी उन्हें अपने धर्म में पूरा विश्वास था। वे चाहते थे कि हर हिन्दू अपने महान् धर्म में दृढ़ विश्वास रखे। छोटे-मोटे स्वार्थों के लिए मौलानाओं और पादरियों के बहकावे में न आवे। यही कारण है कि विषमता फैलाने वाले धर्म-प्रचारकों से सरकार को सावधान करते थे।

मॉरीशस के अनुदारपंथी धन-बल की दृष्टि से सदा बलवान् रहे हैं। उनसे टक्कर लेना आसान काम नहीं था। उन्हें ब्रिटिश सरकार की कृपा मिलती रही। अपने शोषण की नीति के कारण और भी धनी बनते चले गये। उनकी क्रूरता एवं अन्याय से लोहा लेना किसी निर्भीक साहसी का ही काम था, जो अपने प्राणों का मोह किये बिना सर्वहारा वर्ग का प्रतिनिधित्व करने के लिए कमर कसकर मैदान में खड़े होते। ऐसे हिम्मत वाले वीर थे डॉक्टर रामगुलाम। वे गोरे पूंजीपतियों के शोषण का पर्दाफाश करने में तनिक भी हिचकते न थे।

आजीवन कठिन मेहनत करके राष्ट्र को समुन्नत करने वाले श्रमिकों की जब

बुढ़ापे में कमर टूट जाती थी तब उन बूढ़ों की सहायता के लिए डॉक्टर रामगुलाम पेंशन की माँग करते थे। 25 नवम्बर सन् 1949 को उन्होंने कौंसिल में निर्भीकता-पूर्वक कहा—"बुढ़ापे की पेंशन के लिए लोगों को चीखना पड़ा है। इसके लिए उन्हें पीढ़ियों तक घर की छतों पर से चिल्लाना पड़ा है। मैं जानता हूँ कि लोगों को एक मास में पाँच से सात रुपये तक पेंशन के रूप में मिलते हैं। इसमें कोई शक नहीं कि जब तक यह रकम बढ़ा नहीं दी जाती, हम जनता के एक वर्ग के प्रति न्याय नहीं कर पायेंगे। इस स्थिति को हम ने ही पैदा किया है, हमारे समाज ने पैदा किया है, हमारा समाज जिसका एक वर्ग दूसरे वर्ग का शोषण करता है, एक वर्ग दूसरे वर्ग से फायदा उठाता है। शोषकों को कर चुकाना चाहिए अपने कुकृत्यों और अनुचित बरतावों से समाज को हानि पहुँचाई है, इसके लिए उनसे कर चुकवाना चाहिए।"

उपर्युक्त पंक्तियों से स्पष्ट हो जाता है कि डॉक्टर साहब शोषकों के प्रति कितने सख्त थे। वे चाहते थे कि उन्हें आर्थिक दण्ड दिया जाय और सरकार उनसे कर के रूप में प्राप्त आमदनी को, घोर परिश्रम करने वाले वृद्धों को पेंशन के रूप में बाँट दे। यह थी डॉक्टर रामगुलाम की वृद्ध श्रमिकों के प्रति दयालुता।

सन् 1949 में अनुदारपंथियों ने चाहा कि पोर्टलुई नगरपालिका के चुनाव को स्थगित कर दिया जाय। ऐसा करना उन लोगों के फायदे में था। ऐसा करके वे नागरिकों के मताधिकार को कुचल देना चाहते थे। यह रवैया डॉक्टर रामगुलाम के लिए असह्य था। किन्तु पूँजीपति बड़े शक्तिशाली थे। उन्हें पूरा सरकारी समर्थन प्राप्त था। उन्होंने डॉक्टर साहब के विरोध का पूरी शक्ति से सामना किया और उन्हें कुचल देना चाहा। डॉक्टर रामगुलाम ने 26 नवम्बर, 1949 के कौंसिल की बैठक में अपने विचार प्रस्तुत करते हुए कहा—"...........जो लोग कड़ी मेहनत करते हैं, एड़ी-चोटी का पसीना बहाते हैं, उनके विरुद्ध एक बहुत बड़ा षड़यन्त्र है। कुछ समय से यह स्पष्ट हुआ है। संविधान में सुधार लाने के समय से हमने अपने जीवन के इस पहलू पर इस सभा में तथा सभा के बाहर बहस की है, दासत्व के विरुद्ध...। सौभाग्यवश इस साम्राज्य में, इस राष्ट्रकुल (Common Wealth) में ऐसे लोग हैं जिनको उन व्यक्तियों के प्रति अपनी जिम्मेदारी का बोध है, जिनपर वे शासन कर रहे है और जो कष्ट उठा रहे हैं। लन्दन में बैठने वाले इस देश के अधिपति को ख्याल आया कि जिन पर वे शासन करते हैं, उनके लिए कुछ करना होगा....साम्राज्य में जो बसते हैं, उन्हें स्वतन्त्र करना होगा। समय आ गया है कि उन व्यक्तियों को स्वतन्त्रता दी जाय। इसी बात को ध्यान में रखते हुए इस देश का संविधान बदला गया जिसका शासक वर्ग ने भारी विरोध किया। उन लोगों ने विरोध किया जिनने लम्बे समय तक इस देश की सत्ता अपने हाथों में रखी हुई है। चूँकि हम इस सदन

में आ गये हैं, इसलिए उस कहानी से परिचित हैं। सरकारी प्रतिनिधि भी उन व्यक्तियों के जाल में फँस गये जो जनता के विरोधी थे। ....वे संविधान के सामने दीवार बन गये। अब वे नगर-पालिका और बोर्डों में होने वाले परिवर्तनों में बाधक बन रहे हैं, क्योंकि उनको इससे फायदा होता है। मुझे बड़ा दुख है, यह कहते हुए खेद होता है कि सरकार भी उन लोगों की सहायता कर रही है। ....यह सरकार, सर, यदि इसी तरह अधिक लम्बे समय तक काम करती जायेगी तो इसे वह आदर नहीं मिलेगा जो मिलना चाहिए। मैं सरकार के अधिकारियों को चेतावनी देता हूँ कि जिस राह पर वे चल रहे हैं, वह अपयश का मार्ग है। समय आ गया है कि वे अपने कदमों को बदलें और प्रगति-पथ पर चलें। मन लगाकर कार्य आरम्भ करें, ताकि हम स्वतंत्रता की तरफ बढ़ सकें, अपनी मंजिल की ओर बढ़ सकें, अभाव और गरीबी से छुटकारा पा सकें। यदि वे ऐसा नहीं करते तो सर्वप्रथम अपने कर्त्तव्य-पालन में असफल हो जायेंगे। सच्चाई से मुँह मोड़ने से उन्हीं को अपयश होगा। मैं कहूँगा सरकार केवल सच्चाइयों से मुँह नहीं मोड़ रही है जो इस देश में हो रही है, बल्कि उसने अपने इर्द-गिर्द एक नकली वातावरण का निर्माण भी स्वयं कर लिया है। सरकार बड़ी भूल कर रही है। हम चाहते हैं कि काम हो। इसीलिए हम कुछ लोगों से सहमत नहीं हैं क्योंकि वे सरकार के प्रतिनिधि हैं। ....हम स्वतन्त्रता चाहते हैं। हम समानता चाहते हैं। हम चाहते हैं कि इस देश में हमारी जनता कष्टों से मुक्त हो। हम चाहते हैं कि सरकार और सभी सरकारी अधिकारी समझें कि जनता के निर्णयों का पालन करना है, न कि सभा में हर वक्त जनता के विरुद्ध निर्णय लेना। यह इस युग की माँग नहीं है.... . मैं बार-बार यह कहूँगा, क्योंकि मैं ऐसा करना आवश्यक समझता हूँ। मुझे इस सदन में कुछ ऐसे लोग दिखाई देते हैं जो लगता है कि वे नहीं समझ रहे हैं कि एक बेहतर स्थिति के लिए परिवर्तन का दौर चल रहा है और अतीत को पीछे छोड़ देना होगा।''

शक्तिशाली पूँजीपतियों के मध्य में बैठकर उनके अन्याय के विरुद्ध इस प्रकार की बात करने के लिए बड़ी हिम्मत की जरूरत थी। वह अदम्य साहस डॉक्टर रामगुलाम को वरदान के रूप में प्राप्त था। हजारों श्रमिकों का समर्थन उन्हें प्राप्त था। वे उनके रक्षक थे और उनकी सेवा करना अपना धर्म समझते थे। निर्धन जनता के बल पर ही वे एक समाजवादी सरकार की स्थापना करना चाहते थे।

डॉक्टर रामगुलाम चाहते थे कि लड़कियों को सुव्यवस्थित रूप से शिक्षा दी जाय। इसके लिए आवश्यक था कि देश में अच्छे माध्यमिक विद्यालय खोले जायें। जब भी वे सरकार से ऐसे विद्यालयों की माँग करते थे। उनकी माँग को ठुकराने के लिए अनेक कठिनाइयाँ पैदा कर दी जाती थीं। फलतः 18 अप्रेल 1950 को वे

कौंसिल में बोल उठे—"दो वर्ष बीत चुके और सोचता हूँ कि एक और साल यों ही चला जायेगा। लड़कियों के लिए माध्यमिक पाठशाला की अब कोई आशा नहीं है। यह एक प्रकार से आगा-पीछा करना है। इस देश में टाल-मटूल की जा रही है।"

जब डॉक्टर रामगुलाम के हाथ में देश की सत्ता आई तब उन्होंने अपने इस सपने को साकार किया। रोजहिल शहर में कन्याओं के लिए प्रसिद्ध माध्यमिक विद्यालय-क्वीन एलिजाबेथ कॉलिज का निर्माण किया। इस कॉलिज ने अब तक देश के कोने-कोने से आई हुई हजारों लड़कियों को शिक्षित करके सहस्रों विदुषियाँ पैदा कीं।

डॉक्टर साहब के विचार बड़े प्रगतिशील थे। देश के विकास के लिए वे अनेकानेक कठिनाइयों का सामना करते थे। उनके मार्ग में रोडे अटकाये जाते थे। अनुदारवादी समाचार पत्र ही उनकी कटु आलोचना करते थे। वे मानापमान की परवाह किये बिना धैर्यपूर्वक अपने लक्ष्य की ओर दृढ़ता से बढ़ते थे। वे ऐसे मांझी थे जो अपनी नाव में सवार जनता को मंजिल तक पहुँचाने में आंधी-तूफानों से लड़कर आगे बढ़ते थे। 18 जुलाई, सन् 1950 को व्यवस्थापिका सभा में सुधार विरोधियों को जवाब देते हुए उन्होंने कहा—"यह देश उसी रास्ते को अपनायेगा जो अन्य देशों ने अपनाया है। यह उसी प्रकार से आगे बढ़ेगा जैसे कि दूसरे देश बढ़े हैं। यह अलग खड़ा नहीं होगा। आप (अनुदारपंथियों को सम्बोधित करते हुए) हमें पीछे- मध्यकाल की ओर ढकेल नहीं सकते।"

यह दुर्भाग्य था कि सत्ताधारी पूँजीपति देश में साम्प्रदायिक पक्षपात के द्वारा मॉरीशसवासियों को परस्पर विरोधी बना रहे थे। डॉक्टर रामगुलाम अनुदारपंथियों के लिए एक बहुत बड़ी चुनौती थे। उनका सामना करने के लिए साम्प्रदायिकता का सहारा लिया गया। डॉक्टर साहब इस चाल को भली-भाँति समझते थे। उन्होंने 20 जुलाई, 1950 को स्पष्ट कहा—"हमारी राष्ट्रीय समस्या का समाधान साम्प्रदायिकता को उभारकर, साम्प्रदायिक तरीके से हो नहीं सकता।"

देश की सारी शक्ति और एकाधिकार के स्वामी गोरों तथा उनके एजेंटों को 27 जुलाई, 1950 की बैठक में उत्तर देते हुए डॉक्टर रामगुलाम कहते हैं, "उन्हें (गोरों को) या तो गिरना है अथवा हमारे साथ उठना है। ऐसा नहीं हो सकता कि जनता का एक वर्ग अपने हाथों में सारी सत्ता रखकर अलग रहे। मैं आशा करता हूँ कि मेरे दोस्त अवसर को हाथ से न जाने देकर, हमारे साथ आकर खड़े होंगे। अगर ऐसा न हुआ तो मुझे डर है कि वे पीछे न रह जायें।"

श्रमिकों, कारीगरों और अन्य काम करने वालों को थोड़ी सी मजदूरी देकर काम करवाया जाता था। इससे उन्हें बड़ी आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। वे अपने बच्चों का उचित भरण-पोषण करने में असमर्थ थे। देश में भ्रष्टाचार, अन्याय का बाजार गर्म था। गौपालकों को उनकी गौओं के लिए चारा पाने की सुविधा नहीं दी जाती थी। पीड़ितों को देखकर डॉक्टर साहब को बड़ी दया आती थी ! 27 नवम्बर, 51 को उन्होंने कहा—"बीते दिनों में जिन लोगों ने इस देश को अपने हितों में चलाया है, उन्हें अगर मैं कोई सलाह दे सकता हूँ तो यह कि अब वह समय आ गया है कि वे जीवन और घटनाओं की बदलती स्थितियों से जरा समझौता करें।"

उन्होंने 8 अप्रैल, 1953 को कहा कि समय-समय पर प्रस्ताव आया है कि मजदूरी पाने वालों को दो रुपये चौवन सेंट से अधिक मिले । पब्लिक वर्क के कर्मचारियों, जो मलेरिया विभाग के हैं तथा अन्य लोगों के लिए सरकार ने क्या किया है ? "उन्होंने आगे कहा—"मुझे वर्तमान शासन में विश्वास नहीं है और न ही जिस तरीके से सरकार छोटे कर्मचारियों से बरताव कर रही उससे है।"

18 अप्रैल, सन् 1952 को भ्रष्टाचार पर बोलते हुए डॉ० साहब कहते हैं—पुलिस विभाग और कस्टम दोनों में सर्वत्र भ्रष्टाचार है, क्योंकि इन कर्मचारियों का चयन और भरती ठीक से नहीं हुई है। आप कस्टम में जायें, भ्रष्टाचार है, राजकोष में भ्रष्टाचार है, सर्वत्र भ्रष्टाचार है........कहीं पर गलती जरूर है और वह है कर्मचारियों का गलत तरीके से चयन करना। जनता जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में कुंठित, निराश है....अतः इस अनुमानिक बजट का मैं गम्भीरता से अध्ययन करूँगा, बजट के बारे में मैं अब भी स्वतन्त्र विचार रखता हूँ, किन्तु मुझे पूरा निश्चय नहीं है कि मैं इस अनुमानिक बजट को वोट करूँगा।"

अनुमानित बजट और संसदीय कार्य-विधि पर बहस चल रही थी। डॉक्टर रामगुलाम ने अपने तर्कपूर्ण भाषण से सभी सदस्यों को, प्रभावित कर दिया। निर्वाचित सदस्यों को यह ख्याल आया कि डॉक्टर रामगुलाम जैसे अनुभवी राजनीतिज्ञ के मार्गदर्शन और नेतृत्व की उन्हें कितनी आवश्यकता है। उन्होंने महसूस किया कि उनके बिना वे संसद के मामलों को लेकर अन्धकार में भटकते रहते। डॉक्टर साहब ने उन्हें राजनीति की रोशनी में खड़ा किया, उनका स्वप्न साकार किया। उन्होंने वयस्क मताधिकार, भविष्य के लिए विस्तृत प्रजातन्त्र और स्वतन्त्रता का मार्ग दर्शाया।

18 जुलाई, 1950 को कौंसिल में अनुमानित बजट पर बोलते हुए डॉक्टर

साहब ने कहा "बुढ़ापे की पेंशन आदि की व्यवस्था में, श्रमिक वर्गों के हित के लिए सरकार ने हमारे साथ काफी सहयोग किया है। अगर मैं इस (पेंशन) के खिलाफ अपने विचार व्यक्त करूँ तो जिन लोगों ने मुझे यहाँ भेजा है, शायद वे मुझे कृतघ्न समझेंगे। यह कल्पना नहीं की जा सकती कि बहुमत से उत्तीर्ण होने वाले उन्नीस सदस्य कार्यपालिका सभा में एक से अधिक सदस्य को भेजने में कैसे असमर्थ रहे। वे इस स्थिति में न थे कि उक्त सभा में अधिक सदस्यों को भेजे। इससे इस बात पर प्रकाश पड़ता है कि चुनाव के तरीके कैसे थे।

अगर अब हमें चुनावों में त्रुटि नजर आती है, तो वह गलती उनकी नहीं, हमारी है। लेकिन ईमानदारी से बात की जाय तो यह गलती उन नियमों में है जिनके माध्यम से कार्यपालिका के लिए सदस्य चुने जाते हैं। समस्या उन दोषपूर्ण नियमों के कारण है और वहीं हल ढूँढना है।

अतः अध्यक्ष महोदय, अब समय आ गया है कि इस उपनिवेश में सभी को वयस्क मताधिकार देने की बात को लागू किया जाय। इस देश को तथा इस देश के लोगों को एक उत्तरदायी सरकार (Responsible Government) देने का बिल्कुल वक्त आ गया है। राज्यसचिव समय-समय पर कहते हैं कि गृहसरकार को जहाँ भी सम्भव दीखे, वहाँ उपनिवेशों को स्वायत्त शासन देने का इरादा है। आज राज्यसचिव के इरादे को कार्यान्वित करने का पूर्णतया समय आ गया है। मैं सोचता हूँ कि मॉरीशस जैसे देश में, जिसकी सभ्यता और संस्कृति दो सौ वर्षों से ऊपर की है, यदि स्वायत्त शासन का फौरन प्रयोग किया गया तो बेहतर होगा। यही वह हल है। जिन कठिनाइयों में हम हैं और जिनका जिक्र माननीय औपनिवेशिक सचिव ने अभी हाल में एक व्याख्यान के दौरान किया था, उन कठिनाइयों से निकलने का यही एकमात्र रास्ता है। केवल उत्तरदायी सरकार होने तथा इस देश में हमें जो कुछ करना और कहना है, उस पर ध्यान देने से ही हम इस देश की सरकार को सुचारु रूप से चला सकते हैं। हमें आने वाले वर्षों में एक स्वतन्त्र जाति की तरह रहकर मेल-जोल से आजाद राष्ट्रकुल में काम करना है।"

डॉ० रामगुलाम ने अपने उपर्युक्त भाषण में जहाँ सरकार के प्रति बुढ़ापे की पेंशन की व्यवस्था करने के कारण अपना आभार प्रकट किया है, वहाँ देश में व्याप्त समस्याओं के समाधान के दो उपाय बताये हैं—उत्तरदायी सरकार और सबको वयस्क मताधिकार देना। इन दो उपायों को कार्यान्वित करने से ही प्रजातन्त्र के सिद्धान्तों पर चलकर देश को स्वतन्त्रता दिलायी जा सकती थी। व एक आजाद राष्ट्र के निर्माण का स्वप्न देख रहे थे। उन्हें पूरा विश्वास था कि संविधान के संशोधन से उनका सपना साकार होगा और जनता स्वतन्त्रता की हवा

में साँस ले सकेगी। अतः उन्होंने अपना सारा बल संवैधानिक सुधार में केन्द्रित कर दिया।

सरकारी अफसरों और राज्यपाल द्वारा मनोनीत सदस्यों के एक हो जाने के कारण 1948 के चुनाव में बहुमत से उत्तीर्ण होने के बावजूद भी कौंसिल में मजदूर दल का अल्पमत हो गया। यही कारण है कि डॉक्टर साहब द्वारा देश के विकास और जनसाधारण के हितों में व्यवस्थापिका सभा में प्रस्तुत किये गये अनेक प्रस्ताव पारित न हो सके। पाँच साल तक डट कर संघर्ष करने के पश्चात् डॉक्टर रामगुलाम तथा उनके दो सहायक रेंगानादेन सीनीवासेन और गी रोजमों ने महसूस किया कि संविधान में परिवर्तन अपेक्षणीय है। संवैधानिक सुधार से ही आम जनता की भलाई के कामों को गति दी जा सकती है। इसी बीच मजदूर दल को 1953 के आम चुनाव-अभियान में जुटना पड़ा।

अष्टम परिच्छेद

1953 के चुनाव में दूसरी विजय

30 जून, 1953 को व्यवस्थापिका सभा भंग कर दी गई। आम चुनाव की तिथि 19 और 20 अगस्त, 53 को निश्चित की गई। उस समय देश की आबादी 5,02,000 थी तथा मतदाताओं की संख्या 92,239 तक पहुँच गई थी। सब मिलाकर 78 उम्मेदवार 19 कुरसियों के लिए लड़ रहे थे। मजदूर दल ने 19 उम्मेदवार खड़े किये थे। केनिग द्वारा संचालित "रालीमां मोरिसियें पार्टी (Ralliement Mauricien) के 10 उम्मेदवार थे। 49 स्वतन्त्र उम्मेदवार थे। डॉक्टर रामगुलाम ने एक बार पुनः अपने दल का घोषणापत्र निकाला जो समाजवादी विचारों से ओत-प्रोत था। अन्यान्य बातों के साथ-साथ उन्होंने शक्कर उद्योग एवं बैंकों के राष्ट्रीयकरण और गरीबों की स्थिति में सुधार लाने के लिए सामाजिक सुविधाएँ उपलब्ध कराने के प्रस्ताव भी रखे थे। छोटे किसानों के लिए जिनकी संख्या गाँवों के मतदाताओं में सर्वाधिक थी, प्रस्ताव रखा गया कि शक्कर से प्राप्त होने वाली आमदनी को दो तिहाई भाग उन्हें दिया जायगा। इस बात पर भी जोर दिया गया कि शिक्षा और स्वास्थ्य-सुविधाओं में सुधार लाये जायेंगे।

जनता समझ गई थी कि उसके प्रतिनिधियों के प्रयत्नों के बावजूद भी समाजवाद से सम्बन्धित प्रस्तावों को कौंसिल में मान्यता नहीं मिली, क्योंकि सत्ता अभी तक सरकार के हाथों में थी। रालीमां मोरिसियें का भी घोषणापत्र निकला। वह सभी को मताधिकार देने के खिलाफ था। हालाँकि उसके घोषणापत्र में शिक्षा सम्बन्धी सुधार लाने और आहार के लिए सहायता पहुँचाने का वादा किया गया था तो भी वह पूँजीपतियों का ही पोषक था।

ले मोरिसियें (Le Mauricien) और ले सेरनेएँ (Le Cerneen) पत्रों के सहयोग से रालीमाँ मोरिसियें ने एक साम्प्रदायिक आन्दोलन शुरू करके मॉरीशस में भारतीयता, मॉरीशस-भारत के सम्बन्ध आदि की बातें सामने रखीं। मजदूर दल में हिन्दुओं का अधिक प्रभाव देखकर वह दल जलता था। उस दल का मकसद था—मजदूर दल से रंगीन तत्व के मतदाताओं को डराकर अलग करना, ताकि मजदूर

दल के उम्मेदवारों की शक्ति घट जाय। इसलिए रंगीन तत्व के लोगों को हिन्दुओं से अलग करने की कोशिश की जा रही थी।

मजदूर दल ने एक सुसंगठित और सुव्यवस्थित पार्टी की तरह चुनाव की लड़ाई लड़ी। उसमें योग्य उम्मेदवार थे, जिनमें कुछ नये लोग भी थे, जैसे डॉ० भागीरथी, डॉ० शापेरों, श्री शाजियें आदि। इनके अतिरिक्त उसमें निम्नलिखित अनुभवी और सुयोग्य लोग भी थे-रॉय, रोजमों, सीनीवासेन, डॉ० मिलियें, गी फोरजेत रेमों रो, बिजाधर, वागजी, विरासामी रिंगाडू और खुद डॉक्टर रामगुलाम। ये लोग टापू-भर में जुटाव करके भारी जनसमूह में उत्साह पैदा कर रहे थे और जनता को अपनी ओर आकृष्ट कर रहे थे। सभी गाँव मजदूर दल के समर्थक थे। रालीमाँ मोरिसियें दल अपनी सारी शक्ति और ध्यान शहरों में केन्द्रित करने का पूरा प्रयत्न कर रहा था। सुखदेव विष्णुदयाल दक्षिण प्रान्त के लोकप्रिय नेता थे। उनकी टोली में गोइनत्सामी बेंकातासामी और सतकाम बूलेल थे। चुनाव के बाद ये दोनों मजदूर दल में सम्मिलित हो गये।

मजदूर दल की पुनः भारी जीत हुई। चुनाव-फल ने जाहिर कर दिया कि मजदूर दल आम जनता की पार्टी बन गया था। इस दल ने तेरह कुरसियाँ प्राप्त कीं जबकि रालीमाँ मोरिसियें केवल दो ही कुरीसियाँ प्राप्त कर सका : पोर्टलुई में रजाक मोहम्मद उत्तीर्ण हुए और प्लैन विल्येम्स में केनिग। जो लोग स्वतन्त्र उम्मेदवार बनकर चुनाव में खड़े हुए थे, उनमें चार व्यक्ति सफल हुए।

राज्यपाल ने एक बार फिर निर्णय लेने में उचित विधि नहीं अपनाई। कौंसिल के लिए अधिकतर अनुदारपंथियों को ही सदस्य मनोनीत किया गया। छः गोरे, दो ब्रिटिश, दो मुस्लिम और एक चीनी। उनके नाम थे—डॉ० दे शाजाल, आरमेग्रो, ए. नइराक, एच. राफ़े, ए. साजिएँ, एम. शिल्लिंग, डी. टेइलर एच. बहेमिया, ए. एम. ओसमान और आई. आचुएन।

दो सप्ताह बाद—23 सितम्बर, 1953 को धारा परिषद् ने श्री अकबर गजाधर, आँद्रे नइराक, डॉक्टर एडगाअ मिलियें और डॉक्टर रामगुलाम को कार्यपालिका सभा में बैठने के लिए चुना। उसी दिन मजदूर दल के प्रधान, रोजमों ने संविधान में अधिक सुधार लाने के विषय पर विचार-विमर्श करने के लिए एक शिष्टमण्डल को लन्दन भेजने का प्रस्ताव किया। चुनाव से साफ जाहिर हो गया था कि मतदाताओं ने वयस्क मताधिकार एवं स्वायत्त शासन के पक्ष में बड़ी खूबी से मतदान किया था। डॉक्टर रामगुलाम और साथियों ने रोजमों के प्रस्ताव का आम जुटावों में भाषण देकर तथा "एडवांस" पत्र पर लेख लिखकर समर्थन किया।

फलतः 30 सितम्बर को कौंसिल ने अनेक पदों पर विभिन्न व्यक्तियों को अधिकारी नियुक्त किया गया। कृषि एवं मछली–उद्योग विभाग के लिए डॉ. मिलियें, स्वास्थ्य सामाजिक सुरक्षा एवं जेल विभाग के लिए रेंगानादेन सीनीवासेन, रोजगार विभाग के लिए आँद्रे नइराक और शिक्षा विभाग के लिए डॉक्टर रामगुलाम अधिकारी बने। अपने तीन साथियों के साथ, 1951 में पहली बार के लिए डॉ० साहब ऐसे अधिकारी नियुक्त हुए थे। सम्पर्क अधिकारी के रूप में इन चारों को राज्यपाल और अपने-अपने विभाग के बीच संयोजन स्थापित करना था। इन पदों पर नियुक्ति का उद्देश्य था— इन्हें भावी मन्त्रियों के रूप में प्रशिक्षित करना, ताकि ये अपनी जिम्मेदारी और सत्ता को खूबी से सम्भाल सकें। कार्यपालिका के सदस्यों एवं नियुक्त सम्पर्क अधिकारियों से अपेक्षा की जाती थी कि वे राज्यपाल को कौंसिल में सहयोग दें तथा उन्हें उत्तरदायित्व सम्भालने में अपना योगदान दें। किन्तु कौंसिल में मनोनीत सदस्य इन निर्वाचित सदस्यों और पदों पर नियुक्त अधिकारियों का अक्सर विरोध करते थे। डॉक्टर रामगुलाम इन मनोनीत सदस्यों के सामने कभी भी हथियार नहीं डालते थे। डॉक्टर साहब कहते हैं– "मुझे पता था कि जब तक संविधान में सुधार नहीं आता तब तक प्रगति की आशा, दुराशा थी। मनोनीत सदस्यों के शिकंजे से छुटकारा नहीं मिल सकता था और न ही स्वायत्त शासन एक सच्चाई बन सकता था। हमारे हाथों में सत्ता न होने के कारण जनता से जितने भी वादे हमने किये थे, उन्हें कार्य में परिणत नहीं कर पाते थे। अनुदार पंथी हमारे प्रस्तावों को अपने वोट की तलवार से काट देते थे। वह एक अत्यन्त उत्तेजक स्थिति थी। इससे पार पाने के लिए मैंने 22 दिसम्बर, 1953 को एक बार पुनः प्रस्ताव रखा कि एक प्रतिनिधि मण्डल राज्यसचिव से मिलकर संवैधानिक सुधार के लिए विचार-विनिमय करे। इससे इस देश के लोगों की उचित अभिलाषाओं की पूर्ति हो सकती है। वे राजनीति सम्बन्धी विचारों को व्यक्त कर सकते हैं। मैंने यह स्पष्ट कर दिया कि कौंसिल में सदस्यों को मनोनीत करने की यह वर्तमान प्रणाली हर दृष्टि से असन्तोषजनक है। मैंने इस समस्या के निराकरण–हेतु सुझाव प्रस्तुत किया कि मनोनीतों की संख्या कम करके निर्वाचित होने वाले सदस्यों की संख्या 28 तक बढ़ा दी जाय। एक सदस्य वाले लघु चुनाव-क्षेत्रों में शक्कर कोठियों द्वारा दी जाने वाली धमकी और घूस तथा साम्प्रदायिक प्रभाव उत्पन्न करने वालों के विरुद्ध मैंने आवाज उठाई।

इस बार मेरा प्रस्ताव तीन के बहुमत से पास हुआ। राज्यसचिव, ऑलिवर लिटलटन ने अपने 19 फरवरी, 1954 के पत्र में गवर्नर महोदय को इस प्रस्ताव पर अधिक प्रकाश डालने को कहा। जैसा कि आशा की जाती थी, गवर्नर ने अपने उत्तर में मनोनीत सदस्यों का पक्ष लेते हुए धारा परिषद् में उनकी आवश्यकता और महत्व पर जोर दिया। इसके अतिरिक्त उन्होंने व्यवस्थापिका एवं कार्यपालिका सभा

में तथा मनोनीत और निर्वाचित सदस्यों के बीच झगड़े, आपसी सन्देह आदि उत्पन्न करने का दोष हमारे ही सिर पर मढ़ा । निर्वाचित सदस्यों का उस सरकार को सन्देह की दृष्टि से देखना स्वाभाविक था, जिस सरकार में उन सुधारविरोधी मनोनीत सदस्यों की भरमार थी, जो कुलीनतन्त्र को कायम रखने में बड़ी ही दिलचस्पी दिखाते थे तथा उस औपनिवेशिक सरकार से कन्धे से कन्धा मिलाकर काम करते थे । सरकार अल्पमत वालों के हितों की रक्षा के लिए जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों के विरोध में खड़ी थी ।

फलत: राज्यपाल, सर रॉबर्ट स्कॉट (Sir Robeart Scott) ने राज्यसचिव को उत्तर दिया कि मनोनीत सदस्यों की धारा परिषद् में इसलिए आवश्यकता है, क्योंकि वे व्यवस्थापिका में सब जातियों के प्रतिनिधित्व वाली बात को सार्थकता देने के लिए नियुक्त किए गए हैं । वास्तव में यह एक गलत बात थी जिसमें विरोधाभास था । लेकिन उन्होंने इस बात की भी सिफारिश की, ।क निर्वाचित सदस्यों की संख्या 25 कर दी जाय । उन्होंने सब को वयस्क मताधिकार देने का हमारा प्रस्ताव स्वीकार कर लिया । उन्होंने यह भी कहा कि विभागाधिकारियों की नियुक्ति की प्रणाली के स्थान पर अधिक उत्तरदायित्व के साथ, सरकारी संयुक्त उत्तरदायित्व के सिद्धान्त पर छः सदस्यों की नियुक्ति होनी चाहिए । उनका "रिसपोंसिबल गवर्नमेंट" का यही अर्थ था । राज्यपाल महोदय व्यवस्थापिका सभा में एक पूर्णतया स्वतन्त्र, न्यायप्रिय, निष्पक्ष और सक्षम अध्यक्ष की नियुक्ति के पक्ष में थे ।"

"आवर स्ट्रगल" (Our Struggle) पुस्तक के पृष्ठ इक्यासी में डॉक्टर रामगुलाम कहते हैं, "यह हमारे लिए एक दु:साध्य कार्य था, किन्तु हमने राजनीतिक मैदान में अपनी बहसों, तर्कों कठिन कामों के माध्यम से औपनिवेशिक सरकार की आलोचनाओं से बलपूर्वक लड़ने का दृढ़ संकल्प कर लिया था । अनवरत संघर्ष के बिना, स्वतन्त्रता पाने की जगह, मॉरीशस दक्षिण अफ्रीका और रोडेशिया की तरह मुट्ठी भर लोगों के कब्जे में आ सकता था ।"

उपर्युक्त कथन के आलोक में यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रजातन्त्र के सिद्धांतों पर आधारित एक नये संविधान के लिए डॉक्टर रामगुलाम को बड़ा ही भारी संघर्ष करना पड़ा है । नये संविधान के बिना देश की प्रगति की कल्पना करना असम्भव था ।

आनुपातिक प्रतिनिधित्व की लड़ाई

रालीमॉ मोरिसियें दल अब "पार्ची मोरिसियें" नाम से जाना जाता था । इस दल ने लेबर पार्टी पर प्रत्याक्रमण करने का एक नया तरीका अपनाया । यह

गोरों का ही दल था। कभी-कभी रजाक मोहम्मद और दहाल जैसे मुस्लिम भी इस पार्टी का समर्थन करने लग जाते थे। कौंसिल के गोरे सदस्यों के साथ-साथ रजाक-मोहम्मद, आजम दहाल, चीनी प्रतिनिधि आचुएन, रंगीन तत्व के जुविविए, इचिए आदि सदस्यों ने गवर्नर महोदय को एक अर्जी भेजकर माँग की कि वे राज्यसचिव को इस बात के लिए प्रेरित करें कि तीन प्रतिनिधियों वाले हर चुनावक्षेत्र में तीन की जगह, एक उम्मेदवार को एक वोट देने की नीति अपनायी जाय ताकि इस देश में अल्पसंख्यक जनता की रक्षा हो सके। उपर्युक्त कौंसिल-सदस्यों के अनुसार "एक आदमी एक वोट" वाली नीति अपनाने से मतलब था प्रत्येक चुनावक्षेत्र से अपने-अपने सम्प्रदाय का एक प्रतिनिधि चुनना।

डॉक्टर रामगुलाम अनुपाती प्रतिनिधित्व के विरोध में थे, क्योंकि इस अलगाव नीति से साम्प्रदायिक विभाजन की सम्भावना थी। वे परस्पर सहयोग एवं सहिष्णुता पर आधारित एक सबल मॉरीशस राष्ट्र का निर्माण करना चाहते थे। यह तभी सम्भव हो सकता था, जब सभी देशवासी संगठित होकर देश-सेवा में लग जाते। अनुपाती प्रतिनिधित्व के आधार पर चुनाव लड़ने में देश की एकता खंडित होती थी। इस अलगाव नीति को अपनाने से छोटी-छोटी साम्प्रदायिक पार्टियों का जन्म होता। इन साम्प्रदायिक झगड़ों से लाभ उठाकर कुलीनतन्त्र अपनी शक्ति को और भी बढ़ा लेते। फलतः अल्पसंख्यक सम्प्रदायों का सहयोग पाकर अनुदारपंथी अपने शासन को स्थिर बनाये रखते। गवर्नर महोदय को अर्जी भेजने वाले अपनी माँग की पूर्ति के लिए सब-कुछ करने को तैयार थे क्योंकि उन्हें हिन्दू शासन के नाम से भयभीत कर दिया गया था। मुसलमानों ने उस अर्जी में माँग की थी कि उन्हें भारतीय आप्रवासियों से बिलकुल एक अलग श्रेणी में ही रखा जाय। मॉरीशस के मुसलमानों को पता था कि भारत में अलगाववादी मुसलमानों ने "मुस्लिम-लीग" के बल पर पाकिस्तान को जन्म दिया। भारतीय मुसलमानों को उक्त नीति अपनाकर पाकिस्तान के निर्माण में जो सफलता मिली, उसका स्पष्ट प्रभाव मॉरीशसीय मुसलमानों पर पड़ा। इसलिए रजाक मोहम्मद ने केनिंग की पार्टी का साथ दिया।

अर्जी के परिणामस्वरूप उपनिवेशों के संसदीय उपसचिव लार्ड मन्सटर सन् 1954 के जून मास में मॉरीशस आये. मजदूर दल ने इस मौके से लाभ उठाकर उन्हें एक मेमोरेंडम देते हुए अपनी माँगें प्रस्तुत कीं जो इस प्रकार थीं :—

1. सभी वयस्कों को मताधिकार दिया जाय।

2. धारा परिषद् का गठन 25 निर्वाचित, 6 मनोनीत और 3 एक्स आफिसियो (Ex officio) सदस्यों को सम्मिलित करके किया जाय।

3. मनोनीत सदस्यों की नियुक्ति सरकार द्वारा और बहुमत दल के नेता की मन्त्रणा के बाद की जाय।

4. कार्यपालिका सभा में राज्यपाल अध्यक्ष हो। इस सभा का गठन तीन एक्स ऑफिसियो, एक मनोनीत और छः निर्वाचित सदस्यों से किया जाय।

5. कार्यपालिका सभा के छः निर्वाचित सदस्य बहुमत दल के नेता द्वारा नियत किये जायें।

6. बहुमत दल के नेता को प्रधान मन्त्री तथा संसद के नेता की पदवी दी जाय।

7. गैर सरकारी सदस्य (Unofficial Members), यानि कार्यपालिका के निर्वाचित सदस्यों को मन्त्री की पदवी दी जाय।

डॉक्टर रामगुलाम मजदूर दल की ओर से जो माँग कर रहे थे, वह थी मन्त्रि मंडल प्रणाली पर आधारित एक मन्त्रिमंडलीय सरकार। किन्तु रालीमाँ-मोरिसियें ने मजदूर दल के हर प्रस्ताव का विरोध किया। उसने आनुपातिक प्रतिनिधित्व के प्रस्ताव को सामने रखते हुए तर्क पेश किया कि मन्त्रिमंडलीय सरकार का अर्थ होगा—इस देश के बहुसंख्यक हिन्दुओं का शासन स्वीकार करना। सत्ता हिन्दुओं के हाथ में होने से, हिन्दूशासन के एक त्रासभरे युग का जन्म होगा और अन्ततः मॉरीशस भारत का एक अंग बन जायेगा।

फलतः एक सांसदीय शिष्टमण्डल औपनिवेशिक दफ्तर (Colonial of fice) से संवैधानिक विषयों पर विचार-विनिमय करने के लिऐ लन्दन गया। तत्कालीन राज्यपाल सर रोबर्ट स्कॉट ने उस प्रतिनिधि मण्डल का नेतृत्व किया। उस मंडल में मजदूर दल के चार सदस्य, रालीमाँ मोरिसियें के दो और दो मनोनीत सदस्य थे। उस वार्ता को आरम्भ से ही निष्प्रभाव कर दिया गया। रालीमाँ मोरिसियें हिन्दू शासन के विषय को लेकर अड़ा रहा। उसने अनुपाती प्रतिनिधित्व पर जोर दिया। राज्य सचिव ने गवर्नर के साथ कुलीनतन्त्र का पक्ष लेते हुए अनुपातिक प्रतिनिधित्व का ही समर्थन किया। यह साफ जाहिर था कि फ्रांसीसी मूल के लोग इस बात से भयभीत थे कि प्रजातान्त्रिक सिद्धान्तों को अपनाने के कारण कहीं सत्ता उनके हाथों से निकल न जाय। इसीलिए वे जनता के प्रतिनिधियों की लोकतन्त्रात्मक शासन की माँग को निष्फल करना चाहते थे। मॉरीशस के गोरे, जनता के समाजवादी प्रतिनिधियों को उसी प्रकार सत्ता नहीं देना चाहते थे, जैसे दक्षिण अफ्रीका, रोडेशिया, अंगोला और मोजाम्बिक के मुट्ठी भर गोरे शासक।

अतः मजदूर दल के विरोध में अल्पमत वालों की छोटी-छोटी पार्टियों को

संगठित करके रालीमाँ मोरिसियें ने संघर्ष छेड़ दिया। इस दल ने कुछ मुसलमान, चीनी और रंगीन तत्व के नेताओं को अपने वश में कर लिया। अल्पसंख्यक लोगों ने महसूस किया कि यदि अनुपाती प्रतिनिधित्व की माँग पर अड़े रहें तो अन्त में मजदूर दल को परास्त कर सकेंगे।

अफ्रीका, एशिया और वेस्ट इन्डिज के अनेक अन्य देशों की भाँति मॉरीशस ने ब्रिटिश औपनिवेशिक सरकार से अपनी आजादी की माँग एक स्वर में और एक जनता की तरह नहीं की। यह इसलिए कि यहाँ की फ्रांसीसी जनता औपनिवेशिक नीति के अनुसार लम्बे समय से सत्ता का सुखोपभोग कर रही थी। यहाँ के गोरों ने लोमड़ी चाल चलकर सभी अल्पसंख्यक जातियों को हिन्दू शासन से भयभीत करके उन्हें हिन्दुओं का विरोधी बना दिया। हिन्दुओं ने इस वीरान देश को अपने खून-पसीने से सींचकर उद्यान बनाया था और उन्हीं हिन्दुओं ने संगठित होकर इस देश की परतन्त्रता की बेड़ी काटने में अपने नेता डॉक्टर रामगुलाम का साथ दिया।

पार्ती मोरिसियें (रालीमाँ मोरिसियें) और लेबर पार्टी की माँगों ने राज्य सचिव के सामने एक संघर्षपूर्ण वातावरण उपस्थित कर दिया। दोनों दल कार्यपालिका के लिये गैर सरकारी सदस्यों (Unofficial members) के चयन, व्यवस्थापिका सभा के गठन, निर्वाचन-प्रणाली और वयस्क मताधिकार के प्रश्नों को लेकर किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँच पा रहे थे। गरमागरमी बहस थी और समझौते को तैयार न थे।

ब्रिटिश सरकार के सामने सबसे बड़ी समस्या थी—मॉरीशस जैसे बहुजातीय देश में अल्पसंख्यक गोरों की माँग को स्वीकार करना, गोरे संवैधानिक परिवर्तन के विरुद्ध थे। ब्रिटिश सरकार को एक ऐसा हल ढूँढना था, जो प्रत्येक जाति को उचित प्रतिनिधित्व का मौका दे सके और प्रत्येक सम्प्रदाय के लोग सन्तुष्ट हो सकें। मजदूर दल ब्रिटिश सरकार की इस समस्या को ठीक से समझता था और समस्या के समाधान में अपना पूरा सहयोग देने को तैयार था। किन्तु किसी भी हालत में अनुपाती प्रतिनिधित्व को स्वीकार नहीं कर सकता था। इस विषय पर किसी भी प्रकार का समझौता नहीं हो सकता था।

राज्यसचिव ने गवर्नर से सिफारिश की कि वे कौंसिल में निम्नलिखित विषयों पर निर्णय लें—

1. धारा परिषद् में एक अध्यक्ष (Speaker) की नियुक्ति हो।
2. कार्यपालिका सभा में गैरसरकारी सदस्यों को बढ़ाकर नौ कर दिया जाय।
3. निर्वाचित सदस्यों की संख्या 19 से बढ़ाकर 25 कर दी जाय।
4. बहुसदस्यों वाले चुनाव क्षेत्र कायम रखे जायें।

5. मनोनीत सदस्य बारह रखे जायें और मन्त्रिमण्डल-प्रणाली का सूत्रपात किया जाय।

उपयु`क्त सुझावों के साथ अनुपातिक प्रतिनिधित्व की बात भी कही गई जिससे मजदूर दल वाले रुष्ट हुए । जब कौंसिल की बैठक लगी तब वाद-विवादों के दौरान डॉक्टर रामगुलाम ने अनुपाती प्रतिनिधित्व का दृढ़तापूर्वक विरोध किया। परन्तु एक वोट से मजदूर दल पीछे रह गया । कौंसिल में अभी तक सुधार-विरोधी लोगों, मनोनीतों एवं सरकारी अधिकारियों की ही प्रभुता थी। डॉक्टर रामगुलाम ने ' अनुपाती प्रतिनिधित्व'' विषय को धारा परिषद् से बाहर ले जाकर अनेक ग्राम चुनावों में उसके खिलाफ आवाज उठाई। उन्होंने औपनिवेशिक सरकार एवं संवैधानिक विकास के विरोधी, पार्ची मोरिसियें को दोषी ठहराया। पार्ची मोरिसियें वह राजनीतिक दल था जिसमें गोरों की ही प्रभुता थी। 'एडवान्स' और 'मॉरीशस टाइम्स' आदि पत्रों पर अनुपातिक प्रतिनिधित्व के खण्डन में लेखमाला प्रकाशित की गई। कौंसिल की बैठकों का बहिष्कार किया गया। पोर्टलुई के एक उपचुनाव में अनुपाती प्रतिनिधित्व के पक्षधर पार्ची मोरिसियें के उम्मेदवार के विरुद्ध मजदूर दल के उम्मेदवार की भारी जीत हुई। इस विजय के पश्चात् मंत्रिमण्डल प्रणाली को कार्यान्वित करने की एक बैठक में मजदूर दल ने भाग लेने से इन्कार किया तथा कार्यपालिका सभा के चुनाव का भी बहिष्कार किया।

मंत्रिमण्डल प्रणाली

श्री लेनोक्स बोइड को ख्याल आया कि सारी परेशानियों का कारण उनके द्वारा अनुपाती प्रतिनिधित्व का थोपना है। अपनी भूल को सुधारने के लिए सन् 1956 के सितम्बर मास में उन्होंने पुनः संवैधानिक सुधार हेतु एक सम्मेलन किया। उस सम्मेलन के निष्कर्ष 'लन्दन एग्रीमेंट' (London Agreement) के नाम से जाने जाते हैं। उक्त संविदा निम्न प्रकार था—

1. चुनाव प्रणाली व्यापक वयस्क मताधिकार (Universal Suffrage) पर आधारित हो।

2. मतदान करने की प्रणाली मॉरीशस के सभी वर्गों को धारा परिषद् के लिये अपनी संख्यानुसार प्रतिनिधि चुनने का अवसर प्रदान करे।

यही अनुपाती प्रतिनिधित्व की समस्या को हल करने का एक उपाय था। इसे अल्पसंख्यक लोगों के हितों की रक्षा करने के लिये प्रस्तुत किया गया था। मजदूर दल को उक्त निर्णय से कोई आपत्ति न थी।

3. चुनाव-प्रणाली को ऐसा होना चाहिये कि वह निर्वाचन की सुविधा राजनीतिक सिद्धान्तों अथवा पार्टीबाजी के अनुसार प्रदान करे, न कि साम्प्रदाय या धर्म के आधार पर।

यह "लन्दन-संविदा" महत्वपूर्ण थी । फिर भी संवैधानिक विकास को गति देते हुए भी यह देश को उतनी दूरी तक न ले जा सकी जितनी दूर तक डॉक्टर रामगुलाम ले जाना चाहते थे। अपने मेमोरेंडम में मजदूर दल ने लार्ड मन्सटर (Lord Manster) से जो माँगें की थीं, वे दल को सन्तुष्ट न कर सकी । स्वायत्त शासन प्रणाली में मन्त्रि-मण्डल के मुखिया प्रधानमन्त्री हुआ करते हैं । लार्ड मन्सटर ने इसकी कोई व्यवस्था नहीं की । सत्ता अभी तक मुख्यतः गवर्नर के हाथों में ही थी। डॉक्टर रामगुलाम ने मंत्रि-मंडल के गठन पर जोर दिया था और उसी के परिणामस्वरूप सन् 1958 के जुलाई मास में कुल नौ मंत्रियों की नियुक्ति में से मजदूर दल के छः सदस्य और तीन मनोनीत सदस्य मन्त्री पद पर आ सके। इस मन्त्रि-मण्डल प्रणाली के जन्म होने से मजदूर दल की शक्ति बढ़ गई । अब व्यवस्थापिका और कार्यपालिका दोनों पर ही मजदूर दल का अधिकार था । यह उचित ही था, क्योंकि सन् 1948 से 58 तक लेबर पार्टी ही एक मात्र राष्ट्रीय राजनीतिक दल थी।

'रालीमाँ मोरिसियें' अब "पार्ची मोरसियें" नाम से प्रसिद्ध हो गया था । जब धारा परिषद् में मजदूर दल विरोधी दल की भूमिका निभाता था तब रालीमाँ मोरिसियें ब्रिटिश सरकार के साथ सत्ताधारी दल था। अब सत्ता मजदूर दल के हाथ में आ गई और पार्ची मोरिसियें विरोधी दल बन गया।

7 अप्रैल, 1959 को कौंसिल के निम्नलिखित सदस्य मन्त्री नियुक्त हुए : वित्त मन्त्रालय के सचिव पद पर डॉक्टर रामगुलाम, कृषि मन्त्री के पद पर सतकाम बूलेल, शिक्षा मन्त्री के रूप में अनत विजाधर, स्वास्थ्य मन्त्री पद पर गी फोरजेट, भूमि और आवास मन्त्री पद पर रजाक मोहम्मद, वाणिज्य मन्त्री के पद पर आँद्रे लोरेन्स नइराक, श्रम मन्त्री विरासामी रिंगाडू, स्थानीय शासन और सहकारी मंत्री फेलिक्स लाँवाचीर और हारोल्ड वाल्टर मिनिस्टर ऑफ वर्क्स पद पर नियुक्त हुए।

"आवर स्ट्रगल" पुस्तक के पृष्ठ पचासी पर डॉक्टर रामगुलाम कहते हैं— "जब हम मन्त्री नियुक्त किये गये थे तब हम परीक्षणकाल के नौसिखियों की तरह समझे जाते थे। हम मंत्रियों की सत्ता से वंचित थे, क्योंकि निर्णय लेने और हम पर वीटो करने का अधिकार अभी तक गवर्नर के हाथ में था। फिर भी हम अपने कदम गवर्नमेंट हाउस में मजबूती से जमाने का अधिकार प्राप्त कर चुके थे। मैंने गवर्नमेंट हाउस से जर्जर कुलीनतन्त्र की घिसी-पिटी व्यवस्था को हटा देने का संकल्प कर लिया।"

डॉक्टर साहब आगे कहते हैं—

"अगला महत्वपूर्ण सुधार निर्वाचन सम्बन्धी था। "लन्दन एग्रीमेंट" के जो

निर्णय थे, उनके अनुसार चुनाव आयुक्त को यह प्रबन्ध करना था कि मॉरीशस की जनता के हर मुख्य वर्ग का धारा परिषद में अपने सम्प्रदाय की संख्या के अनुसार प्रतिनिधित्व रहे। सभी वयस्कों को मतदान देने के अधिकार पर चुनाव को आधारित होना था। 1952 की जनगणना की 6,00,000 की आबादी में मतदाताओं की संख्या लगभग 2,77,500 की थी, उसके आधार पर चुनाव कमिश्नर को यह निश्चय करना था कि जनता के मुख्य वर्ग का अभिप्राय क्या था। तीन मुख्य वर्ग थे हिन्दू, रंगीन तत्व के लोग और मुस्लिम। इनका प्रतिनिधित्व समानानुपात से होना चाहिये था। चूँकि भारतीय मूल के लोग बहुसंख्यक थे, इसलिए यह अत्यावश्यक था कि अधिकतर निर्वाचित प्रतिनिधि उनके समुदाय के हों।"

डॉक्टर रामगुलाम इसी पुस्तक में आगे लिखते हैं—

"मॉरीशस चालीस चुनाव क्षेत्रों में विभाजित था और प्रत्येक चुनाव क्षेत्र से केवल एक प्रतिनिधि चुनना था। हरेक क्षेत्र में 5000 मतदाता थे। लेकिन चुनाव क्षेत्रों की सीमा इस प्रकार निर्धारित की गई थी कि हमें साम्प्रदायिक विभाजन पर जोर देना पड़ा। सेक्रेटरी ऑफ स्टेट ने हमें ठीक चेतावनी दी थी कि वे छोटे-छोटे चुनाव-क्षेत्र साम्प्रदायिक विभाजन को स्थिर रखने में सहायक होंगे। वास्तव में, एक प्रतिनिधि वाले चुनाव-क्षेत्र जात-पाँत की भावना एवं साम्प्रदायिक संकीर्णता उभारने के लिए जिम्मेदार थे। इसके परिणामस्वरूप वागजी जैसे कर्मठ और योग्य समाजवादियों की हार हुई जबकि खास योग्यता न रखने वाले उम्मेदवार जीत गये। परन्तु स्वायत्त शासन एवं प्रगति के लिए हमें यह कीमत चूकानी ही पड़ी। मजदूर दल ने जनता के सभी वर्गों के निमित्त लोकतन्त्रात्मक प्रतिनिधित्व के लिए सदैव संघर्ष किया था जिसमें हर मॉरीशसवासी को उसके चुनाव सम्बन्धी एवं अन्य अधिकार निश्चित रूप से उपलब्ध हों।"

अतः हम देखते है कि सन् 1953 के चुनाव जीतने पर भी मजदूर दल को कौंसिल में तब तक पूरी सफलता न मिली जब तक व्यवस्थापिका और कार्यपालिका सभा में उसका वर्चस्व न हुआ। डॉक्टर रामगुलाम ने नियुक्त नये मन्त्रियों को पूरी शक्ति से सम्पन्न करने में भारी संघर्ष किया। जब तक उन्होंने पुराने संविधान में सुधार नहीं करवाया तब तक चैन की साँस नहीं ली। संवैधानिक सुधार से ही देश प्रगति-पथ पर आ सका।

नवम परिच्छेद

स्वतन्त्रता-आन्दोलन

संविधान से सम्बन्धित लन्दन में हुए दो सम्मेलनों के फलस्वरूप सन् 1958 के जुलाई मास में मॉरीशस को नया संविधान मिला। डॉक्टर रामगुलाम के नेतृत्व में मजदूर दल ने संवैधानिक सुधार की जो माँगें की थीं, उनमें बहुत सी - माँगों को स्वीकार किया गया। नये सविधान में व्यापक वयस्क मताधिकार (Universal Suffrage), उत्तरदायी सरकार (Responsible Government), मन्त्रिमण्डलीय प्रणाली (Ministerial System), धारा परिषद् में निर्वाचित सदस्यों के बहुमत तीन एक्स ऑफिसियो (Ex-officio) और बारह मनोनीत सदस्यों के होने का प्रावधान किया गया। "बेस्ट लूजर (Best Loser), विधि लागू की गई। इस विधि के अनुसार छः सीटें उन उम्मेदवारों को मिलनी थीं जो बहुत कम वोट के कारण चुनाव जीत न सकने वाले थे। इसके अतिरिक्त सरकारी सेवा में भरती करने तथा पदोन्नति की व्यवस्था करने के लिए एक लोक सेवा आयोग की स्थापना की गई थी। न्यायपालिका को स्वतन्त्र कर दिया गया था। ये सारी उपलब्धियाँ डॉक्टर रामगुलाम के अभियान का ही फल थीं।

नूतन संविधान पर आधारित आम चुनाव 9 मार्च, सन् 1959 को निश्चित किये गये। व्यापक वयस्क मताधिकार दिये जाने के कारण दिसम्बर, 1957 में निर्वाचकों की संख्या 91, 010 से बढ़कर 20,6,684 हो गई, जिनमें से 1,91,-586 मतदाताओं ने चुनाव में मतदान किया।

पार्ची मोरिसियें के नेता, केनिग के समर्थक-रजाक मोहम्मद को लगा कि मुसलमानों का हित केनिग के साथ चलने में नहीं है, बल्कि लोकप्रिय नेता रामगुलाम के साथी बनकर ही मुसलमानों की नैया पार लगाई जा सकती है। इसलिए उनके द्वारा स्थापित मुस्लिम कार्रवाई समिति (The Muslim Committee of Action) ने मजदूर दल से संधि की। मजदूर दल के कुछ सदस्यों को रजाक मोहम्मद के दल से संधि करने में आपत्ति थी, क्योंकि यह पूर्णतः एक साम्प्रदायिक पार्टी थी। किन्तु

डॉक्टर रामगुलाम ने महसूस किया कि मुस्लिम कार्रवाई समिति को साथ लेकर स्वतन्त्रता की लड़ाई लड़ने में सहयोग मिलेगा। उस समय गोरों का दल- पार्ची मौरिसियें रंगीन तत्व की जनता को हिन्दू शासन के नाम से भयभीत करके मजदूर दल के विरोधी बनाने में अपनी विपुल सम्पत्ति के बल पर हर मुमकिन कोशिश कर रहा था। चूंकि पार्ची मोरिसियें गोरों का दल था, इसलिए उसे देश के तमाम गिरजाघरों का सहयोग प्राप्त था। ईसाई होने के कारण रंगीन तत्व के लोग पार्ची मोरिसियें के झंडे तले इकट्ठे होने लगे थे।

सुखदेव विष्णुदयाल की कार्य-प्रणाली डॉक्टर रामगुलाम से भिन्न थी। दोनों की नीति-रीति में भेद था। डॉक्टर रामगुलाम कभी-कभार औपनिवेशिक सरकार की कई बातों से समझौता कर लेते थे। सुखदेव विष्णुदयाल डॉक्टर रामगुलाम के इस रवैये से सहमत न थे। इसीलिए उन्होंने अपनी एक नई पार्टी को जन्म दिया जिसका नाम स्वतन्त्र अग्रगामी दल (Independent Forward Block) रखा गया। सन् 1959 के आम चुनाव में मजदूर दल ने बत्तीस उम्मेदवार खड़े किये और स्वतन्त्र अग्रगामी दल ने तीस। मुस्लिम कार्रवाई समिति और पार्ची मोरिसियें ने सात-सात उम्मेदवार खड़े किये।

मजदूर दल ने अपना घोषणापत्र निर्वाचन से एक सप्ताह पहले निकाला। वह घोषणापत्र समाजवाद से सम्बन्धित उन धारणाओं पर आधारित था, जो सन् 1948 के चुनाव सम्बन्धी घोषणापत्र में रखी गई थीं। जिन प्रजातांत्रिक सिद्धांतों के लिए मजदूर दल ने वर्षों से संघर्ष किया गया था, अब उन्हें और आगे बढ़ाना चाहता था। डॉक्टर रामगुलाम ने वादा किया कि मतदान देने की उम्र को इक्कीस वर्ष से घटाकर अठारह वर्ष कर देंगे। इस वादे को उन्होंने सन् 1976 में पूरा किया। अन्याय हटाकर स्वास्थ्य एवं अन्य सामाजिक सेवाओं को बेहतर बनाने का आश्वासन भी दिया गया। समानता और समाजवाद की आधारशिला पर एक नये समाज की स्थापना पर भी जोर दिया गया। घोषणापत्र में यह भी कहा गया कि मॉरीशस को एक कल्याणकारी राज्य (Welfare State) बनाया जाएगा और इस जन-हितैषी राज्य में विश्वविद्यालयीन, प्रौद्योगिक और वाणिज्यिक शिक्षाओं की सुविधाएँ प्रदान की जायेगी। लम्बे संघर्ष के बाद डॉक्टर रामगुलाम ने इस वादे को भी पूरा किया। स्थानीय प्रजातन्त्र (Local democracy) को मजबूत बनाने के लिए आश्वासन दिया गया कि गाँवों और शहरों में सदस्य निर्वाचित किये जायेंगे, जिन्हें ग्राम परिषद् और नगर परिषद् के संचालन के लिए यथेष्ट अधिकार दिये जायेंगे। यह भी कहा गया कि शक्कर उद्योग के विकास के लिए सिंचाई की व्यवस्था की जाएगी और राष्ट्रकुल शक्कर संविदा (Commonwealth Sugar

Agreement) को मॉरीशस की निर्यात-मण्डी की सुरक्षा के लिए पुष्ट किया जाएगा। कृषि-कार्य के विकास तथा देश-भर में बिजली की व्यवस्था करने का भी वादा किया गया। इन सब कामों की पूर्ति के लिए पूर्ण रूप से राजनीतिक शक्ति, प्रभावकारी मन्त्री मण्डलीय प्रणाली, मन्त्रियों की संख्या में वृद्धि, स्वशासन, स्वतन्त्र उपनिवेश के स्टेटस आदि की आवश्यकता पर बल दिया गया।

दूसरी तरफ, निर्वाचन के मैदान में पार्ची मोरिसियें अपने कल-बल से लैस होकर मजदूर दल के विरुद्ध में खड़ा हुआ था। यह पार्टी अनुदारवादी कुलीनतन्त्र के गर्भ से ही पैदा हुई थी, किन्तु इसने गिरजाघरों से चन्द समाजवादी विचारों को लेकर समाजवाद का छद्मवेश धारण कर लिया था। इसने अपने घोषणापत्र में तथा चुनाव आन्दोलन के दौरान वादा किया कि श्रमिकों को अच्छी मजदूरी दिलायेगा, सामाजिक सुरक्षा के साधनों को कार्य में परिणत करेगा तथा नागरिक भृत्या (Civil Service) का मॉरीशसीकरण करेगा।

श्री सुखदेव विष्णुदयाल के स्वतन्त्र अग्रगामी दल ने चुनाव आन्दोलन के दौरान मजदूरों को दो जून पेट भर भोजन देने का आश्वासन दिया। सभी को नौकरी देने की बात भी कही गई। खेती-बारी करने के लिए इच्छुक जनता में राजकीय भूमि के वितरण का भी वादा किया गया। उत्तरदायी सरकार को प्रभावशाली बनाने के लिए, कौंसिल के लिए सदस्य मनोनीत करने की प्रणाली को रद्द करने की बात भी कही गई।

सन् 1956 में मजदूर दल के प्रधान, गी रोजमों और 1958 में रेंगानादेन सीनीवासेन की मृत्यु हो जाने से दल को काफी क्षति पहुँची। गी फोरजेत मजदूर दल के नये प्रधान नियुक्त किये गये। नवागत सदस्यों में खेर जगतसिंह, एड्डी चाँकाइ, जाँदे लैत्र, डी. नेपाल, विक्रमसिंह रामलाला, लक्ष्मी प्रसाद बद्री आदि थे। महारथियों में डॉक्टर रामगुलाम, वागजी, बिजाधर, रिंगाडू, बूलेल, जयनारायण रॉय आदि थे। रजाक मोहम्मद की पार्टी-मुस्लिम कार्रवाई समिति ने मजदूर दल के साथ संधि करके चुनाव की लड़ाई लड़ी। मजदूर दल की भारी जीत हुई। परिणाम इस प्रकार रहा :—चालीस सीटों में से मजदूर दल ने 31 सीटें जीतीं, स्वतन्त्र अग्रगामी दल ने 6 सीटें प्राप्त कीं और पार्ची मोरिसियें ने केवल तीन सीटें। चूँकि सुखदेव विष्णुदयाल के स्वतन्त्र अग्रगामी दल तथा लेबरपार्टी के उद्देश्यों में बड़ी समानता थी, सिवाय नेतृत्व एव कार्य-शैली की, अतः जयपाल और रामनारायण स्वतन्त्र अग्रगामी दल से निर्वाचित होने पर भी मजदूर दल के साथ मिल गये। इस प्रकार 1959 के आम चुनावों ने पूँजीवादी व्यवस्था और अनुदारवादी प्रवृत्ति को सदा के

लिए दफना दिया। मॉरीशस की जनता ने बहुत बड़ी संख्या में समाजवादी सिद्धांतों का अपने वोटों द्वारा समर्थन किया था। मजदूर दल राष्ट्रीय दल बन गया और डॉक्टर रामगुलाम सबके नेता।

निर्वाचन के पश्चात् डॉक्टर रामगुलाम सदन के नेता बन गये। एक नई कार्यपालिका की गठन की गई जिसमें तीन पदेन सदस्य (Ex-officio Members) और नौ निर्वाचित और मनोनीत सदस्य थे। जब राज्यपाल को बारह गैर सरकारी सदस्य (Unofficial Members) नियुक्त करने पड़े तब उन्हें चार मनोनीत सदस्यों की नियुक्ति के लिए डॉक्टर रामगुलाम से परामर्श लेना पड़ा। इस तरह इस बार के चुनाव के बाद मजदूर दल की स्थिति कार्यपालिका एवं व्यवस्थापिका, दोनों में पूर्व की अपेक्षा बेहतर थी। कार्यपालिका के छ सदस्य मजदूरदल के थे, एक मुस्लिम कार्रवाई समिति का था तथा दो मनोनीत सदस्य थे। दोनों सभाओं—व्यवस्थापिका और कार्यपालिका पर मजदूर दल का पूरा नियन्त्रण था। पहली बार डॉक्टर रामगुलाम को लगा कि अब स्वतन्त्रता की मंजिल दूर नहीं। उन्होंने स्वराज्य-अभियान छेड़ दिया।

सन् 1961 का लन्दन संवैधानिक सम्मेलन

आम चुनाव में मजदूर दल की हुई जीत से प्रभावित होकर राज्यसचिव इयान मैकलियोड (Ian Mecluod) ने 1960 के अप्रैल मास में मॉरीशस का दौरा किया। उस अवसर पर स्वीकार किया गया कि मॉरीशस के राजनीतिक विकास को जारी रखने के लिए लन्दन में एक संवैधानिक सम्मेलन किया जाय। फलतः 26 जून से 7 जुलाई 1961 तक मॉरीशस के चारों प्रमुख दलों के प्रतिनिधियों एवं विधान परिषद् के दो स्वतन्त्र सदस्यों का एक शिष्टमण्डल लन्दन में राज्यसचिव से संवैधानिक वार्ता के लिए मिला।

उक्त सम्मेलन के समय में, मॉरीशस में हो रहे राजनीतिक विकास के बारे में जान लेना आवश्यक है। पार्ती मोरिसियें का नेतृत्व केनिग कर रहा था जिसे मॉरीशस के गोरों का सहयोग प्राप्त था। यह राजनीतिक दल नहीं चाहता था कि मॉरीशस को स्वशासन और स्वराज्य प्राप्त हो। स्पष्ट है कि गोरों को बहुसंख्यक हिन्दुओं से भय था। 1960 तक अफ्रीका के 17 उपनिवेशों को आजादी मिल चुकी थी और मॉरीशस की स्वतन्त्रता भी निश्चित लग रही थी। हैरोल्ड मैकमिलन (Harold Macmillan) के ब्रिटिश प्रधान मन्त्री बनने से औपनिवेशिक प्रथा की समाप्ति का युग शुरू हो चुका था। दो महायुद्धों के उपरान्त विश्व में परिवर्तन की हवा चल रही थी। इससे मॉरीशस के गोरे भयभीत हुए। उन्हें अपनी सत्ता खो

जाने की आशंका थी। इस प्रवाह को रोकने के लिए उन्होंने पूरी ताकत लगाई। मजदूर दल के विरोधियों को सगठित करके स्वराज्य को रोकने की हर मुमकिन कोशिश की गई। यहाँ तक कि लोगों को अपने पक्ष में मिलाने के लिए घूस दी गई, भ्रष्टाचार से काम लेने में भी वे पीछे नहीं रहे।

मजदूर दल के कर्मठ नेताओं में रोजमों और सीनीवासेन बड़े योग्य व्यक्ति थे। रोजमों ने अपने शक्तिशाली ट्रेड यूनियन संघ में सभी श्रमिकों को समेट रखा था। उनकी मृत्यु के बाद ट्रेड यूनियन, जो परम्परागत रूप से मजदूर दल का सहयोगी रहा था। म्वानियाक (Moignac), लाकाज (Lacaze) और रेमों रो(Raymond Raule) के हाथों में चला गया था। इन व्यक्तियों ने मजदूर दल को छोड़कर "पार्ची" त्रावाइस्त दे त्रावायेर" (Parti Travailliste de Travailleurs) नाम से एक नये मजदूर दल की स्थापना की और वे डॉक्टर रामगुलाम के नेतृत्व में वर्षों से चलने वाले मजदूर दल के विरुद्ध अपना मत-प्रचार करने लगे। रंगीन तत्व के कुछ लोग उनके साथ हो गए। दूसरी ओर प्रभावशाली तामिल नेता, सीनीवासेन की मृत्यु से लाभ उठाकर पार्ची मोरिसियें तांगावेल नारायणन को इस्तेमाल करके तमिल भाषी हिन्दुओं को अपने झंडे के नीचे इकट्ठा करने लगा। तांगावेल नारायणन ने तमिल भाषियों को उकसाया कि वे हिन्दू नहीं हैं। इस तरह बहुत से तमिलभाषी मजदूर दल से अलग होने लगे। वे डॉक्टर रामगुलाम को शंकित दृष्टि से देखने लगे।

यही हाल मुसलमानों का रहा। "मुस्लिम यूनाइटेड पार्टी" की स्थापना की गई जिसके द्वारा रजाक मोहम्मद के दल, मुस्लिम कार्रवाई समिति का विरोध किया गया, क्योंकि रजाक मोहम्मद डॉक्टर रामगुलाम के स्वतन्त्रता-आन्दोलन का समर्थन कर रहे थे। पार्ची मोरिसियें ने रजाक की पार्टी को तहस-नहस करने के लिए उसी पार्टी के एक उत्साही सदस्य, आजम दहाल से काम लिया। गोरों द्वारा संचालित पार्ची मोरिसियें का उद्देश्य था अधिक से अधिक गड़बड़ी पैदा करके साम्प्रदायिक विभाजन द्वारा मजदूर दल को पूर्णतया कमजोर कर देना। यद्यपि राज्य सचिव इयान मैकलियोड ने श्री रो, म्वानियाक, लाकाज, दहाल, आचुएन और नारायणन को सम्मेलन में भाग लेने के लिए नहीं बुलाया था, तथापि मजदूर दल के विरोधी, पार्ची मोरिसियें ने उन्हें लन्दन भेजा ताकि वे वहाँ गड़बड़ी कर सकें। उस सम्मेलन में केनिग ने साम्प्रदायिक आधार पर मतदाताओं की अलग सूची रखने की माँग की! इस साम्प्रदायिक माँग से डॉक्टर रामगुलाम को बड़ा दुःख हुआ। बहुत से अफ्रीकी देशों के नेताओं ने सब प्रकार के मतभेदों को भूलकर और एक होकर अपनी आजादी की लड़ाई लड़ी थी। डॉक्टर साहब चाहते थे कि उन्हीं देशों की तरह मॉरीशस की भी सभी राजनीतिक पार्टियाँ संगठित होकर अपने देश की स्वतन्त्रता की

माँग करें। किन्तु मॉरीशस की स्थिति अलजेरिया, रोड़ेशिया, दक्षिण अफ्रीका, अंगोला, मोजाम्बिक और गीनिया बिसो की तरह थी, जहाँ स्वराज्य के मार्ग में मुट्ठी भर गोरी जनता रोड़ा बनी हुई थी गौरांग प्रभु प्रजातन्त्र एवं समाजवाद के खिलाफ थे, उन्हें चिन्ता थी तो बस अपने वर्ग के हित और स्वार्थ की। अपने हितों की रक्षा के लिए यह वर्ग अपनी अतुल सम्पत्ति के बल पर बड़ी आसानी से भ्रष्टाचारी राजनीतिज्ञों को खरीद लेता था और स्वतन्त्रता की राह में रोड़े अटका देता था।

1961 के लन्दन सम्मेलन में डॉक्टर रामगुलाम ने स्वशासन और सन् 1964 तक मॉरीशस को स्वतन्त्र कर देने की माँग की। उन्होंने देश के सचालन के लिए एक प्रधान मन्त्री और एक महाराज्यपाल की आवश्यकता पर जोर दिया। उन्होंने यह भी माँग की कि धीरे-धीरे राज्यपाल अपनी शक्ति छोड़ते जायें। एटॉर्नी जरनल एक राजनीतिज्ञ हों। कौंसिल में एक्स ऑफिसिओ (पदेन सदस्य) रखे न जायें तथा वित्तसचिव एवं औपनिवेशिक सचिव को धारा परिषद् से हटाया जाय। उन्होंने अल्पसंख्यक जातियों की सुरक्षा की भी माँग की। साथ ही साथ कहा कि सदन का मुखिया मुख्य मंत्री हो।

केनिग ने बड़ी प्रवलतापूर्वक आजादी का विरोध किया और उसके स्थान पर प्रस्ताव किया कि मॉरीशस का संयुक्त राज्य (United State) के साथ एकीकरण हो। वे मतदाताओं के अलग-अलग रेजिस्टर भी चाहते थे। वे बार-बार इसी पर जोर दे रहे थे कि यदि मॉरीशस स्वतन्त्र हो गया और मजदूर दल की सरकार आ गई तो साम्प्रदायिकता तथा हिन्दू प्रभुत्व का खतरा होगा। अल्पसंख्यक जातियाँ हिन्दुओं का शिकार बन सकती हैं। उन्होंने तर्क किया कि मॉरीशस अभी स्वराज्य पाने के लिए प्रौढ़ नहीं हुआ, क्योंकि विभिन्न सम्प्रदायों में एक दूसरे के प्रति अविश्वास था।

रजाक मोहम्मद ने मॉरीशस की स्वतन्त्रता का समर्थन किया, किन्तु दो उपप्रधान मंत्रियों की आवश्यकता बताई, जिनमें एक मुस्लिम प्रम्प्रदाय का हो और दूसरा ईसाई सम्प्रदाय का।

सुखदेव विष्णुदयाल ने जोर दिया कि स्वतन्त्र मॉरीशस के लिए महती शक्ति से सम्पन्न एक न्याय सभा की आवश्यकता है, जो सुरक्षा प्रदान कर सके। अतः इस प्रकार की न्याय सभा की स्थापना करनी ही होगी।

इयान मैकलियोड महोदय ने कहा कि एक संवैधानिक विकास अपरिहार्य है जिसे टाला नहीं जा सकता। उन्होंने सुझाव दिया कि पूर्ण स्वायत्त शासन दो चरणों

को पार करने पर दिया जा सकता है। पहला चरण तुरन्त कार्य रूप में परिणत होने वाला था, जिसके अनुसार सदन का नेता मुख्य मंत्री पद पर आसीन होने-वाला था और राज्यपाल को नियुक्त करने के अधिकार और शक्ति से सम्पन्न बनाया गया था। दो मंत्री और बढ़ाये गये, एक प्रसारण मन्त्री तथा दूसरा विकास मन्त्री।

संवैधानिक विकास का दूसरा चरण एक नये आम के चुनाव बाद आने वाला था। उस अवस्था को पार रहने पर धारा परिषद् का नाम धारा सभा होने वाला था, कार्यपालिका सभा का नाम मंत्रि-परिषद् होना था और मुख्य मंत्री का पद प्रीमियर (Premier) का पद होने वाला था। धारा सभा द्वारा एक अध्यक्ष (Speaker) का चुनाव होना था और एटॉर्नी जनरल को गैर सरकारी सदस्य (Unofficial member) होना था। धारा सभा की गठन 40 निर्वाचित और 15 मनोनीत सदस्यों से होनी थी।

यद्यपि डॉक्टर रामगुलाम की माँगों को पूर्ण रूप से कार्यान्वित होने में दो अवस्थाओं को पार करना था, तथापि राज्य सचिव ने उनकी समस्त माँगे स्वीकार कर ली थीं। यह मजदूर दल की भारी विजय और पार्ची मोरिसियों की बुरी तरह हार थी। उस सम्मेलन में डॉक्टर साहब के तर्कों के सामने केनिग की एक न चली। उन्होंने राज्यसचिव के सामने जो भी दलीलें पेश कीं, डॉक्टर साहब अपने तर्क की तलवार से काटते गये। केनिग राज्य सचिव को प्रभावित न कर सके। उनकी सभी चालें बेकार हुई वे सिर पर पराजय का सेहरा लिये मॉरीशस लौटे। वे कब तक प्रगति के पहिये को रोक सकते थे ?

जय-प्रमुदित वापसी

18 सितम्बर, 1961 को डॉक्टर रामगुलाम का इंग्लैण्ड से लौटने पर इतना शानदार स्वागत हुआ, जितना कि पहले उनके जीवन में कभी नहीं हुआ था। प्लेजॉस हवाई अड्डे पर 70,000 लोग आँखें बिछाये खड़े थे, जो टापू के कोने-कोने से इकट्ठे हुए थे। वे झंड़े, लेखपट, पुष्पमालाएं लिये इधर-उधर घूम रहे थे और अपने प्यारे नेता के दर्शनों के लिए उतावले हो उठे थे। हवाई अड्डे पर आई हुई मोटरें, लॉरियाँ, बसें और अन्य गाड़ियाँ दुलहिन की तरह सजी हुई थीं। लोग इस प्रकार आनन्दमग्न हो रहे थे, मानो कि मॉरीशस को आजादी मिल चुकी हो। स्वागतकर्ता हवाई अड्डे से पोर्ट लुई तक जुलूस में गाते-बजाते, जयकार करते और खुशियाँ मनाते ऐसे चल पड़े थे मानो स्वयं भगवान राम रावण पर विजय पाकर वन से अयोध्या लौटे हों।

"आवर स्ट्रगल" पुस्तक के पृष्ठ 94 में डॉक्टर रामगुलाम मार्मिक शब्दों में कहते हैं—"मेरे लिए देशभर में स्वागत-समारोह किये गये—पोर्ट लुई से लेकर उत्तर-दक्षिण, पूरब-पच्छिम के सुदूर गाँवों तक। लोगों के दिलों से प्रसन्नता एवं प्रशंसा के शब्द स्वत: ही निकल रहे थे। हर कोई यही कह रहा था कि मॉरीशस की आजादी के लिए आपने गजब के उपाय किये।"

डॉक्टर साहब आगे कहते हैं—"लेकिन आजादी की हमारी अन्तिम लड़ाई अभी समाप्त हुई नहीं थी। जो प्रशस्ति मेरे दिल को छू गई थी, वह निकली थी सुखदेव विष्णुदयाल के हृदय से। चाहे व्यक्तिगत रूप से हम एकमत के न थे, फिर भी वे हर समय इस संघर्ष में हमारे साथ थे। 31 अगस्त को उन्होंने ले मोरिसियें (Le Mauricien) में लिखा—"डॉक्टर रामगुलाम एक सुशिक्षित, सुपठित राजनीतिज्ञ हैं। वे भारतीय मूल के उन बुद्धिजीवियों के वर्ग के नहीं है, जो सादा वस्त्र पहने हुए किसी व्यक्ति को देखकर, घमण्ड से अपने को श्रेष्ठ मान बैठते हैं। वे दिखावट को कतई पसन्द नहीं करते हैं। यद्यपि उनका अंग्रेजी ज्ञान विस्तृत है तथापि वे सरल भाषा में. मॉरशसीय तरीके से ही बोलते हैं। इस दृष्टि से वे कम ज्ञान रखने वाले तथा अकड़ दिखाने वाले उन लोगों से अलग ही हैं, जो बुद्धिजीवी समझे जाते हैं। वे कहीं पर भी होते हैं, किसी भी स्तर के अमीरों, अधिकारियों, वर्ग के लोगों के बीच, हमेशा एक जैसे रहते हैं, अपना सहज स्वभाव नहीं छोड़ते। डॉक्टर रामगुलाम बहुत से रहस्यों, बहुत सी प्रतिकूल एवं संघर्षपूर्ण राजभक्तियों के मिले-जुले पुंज हैं। वे जानते हैं कि कठिनाई और संकट के समय क्या और कैसे बोलना चाहिए।"

श्री सुखदेव विष्णुदयाल के उपर्युक्त उद्गार के बारे में डॉक्टर साहब कहते हैं कि ये सुन्दर शब्द अपने ही प्रतिद्वन्द्वी, "एक पक्के हिन्दू" के थे जिन्होंने गांधीवादी परम्परानुसार सन्तों का सा जीवन बिताया था। उनके शब्द मेरे लिए बड़े महत्व के थे। मेरे साथ-साथ उन लोगों के लिए भी, जिन्हें विष्णुदयाल, रजाक मोहम्मद और खुद मेरे पीछे दृढ़ता से खड़ा होना था।

डॉक्टर साहब "आवर स्ट्रगल" पुस्तक में आगे लिखते हैं—'हमारे स्वतन्त्रता-सग्राम को दुनिया भर में उचित समझा गया, लन्दन से निकलने वाले—"न्यू कॉमनवेल्थ" (New Commenwealths) ने हमारी जीत को इन सुन्दर शब्दों में संकेत किया था:—"एक कर्मठ, फिर भी नम्र स्वभाव वाले, निरहंकारी व्यक्ति जो सदन के नेता एवं वित्तमन्त्री बन ही गये थे। डॉक्टर रामगुलाम, श्रमिकों विशेषकर शक्कर उद्योग में काम करने वाले मजदूरों के अधिकारों के लिए पच्चीस वर्षों तक अनवरत संघर्ष करने के बाद वास्तव में इस उत्कृष्ट स्थिति में पहुँचे हैं।

उन्होंने अपने राजनीतिक विचारों के शत्रु, अनुदारपंथियों को अपने कार्यों से उत्तेजित कर दिया, जिसके फलस्वरूप उनके विरुद्ध प्रतिक्रियाएँ हुई। परन्तु मित्र और शत्रु दोनों ही उन्हें एक समान पसन्द करते हैं। उन्होंने अपने देशवासियों के दिलों में एक विशेष स्थान बना लिया है।"

पार्ची मोरिसियें का स्वतन्त्रता-विरोधी आन्दोलन

सन् 1961 के लन्दन सम्मेलन से 1963 के आम चुनाव तक पार्ची मोरिसियें ने अपनी स्थिति में बहुत हद तक परिवर्तन ला दिया था। गत चुनाव में उसकी भारी हार हुई थी। चुनाव के बाद उस दल ने मॉरीशस की स्वतन्त्रता का विरोध करने के लिए अपनी समस्त शक्तियों को गतिशील करके अपना प्रभाव बढ़ा लिया था। वर्षों से संचालित गोरों के कुलीनतन्त्र द्वारा प्रचुर मात्रा में सहायता पाकर मोरिसियें दल ने हिन्दू विरोधी आन्दोलन के आधार पर एक जबर्दस्त मोर्चा शुरू किया। उसे शक्कर उद्योग के मालिकों से अतुल सम्पत्ति प्राप्त हुई। उसने टापू को साम्प्रदायिक आधार पर अनेक भागों में विभाजित करना आरम्भ किया। वह अल्पसंख्यक समुदायों का प्रतिनिधित्व करने और बहुसख्यक हिन्दुओं को ललकार समझकर, उनसे उनकी रक्षा करने का दावा करने लगा। पार्ची मोरिसियें की इस विनाशक नीति के प्रबल समर्थक नोएल मारिये जुनियनविल (Noel Marrier D'Unieuville) ने 23 अप्रैल, 1950 को "ले सेअरने" (Le Cerneen) पत्र पर एक लेख के माध्यम से अपना विचार यों प्रस्तुत किया:—"मैं सोचता हूँ कि ईसाइयों का अपना एक राजनीतिक दल होना चाहिए, एक मुसलमानों का और एक चीनियों का। इन तीनों दलों को संगठित होकर अपनी शक्ति बढ़ा लेनी चाहिए ताकि हिन्दू आधिपत्य को रोका जा सके और आने वाले आम चुनावों में एक साथ मिलकर लड़ा जा सके।"

अपने समर्थकों और हिन्दू-विरोधी तत्वों से हर प्रकार की सहायता पाकर पार्ची मोरिसियें छोटी-छोटी साम्प्रदायिक पार्टियों को मिलाकर मजदूर दल के विरोध में एक सशक्त दल के निर्माण में लग गया। इसके साथ उसने अवसरवादी हिन्दुओं को भी साथी बनाया। ऐसे लोगों को भी ढूँढा, जिन्हें घूस देकर देश की स्वतन्त्रता के विरोध में बहकाया जा सके। कहने की आवश्यकता नहीं कि उसे सैंकड़ों स्वार्थियों का पूरा समर्थन प्राप्त हो गया।

प्रभावशाली ईसाई मजदूर नेता, गी रोजमों की मृत्यु से लाभ उठाकर पार्ची मोरिसियें ने क्रिओलों को अपने झंडे तले इकट्ठा करना शुरू किया। उसने रो और स्वानियाक को लेबर दल के सहयोगियों सहित बहका दिया। इन दोनों महानु-

भावों ने मजदूर दल में फूट डालने के लिए पार्ची त्रावाइस्त दे त्रावायेर (Parti Travailliste des Travailleurs) नाम से एक अन्य श्रमिक दल की स्थापना की और वे यहाँ तक कहने का दावा करने लगे कि यही नया दल वास्तविक "सोस्य-लिस्त लेबर पार्टी" है। इस पार्टी के जन्म होने से पार्ची मोरिसियें ने पोर्टलुई और प्लैन विल्येम्स में क्रिओल श्रमिकों के एक बड़े वर्ग को अपनी ओर आकृष्ट करने में आशातीत सफलता प्राप्त की। रो और म्वानियाक ने डॉक्टर रामगुलाम और उनके साथियों को असली मजदूर दल से बाहर निकाल देने का भी दुस्साहस किया। यह मजदूर दल के इतिहास में एक बहुत बड़ा धक्का था जिसे पार्ची मोरिसियें के हथकडे के कारण मजदूर दल के सदस्यों को सहना पड़ा।

हिन्दू विरोधी भावनाओं की ज्वाला को भड़काने में देश के तमाम गिरजा-घरों की भी अपूर्व भूमिका रही। गिरजाघरों ने ईसाइयों को हिन्दू शासन का भय दिखाकर, उनकी बुद्धि भ्रष्ट कर दी। पादरियों ने धीरे-धीरे अपने मतानुयायियों के दिल और दिमाग पर अचूक प्रभाव डाला। ईसाइयों को बताया गया कि उनके धर्म के लिए देश की स्वतंत्रता खतरा लायेगी। मॉरीशस पर भारत और हिन्दू धर्म हावी हो जायेगा, ईसाइयों को जबरदस्ती धोती पहनाई जायेगी, हर गिरजाघर में गाँधीजी की मूर्ति स्थापित की जायेगी। चूँकि कुलीनतंत्र के शासक ईसाई थे, अतः ईसाइयों को अनेक सुविधाएँ प्राप्त थीं। ढाई शताब्दियों से ईसाइयों का आधिपत्य बना हुआ था। राजनीतिक, आर्थिक आदि क्षेत्रों में उन्हीं का वर्चस्व रहा था। चीनी उद्योग के मालिकों से गिरजाघरों को अतुल सम्पत्ति प्राप्त होती थी। इस सम्पत्ति के बल पर ही तमिल हिन्दुओं का ईसाइकरण किया जाता था और खासकर रंगीन तत्व की जनता का नेतृत्व। अपनी शक्ति, अनुभव एवं विपुल सम्पत्ति के कारण ईसाई कुलीनतन्त्र का गैर ईसाई जनता के कुछ वर्गों पर भी काफी गहरा प्रभाव था।

फूट डालो और राज्य करो

पार्ची मोरिसियें ने बार-बार "हिन्दू आधिपत्य" और "हिन्दू खतरे" का भय दिखाकर गैर हिन्दुओं को मॉरीशस की माँगी जाने वाली स्वतंत्रता से भयभीत कर दिया। उसने मजदूर दल को तहस-नहस करने के लिए ईसाई-एकता, क्रिओल साम्प्रदायिकता, तमिल और मुस्लिम अलगावादिता, जात-पाँत के भेदभाव आदि शस्त्रों का प्रयोग किया और उसे काफी हद तक सफलता भी मिली। उसने हिन्दुओं के वोटो को विभाजित करने के लिए मजदूर दल के हिन्दू उम्मेदवारों के विरुद्ध अपने पक्ष-समर्थक हिन्दुओं को खड़ा किया। इस तरह "फूट डालो और राज करो" नीति को कार्यान्वित किया, जिसे बहुत पहले भारत में भारतीयों को विघटित

करने के लिए लार्ड क्लाइव और फ्रांसीसी गवर्नर डूप्ले ने किया था और भारतीय शासकों को कठपुतली बना दिया था ।

पार्ची मोरिसियें ने भी उसी औपनिवेशिक नीति का प्रयोग तथा शक्कर उद्योग से प्राप्त अतुल सम्पत्ति का उपयोग करके जनता की गरीबी और बेरोजगारी से फायदा उठाया ।

"आवर स्ट्रगल" पुस्तक में डॉक्टर रामगुलाम कहते हैं–"पार्ची मोरिसियें ने अनेक ऐसे राजनीतिज्ञों को खरीद लिया, जो केवल अपना ही हित चाहते थे । मजदूरों और कारीगरों के खून-पसीने से अर्जित शक्कर उद्योग के कोष के धन से आकृष्ट होकर, मजदूर दल से असन्तुष्ट अवसरवादी राजनीतिज्ञ तथा सत्ता एवं ख्याति के भूखे कठपुतली सरीखे नेता पार्ची मोरिसियें में जा मिले ।"

डॉक्टर साहब आगे कहते हैं—"अब हमें रो, म्वानियाक और लाकाज के विद्रोह का सामना करना पड़ा । ये सब के सब रंगीन तत्व के थे । इनका पार्टी त्याग करने का परिणाम था क्रिओल मतदाताओं के विश्वास का हनन । जहाँ रो ने अपनी अति महत्वाकांक्षा के कारण नीच हरक्त की थी, वहाँ डॉक्टर मिलियें अहिन्दुओं का पक्षपात करने में वशीभूत हो गये थे । मिलियें ने परामर्श-समिति (Consultative Committee) में बढ़िया तरीके से प्रगतिवादी के रूप में कार्य शुरू किया था । द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद "फूड कंट्रोल बोर्ड" (Food Control Board) के कार्य की अक्षमता की निन्दा करके जनता के हित में अच्छा काम किया था । श्रम मंत्रालय और सहकारी विभाग में भी प्रशंसनीय काम किया था । लेकिन उसमें भी वही कमजोरी थी, जो रो में थी । उन पर बड़प्पन का भूत सवार था । वे अपने को बीसवीं सदी के मॉरीशस का रेमी ओलिये समझते थे । हिन्दू-आधिपत्य के विषय को लेकर अपनी ही पार्टी की आलोचना करने लगे । अपनी हिन्दू-विरोधी भावनाओं से अन्धे होकर उन्होंने वह दिशा अपनाई जो उनकी राजनीतिक मौत की थी । जिन-जिन लोगों ने मजदूर दल को त्यागा था, उन सभी को इसी दुर्भाग्य का शिकार होना पड़ा ।"

हिन्दुओं में फूट डालने की पूरी शक्ति से कोशिश की गई । तमिल भाषी हिन्दुओं को भड़काया गया कि वे हिन्दू हैं ही नहीं । फ्रांसीसी शासन काल के आरम्भिक काल में, फ्रांसीसी राज्यपाल, माहे दे लाबूर्दोने पांडीचेरी और मालाबार से प्रथम बार तमिल भाषियों को गुलामी के काल में मॉरीशस लाये थे । यहाँ आकर वे क्रिओल जनता में मिल गये और उन्होंने ईसाइयत को स्वीकार कर लिया ।

शहरों में रहने वाली ईसाई बनी तमिल जनता पर सदा से गोरों के कुलीनतन्त्र का नियन्त्रण रहा। बाद में आने वाले तमिल आप्रवासियों को भी इस ईसाइयत की बाढ़ में बह जाने की सम्भावना थी, क्योंकि ईसाइयों के प्रभुत्व की हवा ही ऐसी बह रही थी इस देश में। ईसाई मत के प्रभाव में आने के कारण बहुत से तमिलों ने अपना सांस्कृतिक अस्तित्व ही मिटा डाला। उन्हें संस्कृति-विहीन, एक उजड़े हुए वर्ग के रूप में छोड़ दिया गया। वे पार्ची मोरिसियें रूपी भेड़िये के शिकार बन गये। इस दल ने कैथलिक चर्च की आड में यह जहरीली भावना फैलाई कि "तमिल हिन्दू नहीं हैं।" फलतः इस फूट डालने वाली नीति के जाल में फँसकर बहुत से तमिल भाषी सांस्कृतिक दृष्टि से अस्त-व्यस्त हो गए। तमिल यूनाइटेड पार्टी (Tamil United Party) का जन्म हुआ जो पार्ची मोरिसियें की आवाज में आवाज मिलाने लगा कि तमिल हिन्दू नहीं हैं। इस तरह बहुत सारे तमिल हिन्दू अपने अस्तित्व को मिटाकर खोये हुए भेड़ों के समान अपने ही पतन की ओर पार्ची मोरिसियें में जा मिले। सन् 1958 में महान् तमिल विभूति, रेंगानादेन सीनीवासेन की मृत्यु के बाद तमिल लोगों का मजदूर दल को ठुकरा देना और भी स्वाभाविक हो गया। तमिल हिन्दुओं को पुनः संगठित करने के लिए सीनीवासेन की योग्यता के तमिल नेता मजदूर दल में और न था। साधारण तमिल हिन्दू दुविधा में पड़ गये कि वे हिन्दू हैं, अथवा नहीं। ऐसी विषम परिस्थिति में एक सुयोग्य, कर्मशील, तमिल-संस्कृति के पक्षधर नेता की कमी मजदूर दल को बुरी तरह अखरने लगी।

अतः साफ जाहिर हो जाता है कि मॉरीशस की स्वतन्त्रता को रोकने के लिए कुलीन तन्त्र की पार्टी ने शक्कर उद्योग की अतुल सम्पत्ति, कैथलिक चर्च की सहायता, सरकार में काम करने वाले बड़े-बड़े कर्मचारियों की मदद और फूट की नीति के बल पर ऐसी ताकत हासिल कर ली थी, जिसका सामना करना आसान न था। पार्ची मोरिसियें जब अपनी सारी शक्ति "फूट डालो और राज करो" नीति के प्रसार में लगा रहा था, तब मजदूर दल की शक्ति, देश की गरीबी दूर करने, कामकरों को अच्छी तनख्वाह देने की व्यवस्था करने, नौकरी और सामाजिक सुविधाओं को प्रदान करने, देश में जनहितकारी राज्य कायम करने आदि कार्यों में खर्च हो रही थी। इधर मजदूर दल देश को प्रजातन्त्र और समाजवाद की राह पर चलाने में यत्नशील था तो उधर पार्ची मोरिसियें बहुसंख्यक हिन्दुओं को अल्पसंख्यक जनता का शत्रु घोषित करके मजदूर दल की जड़ें खोदने में प्राणपण से व्यस्त था।

नागरिक सेवा (Civil Service)

1936 में जब से मजदूर दल की स्थापना हुई थी, तभी से दल ने मॉरीशस

में वर्ग-संघर्ष आरम्भ किया था। उस समय शासक वर्ग में गोरे ही लोग थे जिनके हाथों में देश की सम्पूर्ण सत्ता थी। मॉरीशस में ब्रिटिश सरकार से उन्होंने पूरे बल से संघर्ष किया ताकि आरम्भ में ही मजदूर दल को बढ़ने से रोका जा सके। अब पार्टी मोरिसियें रंगीन तत्व के मध्यवर्गीय लोगों के दिमाग में मजदूर दल के विरोध में सन्देह के बीज बो रहा था। रंगीनतत्व के मध्यवर्गीय लोगों में जो लोग अर्ध गोरे थे और जिनका स्तर जरा ऊँचा था, वे फ्रेंको मॉरीशन लोगों को सहयोग देने लगे। लेकिन उनको वे सामाजिक विशेषाधिकार नहीं दिये गये, जो गोरे शासकों के उच्च-वंशीय वर्ग को प्राप्त थे। इस वर्ग के लोगों में (रंगीन तत्व वाले) अच्छे-अच्छे बुद्धि-जीवी हुए। उन्नीसवीं शताब्दी में इन लोगों की अपनी जमीनें थीं तथा ये व्याव-सायिक धन्धों में भी लगे थे। लेकिन गरीबी के आ जाने से कठिनाई में पड़ गये। इसका कारण यह था कि सारे बैंक फ्रांसीसी मूल के गोरों के थे और उन बैंकों से इन्हें उधार लेने की सुविधाएँ प्राप्त नहीं थीं। अतः इस छोटे से वर्ग को अपनी सामाजिक स्थिति के लिए सिविल सर्विस (सरकारी नौकरी) पर रहना पड़ता था। अपनी सुरक्षा के लिए इस वर्ग ने नौकरियों के लिए सिविल सर्विस तथा व्यक्तिगत कारबार आदि का सहारा लेने का निर्णय ले लिया।

1948 के आम चुनाव में फ्रांसीसी मूल के गोरों की भारी हार के साथ एक नया युग आरम्भ हुआ। व्यवस्थापिका सभा में कृषकों एवं छोटे किसानों के वंशजों के पैर अच्छी तरह से जम गये थे। अब वे कार्यपालिका सभा, न्यायालयों की व्यवस्था, व्यापार-धन्धों तथा बैंकों आदि पर अधिकार पाने के लिए अपने सघर्ष को जारी रख रहे थे। अतः जो भारतीय मूल के थे, उनके शिक्षित बच्चों के लिए सिविल सर्विस का खुल जाना निश्चित था। इस प्रकार वर्ग-संघर्ष सिविल सर्विस तक भी पहुँच गया। विभिन्न सम्प्रदायों एवं संस्कृतियों के पढ़े-लिखे युवक दो-चार नौकरियों के लिए होड़ लगाने लगे। सिविल सर्विस की नौकरियों की बड़ी चाह थी लोगों में। इनसे अनेकानेक सुविधाएँ प्राप्त थीं :—समाज में यश, अच्छी तनख्वाह, पदोन्नति की सम्भावनाएँ, नौकरी की सुरक्षा, पेंशन, विदेश यात्रा की छुट्टियाँ आदि। इसके अतिरिक्त सिविल सर्विस ही शिक्षित लोगों को सबसे अधिक नौक-रियाँ देने वाली मशीन थी। चूँकि सिविल सर्विस की नौकरी पाने के लिए शिक्षा अनिवार्य थी, इसलिए हजारों मॉरीशसवासी शिक्षा पाने हेतु हर प्रकार के त्याग करने लगे। सिविल सर्विस की नौकरियाँ पाना अब तक गोरों तथा रंगीन मध्य-वर्गीय लोगों का ही विशेषाधिकार था। पर अब इस अधिकार को बाँटने का समय आ गया था। चूँकि विभिन्न प्रकार के लोग सिविल सर्विस की नौकरियों के लिये होड़ लगाने लगे थे, इसलिए उसका आम लोगों की आलोचना का विषय बन जाना स्वाभाविक ही था। ट्रेड यूनियन और प्रेस आदि द्वारा सिविल सर्विस में भर्ती और पदोन्नति के विषयों को लेकर जोर-शोर से बहस होने लगी।

1950 में, मजदूर दल के सत्ता हासिल करने से पहले सिविल सर्विस में भरती तथा पदोन्नति करना मॉरीशस के गोरों के हाथों में था। वे अनुभव और योग्यता आदि का ख्याल किये बगैर कर्मचारियों की भरती व पदोन्नति करने में अपनी मनमानी करते थे, चूँकि 1951 से डॉक्टर रामगुलाम शिक्षा के सम्पर्क अधिकारी थे, इसलिए उन्होंने निर्णय कर लिया कि अध्यापन कार्य तथा सिविल सर्विस में व्याप्त अन्याय और पक्षपात के प्रति वे आवाज उठायेंगे। उन्होंने कौंसिल में एक बार कहा:—"टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज सामान्यतः सबसे बड़ा छल है। जिन्होंने प्रवेश की परीक्षा पास कर ली है और जो विद्यार्थी स्कूल सर्टिफिकेट की परीक्षा उत्तीर्ण हैं, वे अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालय में प्रवेश नहीं पाते। अन्य लोग, जो केवल छठी परीक्षा पास हैं और जिनकी सिफारिश इस देश के कुछ लोग व्यक्तिगत रूप से कर देते हैं, वे अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालय में स्वीकार कर लिये जाते हैं। परिवार एवं जाति पक्षपात के कारण वरिष्ठता का ख्याल किये बगैर ही लोग निरीक्षक एवं शिक्षाधिकारी नियुक्त कर लिए जाते हैं।"

डॉक्टर रामगुलाम की माँग थी कि सिविल सर्विस में भरती होने का एकमात्र आधार व्यक्ति की योग्यता होनी चाहिये। वर्ग, जाति अथवा सिफारिश के बल पर नागरिक सेवा में भरती करने की प्रथा समाप्त करनी चाहिए। उन्होंने सत्ता हासिल करने पर वर्ग सम्बन्धी तथा साम्प्रदायिक दीवारों को हटाकर इस संस्था को लोकतन्त्रात्मक बनाया।

मॉरीशस के संवैधानिक, राजनीतिक और आर्थिक विकास को प्रभावित करने में सिविल सर्विस ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। मजदूर द्वारा उसका लोकतन्त्रात्मक बनाया जाना, भारतीयता तथा हिन्दू शासन का एक जीता-जागता प्रमाण था। हालाँकि इस तथ्य पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया गया कि मॉरीशस में हिन्दी बहुसंख्यक थे और न्यायसंगत था कि सिविल सर्विस में पदोन्नति के भागीदार अच्छे अनुपात में हिन्दू हों, इसके अतिरिक्त प्राइवेट सेक्टर में नौकरियों की संख्या कम रहती थी। जो मध्यवर्गीय हिन्दुओं के लिए वैसे ही अप्राप्य थीं। इस प्रकार शिक्षा-सुविधाओं के बढ जाने से सिविल सर्विस को देहाती इलाकों से एक नये किस्म के कर्मचारी प्राप्त हुए। सिविल सर्विस में प्रवेश हुए ये नये लोग, अपने सम्प्रदाय के निर्वाचित सदस्यों से सहायता प्राप्त करना चाहते थे। नोएल मारिये जुनियनविल और मासों द्वारा इस सामाजिक गति का इस प्रकार से वर्णन हुआ कि उससे रंगीन तत्व की जनता तथा गोरों के बीच वर्ग-द्वेष बढ़ गया। उन्हें यह कहा गया कि भारतीय मूल के मध्यवर्गीय लोगों ने उनके सामाजिक स्तर को ले लिया है। चालाकी के साथ मजदूर दल की गलत छवि प्रस्तुत करते हुए यह कहा गया कि यह दल छोटे किसानों के देहाती वर्ग से उदित नेशनलिस्ट पूंजीवादी हिन्दुओं के प्रभाव में

था। असल में जहाँ लोगों के जन्मसिद्ध अधिकारों को हटाया जा रहा था वहाँ मजदूर दल ने एक ऐसे समाज को स्थापित किया, जिसमें समानता थी। श्रमिक वर्गों को दासत्व से मुक्ति दिलाने तथा हरेक को व्यक्तिगत विकास के लिए बराबर अवसर प्राप्त कराने के युग में मजदूर दल प्रवेश कर चुका था। लेकिन स्वतंत्रता तथा विकास के विरोध में पार्ची मोरिसियें ने मजदूर दल का भी विकृत रूप प्रस्तुत किया। इस दल की छवि को बिगाड़ने के लिए हिन्दू आधिपत्य की वही जानी-मानी गलत धारणा का सहारा लिया गया। नोएल मारिये जुनियनविल ने भारतीय मूल के लोगों के सिविल सर्विस में आने की क्रिया को देश में भारतीयता फैलाने तथा रामगुलाम के हिन्दू अनुयाइयों द्वारा व्यापार-व्यवसाय आदि के जब्त करने का एक ज्वलत प्रमाण बताया। इस प्रकार स्वतंत्रता के विरोध में रंगीन वर्ग की जनता को इकट्ठा करने के लिए आजादी, प्रजातंत्र, समाजवाद और मताधिकार को बुरा बताकर उनका गलत रूप प्रस्तुत किया गया। रंगीन तत्व की जनता को एक प्रतिद्वन्द्वी समाज का भय था जिसमें सभी को योग्यता और क्षमता के आधार पर समानाधिकार की प्राप्ति होनी थी। इस प्रकार उन्होंने यह समझा कि सिविल सर्विस मजदूर दल के संरक्षण में भारतीय मूल के मध्यवर्गीय लोगों के हाथों में चला गया। गोरों के सिद्धान्तहीन भाषणों के चक्कर में पड़कर मॉरीशसीय समाज के प्रजातंत्रीकरण को अपनी सामाजिक स्थिति का पतन समझ बैठे। उनके विचारानुसार इससे समाज में उनकी मानहानि होनी थी। दूसरे शब्दों में, मध्यवर्गीय रंगीन वर्ग की जनता के एक वर्ग ने यह समझ लिया कि वे स्वभावत: गोरों के सहयोगी थे। रंगीन तत्व के लोग निम्न स्तर पर और गोरे उच्चतर तथा व्यवसायी स्थिति में दोनों पार्ची मोरिसियें से अधिक सहयोग करते थे। वे मजदूर दल द्वारा पास किये गये समाजवाद सम्बन्धी कानून पर अमल करना नहीं चाहते थे। रोजमों की मृत्यु तथा म्वानियाक और रो के विद्रोह के बाद जब 'फेडेरेशन ऑफ सिविल सर्विस यूनियन्स' सुधार-विरोधियों के हाथों में चला गया तब यह स्थिति और ज्यादा नाजुक हो गई। गायताँ जुवाल का भाई, एरवे जुवाल पार्ची मोरिसियें का दूसरा महान हस्ती था जिसने 'फेडेरेशन ऑफ सिविल सर्विस यूनियन्स' पर अधिकार जमा लिया था और मजदूर सरकार के विरोध में एक संघर्ष आरम्भ किया था। वास्तव में पार्ची मोरिसियें ने छोटे किसानों के वर्ग को भी अपनी ओर आकृष्ट करने की कोशिश की जो परम्परागत रूप में मजदूर दल का समर्थक था। सरकार की आय को बढ़ाने तथा देश के धन के पुन: वितरण को सुचारु बनाने के लिए मजदूर सरकार ने शक्कर के निर्यात पर पाँच प्रतिशत का कर लगा दिया। शक्कर उद्योग में जो सुप्रतिष्ठित व्यक्ति थे, उन्होंने इस कर का विरोध करते हुए छोटे किसानों को डॉक्टर रामगुलाम के विरुद्ध भड़काने की कोशिश की। पर उन्हें ज्यादा सफलता न मिली।

इस प्रकार पार्ची मोरिसियें केन्द्रीय तथा स्थानीय स्तरों पर मजदूर दल

के विरोध में एक विध्वंसक विरोधी दल के रूप में उभरा। वह यह बर्दाश्त नहीं कर सकता था कि मुख्य मन्त्री एक गोरा नहीं, बल्कि हिन्दू हो। उसकी धारणा थी कि एशियाई मूल का एक व्यक्ति देश को चला नहीं सकता और गोरों के ऊपर वह शासन नहीं कर सकता। डॉक्टर रामगुलाम मोरिसियें दल का शिकार बनते गये। इसी जबरदस्त तनाव के समय देश में नये आम चुनाव की घड़ी आ गई।

1963 का आम चुनाव

3 सितम्बर, 1963 को धारा परिषद् भंग कर दी गयी और नये आम चुनाव के लिए 21 अक्टूबर की तिथि निश्चित की गई। मजदूर दल को देहाती इलाकों में स्वतंत्र अग्रगामी दल से जूझना पड़ा और शहरों में पार्ची मोरिसियें के साथ मुस्लिम यूनाइटेड पार्टी और तमिल यूनाइटेड पार्टी का सामना करना पड़ा। गी बालाँसी, डॉ. फिलिप फोर्जेंत, दीपचन्द बिहारी और रवीन्द्र घरबरण मजदूर दल के उम्मेदवार थे। ये सब अति कुशल और दृढ़ प्रतिज्ञ युवक थे। पार्ची मोरिसियें ने भी नए-नए उम्मेदवारों को खड़ा किया, जैसे रीमा, देवियेंन, बुसिये, सें गीयोम, लेसाज और पातेंन। दूसरी ओर आइ. एफ. बी. ने अनिरुद्ध जगनाथ, रामनाथ जीता, वसन्त राय, तीरवेंगादम और महेश तिलक को प्रस्तुत किया।

हालाँकि मजदूर तथा स्वतन्त्र अग्रगामी दल चुनाव में परस्पर विरोधी थे, फिर भी दोनों दल प्रजातंत्र, स्वतंत्रता तथा समाजवाद के लिए संघर्ष कर रहे थे। मुख्य शत्रु था पार्ची मोरिसिये। मजदूर दल को परास्त करने में पार्ची मोरिसियें रिश्वतखोरी, झूठ, धमकी, जातिगत भेद-भाव आदि के चक्करों को चलाने में पीछे न रहा। डॉक्टर रामगुलाम का व्यक्तित्व उस दल की सारी कटु आलोचनाओं का विषय बन गया। पर उनकी आलोचनाओं का परिणाम ही कुछ और निकला। हुआ यह कि मॉरीशस के पददलित लोगों की नजरों में डॉक्टर साहब का महत्व अधिक बढ़ गया। खासकर उन लोगों की नजरों में, जो उनके संघर्ष और व्यक्तित्व मे अपनी ही भावनाओं की छाया के दर्शन करने लगे थे। मॉरीशसीय जनता के विश्वास ने सर्वदा डॉक्टर साहब के संकल्प और समर्पण को ज्यादा मजबूत बनाने में उनकी सहायता की है। स्वभावानुसार वे अपने व्यक्तित्व पर आरोपित किये गये दोषों पर ध्यान न देकर अपने साथ काम करने वाले साथियों को ही उन आरोपों के उत्तर में बोलने देते। उनके साथी अक्सर उन दोषारोपणों से परेशान हो जाते थे। डॉक्टर साहब स्वयं शान्त रहकर मुस्करा देते जिससे उनके विरोधी खिझ जाते और उनका कोई चारा भी न चलता।

इन चुनावों में खेद का विषय यह था कि मॉरीशस की राजनीति में उत्पात

का जन्म हो गया। गायताँ जुवाल का क्रियोल जनता में एक प्रसिद्ध नायक के रूप में आविर्भाव के साथ-साथ विप्लव का विस्फोट हुआ। उत्पात करना डॉ० रामगुलाम की प्रकृति के विरुद्ध था। वे शान्त स्वभाव वाले व्यक्ति थे और जीवन भर उन्होंने उत्पात को खराब समझा। "आवर स्ट्रगल" पुस्तक में डॉक्टर साहब कहते हैं—"मैं समझता हूँ कि विप्लव और धमकी कमजोरों के हथियार हैं। विरोधियों की चाल को रोकने के लिए मैं राजनीतिक कौशल से काम लेना अधिक पसंद करता हूँ। शान्तिप्रिय हिन्दुओं को धमकाने तथा मॉरीशस की शेष जनता में व्याप्त गैर हिन्दू भावना को भड़काने के लिए पार्ती मोरिसियें ने उत्पात का सहारा लिया। पार्ती मोरिसियें ने खुल्लम-खुल्ला इस बात का प्रचार किया कि हर हिन्दू गोरों के धन एवं अधिकारों को हड़पने के लिए मौके का इन्तजार कर रहा था, जब कि सही बात यह थी कि बेचारे हिन्दू ही शक्कर-कोठियों में गैर हिन्दुओं के शिकार बन रहे थे। हर बात पर साम्प्रदायिकता का रंग चढ़ा दिया जाता था। हिन्दुओं का चित्रण एशिया से आये आक्रमकों के रूप में किया जाता था, एक असभ्य लोगों का गिरोह जिसे मार भगाना था। मुझे एशियाई सेना का नेतृत्व करने वाला एक सेनाध्यक्ष समझा जाता था। दूसरी तरफ यह प्रचार हो रहा था कि फ्रांसीसी मूल के लोग वीर, साहसी एवं उत्साही थे जो पूर्वी सभ्यता के महान् खतरे का सामना करने वाली यूरोपीय सभ्यता के रक्षक थे। इस हिन्दू-विरोधी प्रचार के विरुद्ध हिन्दुओं तथा मजदूर दल के अन्य सहयोगियों ने प्रतिकार किया। वे मजदूर दल के झंडे तले और ज्यादा दृढ़तापूर्वक इकट्ठे हो गये। इसे हिन्दुओं के भावी शासन का प्रमाण बताया गया।" डॉक्टर साहब आगे लिखते हैं—

"अपने प्रचार के अन्तिम दिनों में पार्ती मोरिसियें तथा उसके कुछ ताकतवर लोगों ने क्यूर्पीप में मजदूर दल के एक जुटाव को रोककर उक्त दल के उम्मेदवार; राबर्ट आनी का अपमान किया। टापू के दक्षिण, माहेबर्ग में हुए मजदूर दल के एक और जुटाव में पार्ती मोरिसियें के पाँच एजेंटों ने उत्पात मचाया। उन्होंने उस चुनाव क्षेत्र के उम्मेदवार हारोल्ड वाल्टेर की मोटर उलाटने की भी कोशिश की। उन्होंने एक होटल में घुसकर पुलिस इन्स्पेक्टर, राधाकृष्णा को एक हँसिया से घायल कर दिया।

1963 के चुनाव का नतीजा यह रहा कि 1959 के निर्वाचन की तुलना में मजदूर दल को कम बहुमत प्राप्त हुआ। मजदूर दल और मुस्लिम कार्रवाई समिति को 23 सीटें मिलीं जबकि पार्ती मोरिसियें को 8 और स्वतंत्रता अग्रगामी दल को 7, मजदूर दल को 49% सीटें प्राप्त हुई थीं और शेष तीन पार्टियों को सामूहिक रूप से 51 प्रतिशत, एक उम्मेदवार वाले 40 छोटे चुनाव क्षेत्रों में साम्प्रदायिकता, भ्रष्टाचार और रिश्वतखोरी को बढ़ावा दिया गया।

लन्दन में हुए सम्मेलन के दूसरे चरण को शान्तिपूर्वक लागू करने के लिए एक मिली-जुली सरकार जरूरी थी। मंत्री मंडलीय सीटों के वितरण के बारे में अभी लिखा-पढी हो ही रही थी कि पार्ची मोरिसियें ने अपने हिस्से में बहुत अधिक सीटों की माँग करके मामला बिगाड़ दिया। गवर्नर सर जॉन शॉ रेन्नी (Sir John Shaw Rennie) भी इस सवाल पर ठीक निर्णय लेने में असफल रहे। लन्दन से उपराज्य सचिव आये, पर वे भी पार्ची मोरिसियें को संतुष्ट करने में असमर्थ रहे। अपने लिए वह तीन सीटें चाहता था और मजदूर दल को छः सीटें प्राप्त करने का विरोध करता था। लन्दन में एक नया संवैधानिक सम्मेलन हुआ जिसके दौरान संयुक्त सरकार की गठन के बारे में निम्न बातों को स्वीकार किया गया:--मजदूर दल को 6 मत्रालय प्राप्त होंगे और 2 संसद सचिव (Parliamentary Secretary)। पार्ची मोरिसियें को 3 मंत्रालय, आई. एफ बी को 2 मंत्रालय और एक संसद-सचिव तथा सी. ए. एम को 2 मंत्रालय। इस मिली-जुली सरकार को स्थिर करने के लिए हमें चुनावोपरान्त चार मास लगाने पड़े।"

डॉ० साहब आगे कहते हैं—"इस अल्पकाल में पार्ची मोरिसियें ने अपना विरोध व्यक्त करने के लिए कौंसिल के बाहर दो भारी हिंसात्मक जुटावों का आयोजन किया। पूर्ण रूप से स्वायत्त शासन के लिए जो मेरा प्रस्ताव था और जिसके अनुसार 19 नवम्बर, 1963 को मुझे प्रमुख मंत्री बनना था, उसी के विरोध में अपना पहला जुटाव किया। उससे एक दिन पहले, मोटरों में ध्वनिवर्द्धक यंत्र लगाकर उन्हें सभी शहरों में भेजा गया और लोगों को पोर्टलुई में कौंसिल भवन के पास इकटठा होने के लिए निमन्त्रण दिया गया। शोरगुल के साथ वह भीड़ शाँ-दे-मार्स पहुँची जहाँ सभी के लिए दूध-रोटी का प्रबन्ध किया गया था। शोर मचाती हुई वह भीड़ जोश की सीमा पार करके साड़ी पहनी हुई महिलाओं को नंगा करने लगी (अपमान करने लगी)। राह गुजरते लोगों तथा पुलिस पर वे पत्थर चलाने लगे। कौंसिल-भवन की खिड़कियों के शीशे भी उन्होंने तोड़ डाले। मेरे साथी बुरी तरह भयभीत हो गये। कुछ लोगों ने, जिनमें मोहम्मद और विष्णुदयाल भी थे। मुझे उत्तेजित करने लगे कि मैं पुलिस को गोली चलाने की आज्ञा दे दूँ। लेकिन मैंने अहिंसा के जरिये हिंसा को समाप्त करना बेहतर समझा और भीड़ को आँसू गैस द्वारा हटाया गया। इस राजनीतिक उन्माद के विस्फोट के बाद रो और मार्सेल मेसन मजदूर दल में आ गये।"

दिसम्बर 1963 को संविधान का दूसरा रूप लागू हुआ। लेजिस्लेटिव कौंसिल (Legislative Council) 'लेजिस्लेटिव असेम्बली' बन गयी। और डॉ० रामगुमाम प्रमुख मंत्री बन गये। 15 दिसम्बर, 1963 को नगरपालिका के चुनाव

हुए और साम्प्रदायिकता के औजार के माध्यम से पार्ची मोरिसियें ने एक बार पुनः पोर्टलुई और प्लेन विल्येंम्स के शहरी इलाकों के क्रिग्रोल निर्वाचकों में अपनी ख्याति बढ़ाई। अपने साथ बहुत सारे मुसलमान निर्वाचकों को मिलाकर पार्ची मोरिसियें ने क्यूर्पीप, वाक्वा-फेनिक्स, बो बासें, रोज हिल और पोर्टलुई की नगरपालिकाओं को अपने अधिकार में पाकर 64 में 50 सीटों को हासिल करने का प्रयत्न किया। कात्र बोर्न में वह विजयी न हो पाया। मजदूर दल के प्रौढ़ अधिकारियों, फोर्जेट, डॉ० शापेरों और देलेत्र ने कात्र बोर्न की अच्छी तरह से रक्षा की थी।

इस अपूर्व जीत से उत्साहित होकर पार्ची मोरिसियें ने पोर्टलुई के शाँ-दे-मार्स में एक और भारी जुटाव किया। 12 जनवरी, 1964 को जब प्रदर्शक नीली कमीजें और टोपियाँ धारण किये हाथ में झण्डे लिये गाते-बजाते आगे बढ़े तो उस की समाजवाद विरोधी भावना साफ जाहिर हो रही थी। इस जुटाव के दौरान पार्ची मोरिसियें ने अपने लिए 3 मंत्रालयों की माँग की और इस बात पर राजी हुआ कि मजदूर दल को 5 मंत्रालय मिले। सामान्यतः इस प्रकार के सभी प्रदर्शनों में समस्त आलोचनाओं के शिकार मुख्य रूप से डॉक्टर रामगुलाम ही बनते थे। पार्ची मोरिसियें के 8 निर्वाचित सदस्यों में 3 गोरे थे—मीडलैंड में पुवार्ड, फ्लोरेआल में मेंगार और बो-बासें में केनिग। शेष 5 रंगीन तत्ववाले थे। जुवाल, देबियेन, रीमा, इचिये। यह जाहिर था कि केनिग और जुवाल के नेतृत्व में रंगीन तत्व वाले मतदाता पार्ची मोरिसियें से सहयोग कर रहे थे। मजदूर दल में जीतने वाले जो रंगीन तत्व के लोग थे। लील, वालाँसी, डॉ. शापेरों, फोजेर्त और वालटेर, इन सभी को अपनी जीत के लिए हिन्दुओं के मतदान पर निर्भर रहना पड़ा था। मजदूर दल के विरोधियों ने इसका गलत अर्थ लगाया और प्रमाण रूप में यह तथ्य सामने रखा कि मजदूर दल में मुख्यतः हिन्दुओं का बोलबाला है। इतिहास गवाही देता है कि 1936 में अपनी स्थापना के समय से मजदूर दल ही सच्चे अर्थ में राष्ट्रीय दल रहा है।

उत्तर प्रान्त—रिव्येर जु राम्पार में, स्वतन्त्र अग्रगामी दल के उम्मेदवार, अनिरुद्ध जगनाथ (मॉरीशस के वर्तमान प्रधानमन्त्री) ने अनत बीजाधर को राजनीति की रणभूमि से पूर्णतया हटा दिया, जबकि पेचित रिव्येर में आई. एफ. बी. ही के उम्मेदवार, पदारथ ने जगतसिंह को हरा दिया। साधारणतः शहरों की रंगीन तत्व वाली जनता ने पार्ची मोरिसियें को वोट दिया था। दूसरी तरफ मजदूर दल को पूर्ण रूप से हिन्दुओं तथा कुछ मुसलमानों के वोट पर निर्भर रहना पड़ा था। मुसलमानों में अधिकतर लोगों ने अपना मेल पार्ची मोरिसियें के साथ बढ़ा लिया था। मजदूर दल के लिए समाजवादी विचारधारा से प्रभावित क्रिग्रोल सहयोगियों का सहयोग बना रहा, जबकि शहरी इलाकों में तमिल लोगों का एक वर्ग मजदूर दल से अपना राजनीतिक मेल बनाये रखने में डगमगा गया था।

1963 के चुनाव के परिणामों पर गौर करने पर डॉक्टर रामगुलाम को मजदूर दल में निम्नलिखित त्रुटियाँ नजर आईं ।

(1) उस समय के अध्यक्ष, डॉ शापेरों की प्रतिभा जैसा व्यक्तित्व, उतना आकर्षक नहीं था। जितना कि उसके पूर्ववर्ती डॉ. कीरे, आंकचिल और रोजमों का था। वे तीनों क्रिओल श्रमिकों में अति विख्यात थे।

(2) पार्ती मोरिसियें के साम्प्रदायिक मत प्रचार का मजदूर दल के सहयोगियों पर बुरा प्रभाव पड़ा । उन्हें पथ परिवर्तन कराने में उक्त दल का काफी हाथ रहा ।

(3) पार्ती मोरिसियें अब मुख्य विरोधी दल था और निकट भविष्य में मजदूर दल से उसे एक बार और लड़ने की सम्भावना थी ।

(4) मजदूर दल की नीति थी, एक ऐसे समाज का निर्माण करना जिसमें न्याय और समानता हो । इसके फलस्वरूप शिक्षित वर्गों (जिनमें मजदूरों एवं श्रमिकों के भी बच्चे थे) की उन्नति से मध्यवर्गीय रंगीन तत्व वाले घबरा गये। सरकारी नौकरियाँ पाने का जो उन्हें अधिकार था, उसका उन्होंने एक प्रकार से हनन होते महसूस किया ।

(5) रंगीन तत्ववालों को मुस्लिम कार्रवाई समिति के साथ मजदूर दल का मेल अच्छा नहीं लगा था। पार्ती मोरिसियें इस बात का प्रचार कर रहा था कि मजदूर दल 1,10,000 मुसलमानों के हित के लिए 1,93,000 रंगीन तत्व वालों के अधिकारों को ठुकरा देना बेहतर समझता है। रंगीन तत्व वाली जनता को इस पर विश्वास हो गया था ।

'आवर स्ट्रगल' पुस्तक के पृष्ठ 105 पर डॉक्टर रामगुलाम कहते हैं— "इस स्थिति में, मैंने एक संयुक्त सरकार का होना जरूरी समझा, ताकि विभिन्न असमानताओं से समझौता किया जा सके तथा निर्वाचकों में उन वर्गों को संतुष्ट किया जा सके जो स्वतन्त्रता नहीं चाहते थे ।

सर्वदलीय सरकार (All Party Government)

एक ओर विरोधी दल डॉक्टर रामगुलाम को अपमानों से लाद रहा था, तो दूसरी ओर टापू-भर में उनके हजारों पक्षधर, हर रोज उनके सम्मान में आम जुटाव कर रहे थे, उनके गले में फूलों की मालाएँ लाद रहे थे। प्रसिद्ध कवि मालकॉम दे शाजाल (Molcolm de Chazal) ने 'एडवांस' पत्र में लिखा, "डॉक्टर रामगुलाम, जिनसे मॉरीशस में थोड़े ही लोग अच्छी तरह परिचित हैं, सुशिक्षित और सुसंस्कृत

राजनीतिज्ञ हैं। वे इस स्तर पर पहुँच गए हैं कि सभी गूढ़ बातों को देख-समझ लेते हैं। वे दूरदर्शी हैं, उनमें साहस है................सबसे बड़े राजनीतिज्ञ हैं, जो हमें प्राप्त हुए हैं।"

फ्रांसीसी मूल के इस कवि ने अक्तूबर मास में फिर कहा--"डॉक्टर रामगुलाम के पास विस्तृत ज्ञान है। मॉरीशस की जनता के लिए वे पिता-समान हैं, देश-भक्त हैं और सीधे-सादे इन्सान हैं। चाहे वे इतने ऊपर उठ चुके हैं, तो भी हमारे इतने निकट हैं। वे हमारे भविष्य को सुनहरा बनाने वाले हैं। चलें हम उन पर विश्वास करें, क्योंकि जबतक हमें उन जैसे नेता प्राप्त हैं, हमें किसी भी बात का डर नहीं।"

इसी प्रकार मजदूर दल के संस्थापक, वयोवृद्ध डॉक्टर मोरिस कीरे ने भी शाँ दे मार्स के मैदान में एक आम जुटाव के दौरान डॉक्टर रामगुलाम पर आशीर्वाद की वर्षा करते हुए कहा—

"रामगुलाम के पास विस्तृत ज्ञान, कौशल, व्यक्तिगत गुण और अच्छा अनुभव है। वे हमारे देश के नेता बनने में सबसे योग्य व्यक्ति हैं।"

इस तरह स्थानीय और अन्तर्राष्ट्रीय व्यक्तियों के प्रशंसात्मक उद्गारों से मजदूर दल की प्रसिद्धि बढ़ी। यद्यपि विरोधी दल मजदूर दल की सरकार को ललकार रहा था, तथापि सरकार में जनता का विश्वास बढ़ता गया।

डॉक्टर रामगुलाम के जीवन का सबसे बड़ा सम्मान तब देखने में आया, जब वे 9 मार्च, 1964 को लन्दन में हुए संवैधानिक सम्मेलन से वापस आये। वे प्लेजाँस हवाई अड्डे पर उतरे, तब उनके स्वागतार्थ पचास हजार लोगों की भीड़ जमा थी। डॉक्टर साहब लन्दन सम्मेलन में "सर्वदलीय सरकार" की स्थापना के लिए राजी हुए थे। जब वे हवाई अड्डे पर उतरे तब उनका हृदय गदगद हो रहा था। हाथों में झंडे लिये, लाल कमीजों में अपार जन-समूह चिल्लाते हुए अपनी खुशी जाहिर कर रहा था, लोग बैण्ड-बाजे की ध्वनि के साथ नारे लगा रहे थे। पुष्पमालाओं से डॉक्टर साहब का सिर ढक दिया गया। यह अपूर्व स्वागत था। प्लेजाँस से लेकर पोर्टलुई तक, रास्ते के दोनों किनारों पर हजारों लोग अपने प्यारे नेता के स्वागत में खड़े थे। रास्ते में भीड़ ने बार-बार शिवसागर को रोका, तालियाँ बजाईं, खुशियाँ मनाते हुए फूलों के हार पहनाये और उनपर पुष्प-वर्षा की। खुशियाँ मनाने वाले ये वे लोग थे, जो जाग चुके थे और बेसब्री से आजादी की घड़ियों की प्रतीक्षा कर रहे रहे थे। ऐसे लोगों के दिलों में आनन्द की लहरें स्वतः उठ रही थीं वह जुलूस धीरे-धीरे आगे बढ़ रहा था। रास्ते पर वह अधिक घना होता जा रहा था। ऐसा लगता

था कि देश भर की सारी मोटरें, बसें और लोरियां आकर उसमें मिल गई थीं। जुलूस का अग्रभाग जब बोबोसें पहुँचा, तब पीछे का भाग, अभी दस मील पीछे, फॉरेस्ट साइड (Forest Side) में था। इस प्रकार उसका फैलाव पूरे प्लैन विल्येम्स जिले में था।

13 मार्च, 1965 को पहली बार के लिए मन्त्री-परिषद् की बैठक डॉक्टर रामगुलाम को प्रथम मन्त्री (प्रीमियर) पद पर विभूषित करने के लिए धारा परिषद् के कक्ष में लगी। यह एक अपूर्व दृश्य था। देश की प्रगति के साथ ही डॉक्टर रामगुलाम मॉरीशस के आकाश में सितारे-सम चमकने लगे थे। यद्यपि अभी काम बहुत अधूरा था, तथापि देश की स्वतन्त्रता अब नजर आ रही थी। बहुसंख्यक जनता को अब पूरा विश्वास हो गया था कि ब्रिटिश शासन का अन्त निकट आ गया है, गोरे पूँजीपतियों का अन्याय, अत्याचार और शोषण की अन्तिम सांस ही बाकी है।

अभी एक मास हुआ भी न था कि 6 अप्रैल, 1965 को राज्यसचिव, आन्टोनी ग्रीनवूड मॉरीशस आये। एक बार पुन पार्ची मोरिसियें ने क्यूर्पीप और फॉरेस्ट साइड में, जो विशेषतः गोरों के निवास स्थान हैं, एक भारी प्रदर्शन किया। अपनी शक्ति-प्रदर्शन के लिए उसने किराये पर बसों और लोरियों को लिया ताकि लोगों को क्यूर्पीप तक पहुँचाया जा सके। अपनी तरफ से मजदूर दल ने कात्र बोर्न में बड़े पैमाने में एक उत्साहप्रद स्वागत-कार्यक्रम का आयोजन किया। ग्रीनवूड महोदय डॉ० रामगुलाम के चिर-परिचित रहे थे, लन्दन में उनके विद्यार्थी कालीन दिनों से। ग्रीनवूड के पिता ग्रीनवूड परिवार में श्रेष्ठतर और प्रसिद्ध थे। ब्रिटिश मजदूर दल के, उसके आरम्भ के दिनों में, विख्यात नेताओं में से वे एक थे। डॉ० रामगुलाम ने अब उनसे विचार-विनिमय किया और मन्त्रियों तथा ट्रेड यूनियन के सभासदों आदि से उनका परिचय कराया, ताकि वे जान और समझ सकें कि जनता की क्या भावना है। यह तय हुआ कि उसी साल, 7 से 24 सितम्बर तक लन्दन में एक संवैधानिक सम्मेलन किया जाये।

श्री ग्रीनवूड ने एक संवैधानिक विशेषज्ञ को भेजने का प्रस्ताव भी किया, ताकि वे यहाँ आकर, इसी स्थल पर स्थितियों का अध्ययन करके एक नए सविधान का ढाँचा बना सकें, जो प्रगति की ओर अग्रसर होते मॉरीशस के लिए हितकर रहे। इस कारण से जुलाई, 1965 को प्रोफेसर दे स्मिथ मॉरीशस आये। ग्रीनवूड साहब के कथनानुसार, उनकी रिपोर्ट रचनात्मक राजनीतिक विकास का मार्ग दर्शाती थी। दे स्मिथ ने मॉरीशस के लिए तीन-तीन उम्मेदवारों के बीस चुनाव-क्षेत्रों को उपयुक्त बताया। यह भी विचारा गया कि अल्पमत वालों के हितों का उचित

मात्रा में प्रतिनिधित्व हो ताकि साम्प्रदायिकता को रोका जा सके। पी. एम. एस. डी. ने बारम्बार इस पर जोर दिया था कि निर्वाचन के अलग-अलग खाते (Separate registers) रखे जायें। परन्तु दे स्मिथ ने इसे नामन्जूर कर दिया। तदुपरान्त ब्रिटिश एम. पी. (सांसद) ब्रिटिश मजदूर दल के टॉमड्रिबर्ग साहब तथा कन्सर्वेटिव दल के सर निजेल फिशर (Nigel Fisher) मॉरीशस आये ड्रिबर्ग (Driberg) साहब ने बार-बार यह दुहराया कि उपनिवेश-प्रथा को समाप्त करना ब्रिटिश प्रधान मन्त्री, सर हारोल्ड विलसन की जानी-मानी नीति थी। अतः उन्होंने ब्रिटेन के साथ मॉरीशस के मिलाने अथवा उसका उपनिवेश बने रहने के विचार को ठुकरा दिया।

1965 का संवैधानिक सम्मेलन

इसके पश्चात् सन् 1965 के 7 से 21 सितम्बर तक लन्दन के लैनकास्टर हाऊस में अन्तिम एवं सबसे महत्वपूर्ण संवैधानिक सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन का उद्देश्य था मॉरीशस के स्वराज्य के विषय में सहमत होना। ग्रीनवूड साहब चाहते थे कि अनिश्चितता के वातावरण को जल्द से जल्द समाप्त कर दिया जाय जिसके कारण हाल में राजनीतिक उपद्रव हुए थे।

"आवर स्ट्रगल" में डॉ. रामगुलाम लिखते हैं–"मजदूर दल की तरफ से मैंने कहा कि पिछले तीन आम चुनावों में हमें जनता से शासन-कार्य करने का अधिकार प्राप्त हुआ था और अब इस सम्मेलन को पूर्ण रूप से प्रजातन्त्र स्थापित करने में हमारी पूरी सहायता करनी चाहिये। मैंने माँग की कि मॉरीशस को स्वतन्त्रता मिल जानी चाहिये और इसके लिये एक तिथि निश्चित कर लेनी चाहिए। मैंने यह भी माँग की कि मतदान देने की उम्र को घटाकर अठारह साल कर दिया जाय। इसके साथ-साथ मैंने विरोधी दल में एक नेता के पद की आवश्यकता बतायी तथा तीन-तीन उम्मेदवारों के बीस चुनाव-क्षेत्रों के होने की माँग की। इसके अतिरिक्त मैंने यह विचार सामने रखा कि जब दो तिहाई का बहुमत हो, तभी संविधान में संशोधन किया जा सके। निर्वाचन के लिए अलग-अलग खाते रखने या मॉरीशस को ब्रिटेन के अधीन मिलाये रखने के विचारों को हमने दृढ़ता से बल पूर्वक अस्वीकार कर दिया।

दूसरी तरफ केनिंग, पार्ती मोरिसियें के नेता ने आजादी का विरोध करके ब्रिटेन के साथ मॉरीशस को संलग्न बनाये रखने पर ही जोर दिया। उन्होंने इस बात को लेकर बहस की कि पहले के तीन आम चुनावों के फल निरर्थक थे, क्योंकि तब स्वतन्त्रता कोई विवादास्पद विषय नहीं था। उन्होंने कहा कि अन्य देशों से

अलग-थलग मॉरीशस एक बहुत छोटा टापू है और तूफानों से आक्रान्त होते रहने की वजह से तथा शक्कर पर अपनी अति निर्भरता के कारण, यह आर्थिक दृष्टि से संकटरहित नहीं है। इन कारणों से यह एक स्वतन्त्र राज्य नहीं हो सकता। उन्होंने यह भी कहा कि मॉरीशस का ब्रिटेन के साथ मिले रहने से मॉरीशस सुविधापूर्वक यूरोपीय आर्थिक समुदाय से जुड़ सकता है।"

1965 के लन्दन सम्मेलन में स्वतन्त्र अग्रगामी दल ने स्वराज्य की आवश्यकता पर जोर दिया। उसके नेता श्री सुखदेव विष्णुदयाल ने पार्ती मोरिसियें के नेताओं के स्वराज्य-विरोधी सभी तर्कों को सारहीन सिद्ध किया। जब पार्ती मोरिसियें के नेता, श्री केनिग ने स्वतन्त्रता के प्रश्न पर मत-गणना की माँग की तब श्री सुखदेव ने चाल समझ ली और उसका जोरदार विरोध किया। उन्होंने कहा, इस प्रश्न के निपटारे के लिए आम चुनाव ही सर्वाधिक उपयुक्त साधन होगा।

स्पष्ट है कि श्री सुखदेव और उनके दल ने डॉक्टर रामगुलाम का पूरा समर्थन किया। मॉरीशस की स्वतन्त्रता-प्राप्ति में उग्रगामी दल के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। जहाँ तक स्वतन्त्रता का प्रश्न था, सुखदेव और शिवसागर सारे मतभेदों को भूलकर एक स्वर से देश की आजादी के लिए दो वीर सेनानियों की भाँति स्वतन्त्रता-विरोधी तत्वों से जी-जान से लड़े। इन्हें समस्त हिन्दुओं का सहयोग प्राप्त हुआ। यही कारण है कि विरोधी दल इन दोनों को बार-बार हिन्दू नेता घोषित करते रहते थे और मॉरीशस की स्वतन्त्रता को हिन्दुओं की स्वतन्त्रता बताने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ते थे।

पंडित वासुदेव विष्णुदयाल ने दशाब्दियों पहले से ही अपने प्रवचनों के दौरान कहना आरम्भ कर दिया था कि एक दिन यहाँ (मॉरीशस) में हिन्दुओं का जमाना होगा। इस घोषणा का प्रभाव स्वतन्त्रता-विरोधियों पर अचूक रूप में पड़ा। वे बहुसंख्यक हिन्दुओं के स्वराज्य की माँग से घबरा उठे। उनके नेताओं ने पूरी शक्ति लगाकर लन्दन सम्मेलन में स्वतन्त्रता का विरोध करके इंग्लैण्ड के साथ परतन्त्र रहने में ही दलीलें पेश कीं।

सारी बहसों को सुनने के बाद ग्रीनवूड साहब ने 24 सितम्बर को स्वतन्त्रता के पक्ष में अपना निर्णय दिया। उन्होंने पार्ती मोरिसियें की माँग को ठुकरा दिया और कहा कि मॉरीशस को आजादी मिल जानी चाहिये ताकि उसकी गिनती संसार के बड़े राष्ट्रों में हो सके। तय हुआ कि स्वतन्त्रता विषय को लेकर आम चुनाव किया जाय और यदि मतदाताओं ने स्वतन्त्रता के पक्ष में एक सीट के बहुमत से भी वर्तमान सरकार को विजयी बनाया तो ब्रिटेन मॉरीशस को स्वतन्त्र कर देगा।

उस संवैधानिक सम्मेलन के कार्यों पर विचार व्यक्त करते हुए "द गार्डियन" (The Guardian) ने कहा, "यद्यपि पार्ची मोरिसियें के तर्क स्वतन्त्रता के विरुद्ध में तर्कसंगत और प्रभावशाली हो सकते हैं, तथापि राजनति के तथ्यों के विरोध में वे अल्पमत के तर्क हैं।"

लन्दन सम्मेलन के दौरान स्वतन्त्रता के पक्षधर मजदूर दल, स्वतन्त्र अग्रगामी दल और मुस्लिम कार्रवाई समिति के संयुक्त मोर्चे के कारण पार्ची मोरिसियें की एक न चली। हार खाने के कारण वह संयुक्त सरकार से अलग होकर स्वतंत्रता विरोधी आन्दोलन द्वारा स्वतन्त्रता के पक्षधर दलों को हराने के लिए पूरी तैयारियाँ करने लगा।

15 अक्तूबर को एक प्रेस सम्मेलन के द्वारा डॉक्टर रामगुलाम ने जनता को स्वतन्त्र मॉरीशस में प्राप्त होने वाली सुविधाओं के बारे में प्रभावशाली ढंग से बताने का यत्न किया, इस बीच पार्ची मोरिसियें ने (जो अब पी. एम. एस. डी. नाम से विख्यात हो चुका था) अपनी हिन्दू-विरोधी भावनाओं को और तेजी से हवा दे दी थी। उसने धमकी और उपद्रव के वातावरण को पैदा करके आतंक शुरू कर दिया था। उस दल के द्वारा हिन्दुओं का अपमान होते देखकर श्री अनिरुद्ध जगन्नाथ, प्रेमचन्द देवी और वर्मा ने उसके प्रतिकार में "मॉरीशस" हिन्दू कांग्रेस" की स्थापना की। यह राजनीतिक दल कट्टर हिन्दूवादी संस्था थी। डॉक्टर रामगुलाम पूर्णतया साम्प्रदायिक पार्टियों के विरोध में थे। हिन्दू कांग्रेस ने हिन्दुओं के विरोधियों की खूब खबर ली। किन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व ही वह खंडित हो गया।

पी. एम. एस. डी. ने अचानक अपनी राजनीतिक चाल बदल दी। उसके नेता, गायताँ जुवाल 14 दिसम्बर, 1965 को शाँ दे मार्स में हो रहे एक आम जुटाव के दौरान हिन्दुओं के प्रति अपनी उदारता दिखाने लगे। 'Hindou mon-frere' (हिन्दू मेरा भाई) का नारा लगाते हुए उन्होंने राष्ट्रीय स्तर पर समझौते की माँग की। अब यह दल अपने को राष्ट्रवादी और समाजवादी बताने लगा। अपने पक्षपोषक अखबार, ले मोरिसियें के जरिये जोरदार प्रचार करने लगा कि मजदूर दल अब समाजवादी न रहा।

इसी बीच डॉक्टर रामगुलाम को एक शल्यक्रिया के लिए लन्दन जाना पड़ा। स्वतंत्रता को चाहनेवाले मारीशस वासियों ने उनके लिए मंदिरों आदि में प्रार्थनाएँ कीं। स्वस्थ होकर वे उसी हवाई जहाज से विदेश लौटे, जिसमें 3 जनवरी, 1966 को सर हारोल्ड बानवैल (Harold Banwell) तथा अन्य निर्वाचन आयुक्त मॉरीशस आ रहे थे।

बानवेल कमीशन : प्रजातन्त्र की हत्या

10 जनवरी, 1966 को बानवेल कमीशन के अन्तर्गत बोलते हुए डॉक्टर रामगुलाम ने कहा कि मॉरीशस ने ब्रिटिश संसदीय विधि को अपनाने का निर्णय लिया था। यही विधि हमारे देश तथा जनता के लिए सबसे हितकर थी। अतः इसे छोडकर किसी दूसरी संवैधानिक विधि को अपनाने की सलाह नहीं दी जा सकती थी। इसके अतिरिक्त मॉरीशस का संविधान काफी हद तक अल्पमत वालों की सुरक्षा करता है— अन्य किसी भी देश में ज्यादा, मॉरीशस में प्रजातंत्र की नींव को अधिक सुदृढ़ करने की आवश्यकता पर डॉक्टर रामगुलाम ने ज्यादा जोर दिया। उन सुधार-विरोधी राजनीतिक पार्टियों की उन्होंने निन्दा की। जो मॉरीशस की जनता में अलगाव और भेद पैदा करने के लिए विपुल सम्पत्ति का प्रयोग कर रही थीं। उन्होंने इस बात पर खेद प्रकट किया कि कुछ दायित्वहीन व्यक्ति हमारी प्रजातान्त्रिक संस्थाओं को नाश करने के प्रयत्न में उपद्रव मचा रहे थे, अफ्रीका और एशिया में स्वतंत्रता के लिए किये जाने वाले कठिन प्रयत्न से उन्होंने कुछ नहीं सीखा था।

अपनी तरफ से केनिंग अनुपाती प्रतिनिधित्व के लिए बहस कर रहे थे और "पार्टी लिस्ट" के लिए जैसा कि ब्रिटिश गियाना में था। विष्णुदयाल ने कहा कि इससे पार्टियों का प्रतिनिधित्व होता है, जनता का नहीं और ये दल के नेताओं को ज्यादा स्वेच्छाचारी बना देंगे। बानवैल कमीशन ने 31 जनवरी को अपना कार्य समाप्त किया।

17 अप्रैल, 1966 को कात्र बोर्न में मजदूर दल की वार्षिक बैठक लगाई गई। उसमें मालागासी सोस्यल डिमोक्रैटिक पार्टी के दो मालागासी प्रतिनिधि भी निमन्त्रित थे। उस अवसर पर उस संगोष्ठी का विषय था "प्रगतिशील देशों के सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक विकास के लिए योजना और सहकारिता के औजार के रूप में समाजवाद।" अपने भाषण में डॉक्टर रामगुलाम ने पुनः इस बात पर जोर दिया कि पूरे ससार में एकता पैदा करने का साधन है समाजवाद, जो जात-पाँत, धर्मों आदि से परे है। उन्होंने कहा कि समाजवाद सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सुधारों को बढ़ाएगा। वह गरीबी और असुरक्षा में जीवन बिताते हुए अपार जन समूहों के जीवन को उठाने में सहायक सिद्ध होगा। यह मान लिया गया कि समाजवादी नीति को अपनाने से ही पिछड़ेपन की समस्या का हल किया जा सकता है।

फिर डॉक्टर रामगुलाम स्ट्राकहॉल्म के लिए रवाना हुए जहाँ उन्होंने "काँग्रेस ऑफ दी इन्टरनेशनल सोस्यलिस्ट्स" (Congress of the International Socialists) में मजदूर दल का प्रतिनिधित्व किया। मजदूर दल इसके साथ जुड़ा हुआ

था। वहाँ उन्होंने जोर दिया कि पी. एम. एस. डी. की उपलब्धियों पर जाँच की जाए जो कि उस संस्था से सम्बन्धित होना चाहता था। बाद में मंत्री, श्री ग्राल्बर्टकारटी जनवरी, 1967 को जाँच के लिए ग्राये ग्रौर ग्रन्ततः पी. एम. एस. डी. के समाजवादी एवं लोकतंत्र विरुद्ध कार्यों से परिचित होकर उसके प्रार्थना पत्र को साफ इन्कार कर दिया।

31 मई, 1966 को बानवैल ग्रायोग की रिपोर्ट प्रस्तुत की गई। डॉक्टर रामगुलाम ने उसकी ग्रनेक बातों को स्वीकार्य समझा। 62 सदस्यों की व्यवस्थापिका सभा, तीन-तीन उम्मेदवारों के बीस चुनाव क्षेत्र ग्रौर हर निर्वाचक को तीन उम्मेदवारों को वोट करने की नीति, एक स्वतंत्र निर्वाचन ग्रायोग की नियुक्ति जो सभी भावी चुनावों का प्रबन्ध करं ग्रौर रोड्रीग को एक विशाल चुनाव क्षेत्र में परिणत करना, जिसमें दो उम्मेदवार निर्वाचित हों। लेकिन कमीशन के संशोधन प्रणाली (Corrective System) लागू करने के प्रस्ताव का उन्होंने कड़ा विरोध किया। डॉक्टर रामगुलाम कहते हैं—"मैं ग्रौर मेरे साथी : मोहम्मद तथा विष्णुदयाल ने इसे नामंजूर कर दिया ग्रौर मैंने इसे "दानवी नीति" कहा। राजनीति में यह एक बड़ी हत्या की जा रही थी, दरग्रसल प्रजातंत्र का गला घोंटा जा रहा था।

दो दिन पहले मजदूर दल ग्रौर उसके साथी दल : ग्राई. एफ. बी. ग्रौर सी. ए. एम. ने हिन्दू कांग्रेस के साथ इस मामले को पोर्टलुई में एक भारी जुटाव के जरिये लोगों तक पहुँचाया। उसके दौरान हमने एक स्वर से "करेक्टीव सिस्टेम" (संशोधन-प्रणाली) को नामंजूर किया। ग्रपने विरोध को ज्यादा प्रभावशाली बनाने के लिए मैंने यूरोप, ग्रमरीका, एशिया ग्रौर ग्रफ्रीका के प्रमुख ग्रखबारों, विभिन्न देशों के प्रधान मंत्रियों एवं ग्रन्य राज्याधिकारियों को तार भेजकर उनसे सहायता की माँग की। हमारे प्रभावोत्पादक विरोध के परिणामस्वरूप उपसंसदीय सचिव (Assistant Parliamentary Secretary) श्री जॉन स्टॉनहाउस शीघ्रता से मॉरीशस पहुँचे। हमसे बहस के बाद उन्होंने "करेक्टीव सिस्टेम" की जगह 8 बेसट लूजर की विधि को लागू किया।"

स्वतन्त्र मॉरीशस के निर्माता

"ग्रावर स्ट्रगल" पुस्तक के पृष्ठ 112 पर डॉक्टर रामगुलाम कहते हैं :— "ग्रन्त में हमने उस कार्य में हाथ डाला जो हमारा ग्रन्तिम लक्ष्य था। हमारी स्वतंत्रता के पक्ष में दुनिया के मत प्राप्त करने के लिए तथा पश्चिम से ग्राये हुए हमारे फ्रांसीसी मूल के देशवासियों के विश्वास को बनाये रखने के लिए मैंने कानाडा में उसी साल के सितम्बर मास में हुए राष्ट्रकुल के वित्तमंत्रियों के सम्मेलन में सम्मिलित होने के साथ ही ब्रिटेन, फ्रांस ग्रौर कानाडा ग्रादि ग्रनेक पाश्चात्य देशों का दौरा

किया । मैंने मॉरीशस और राष्ट्रकुल तथा पाश्चात्य देशों के बीच मित्रता की नींव डाली । हमारे टापू को उन देशों से दूर करने वाली दूरी के कारण ऐसा करना जरूरी था । उसी समय से मैंने इस प्रकार की लघुयात्राओं को सर्वदा आवश्यक समझा है । इनसे हमारे देश को बहुत सारे लाभ प्राप्त हुए हैं ।

इसी बीच स्वतंत्रता के विरोध की अपनी कार्यवाही में पी. एम एस. डी. ने नये हथकंडे अपनाये । हमारी सरकार में लोगों के विश्वास को समाप्त करने के लिए तथा यह साबित करने के लिए कि मजदूर दल पूँजीपतियों की आर्थिक सहायता के वगैर शासन नहीं कर सकता, पी. एम. एस. डी. ने शक्कर उद्योग को बेरोजगारी पैदा करके, प्रगति रोकने तथा मॉरीशस के आर्थिक विकास में बाधा पहुँचाने को प्रेरित किया । बैंकों ने भी जो इसी वर्ग के अधिकार में थे, दिवालियेपन और आर्थिक असुरक्षा का वातावरण पैदा करने में पी. एम. एस. डी. की पूरी सहायता की । फिर मार्च 1967 में इस दल ने अपने पक्षावलम्बियों को डाकघरों एवं बैंकों से अपना पैसा निकाल लेने को कहा ।

इस प्रकार पी, एम. एस. डी. ने अपने प्रचार के माध्यम से और ज्यादा भय फैलाया ताकि लोग यह समझें कि आजादी देश की तबाही का कारण बन सकती है और उससे भूखमरी की स्थिति आ जाएगी । दरअसल, उसके बहुत सारे पक्षधर इतने भयातुर हुए कि हजारों की संख्या में देश को छोड़कर कानाडा और ऑस्ट्रेलिया जाने लगे । 1967 में 4,000 लोगों को ऑस्ट्रेलिया के लिए रवाना किया । यह क्रिया 1965 में उसी समय शुरू हुई जब पार्ती मोरिसियें ने स्वतन्त्रता के खिलाफ अपना प्रचार आरम्भ किया था ।

प्रतिक्रियावादियों ने देश में उपद्रव मचाने के किसी भी अवसर को हाथ से जाने न दिया । देश में भय और अशान्ति का वातावरण पैदा करने के लिए उसने कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी । उसने यह बताने का भरपूर प्रयत्न किया कि मजदूर सरकार शासन करने के लिए हर प्रकार से असमर्थ है । ऐसा करने के पीछे उसका मुख्य कारण था, इस सरकार के प्रति अविश्वास का वातावरण पैदा करना । उन प्रदर्शनों में जो सब से वीभत्स था, वह 28 मार्च, 1967 में उस समय हुआ, जब पी. एम. एस. डी. के उग्रवादियों ने हमारे वार्षिक काँग्रेस में विघ्न पहुँचाया । जेम्स जॉनसन, जो उसमें सम्मिलित होने आये थे, उनके विरुद्ध लोगों ने प्रदर्शन किया । जॉनसन मॉरीशस के एक पुराने मित्र थे । वे ब्रिटिश संसद तथा मजदूर दल के सदस्य थे और मॉरीशस के मजदूर दल के सलाहकार । परन्तु हम भी उग्रवादियों को सीख देने में पीछे नहीं रहे । हमने पोर्टलुई के "प्लास जु के" में एक महत्त्वपूर्ण

ग्राम जुटाव किया, जिसके दौरान खूब तालियाँ बजाकर जॉनसन के प्रति स्वागत भाव दर्शाया गया।

पी. एम. एस. डी. ने कुछ हिन्दू उम्मेदवारों को खरीदकर उन्हें शहरी तथा देहाती चुनाव क्षेत्रों में इसलिए रख छोड़ा, ताकि हिन्दुओं के कुछ वोट उसी को मिले। यही वह पार्टी थी जो शुरू से ही सर्वदा हिन्दू-विरोधी भावना से ओत-प्रोत थी। गोरों का कुलीनतंत्र कभी अति शक्तिशाली था। अब वह पूरा प्रयत्न कर रहा था कि उसका आधिपत्य कायम रहे। ऐसा करने के लिए उसने सिविल सर्विस, कृषि अर्थ, आर्थिक संस्थाओं, आयात-निर्यात, व्यवसाय, न्याय व्यवस्था आदि को अपने अधिकार में रखा। भारतीय मूल के लोगों के पास कुछ नहीं था। अगर कोई चीज थी उनके पास तो केवल हमारे संघर्ष को जारी रखने का दृढ़ संकल्प जिसके जरिये वे उस धन के उचित बँटवारे की माँग कर सकें, जो हमारे अपने ही लोग अपना खून-पसीना बहाकर कमाते आये थे।"

छोटे हिन्दू किसानों के संघर्ष के परिणामस्वरूप हिन्दुओं में बड़े-बड़े लोग हर क्षेत्र में पैदा होने लगे थे। यह गैर-हिन्दुओं से देखा न जाता था। अतः उन्हें एशिया का आक्रामक तथा अन्य अपमाजनक शब्द कहकर पुकारा जाता था। डॉक्टर रामगुलाम इसलिए अपमानित किये जाते थे, क्योंकि उन्होंने बहुसख्यक हिन्दुओं को मताधिकार दिलाया था और अब वे स्वराज्य के संघर्ष में सफलता पाने जा रहे थे। कुलीनतन्त्र हमेशा से मॉरीशस में हिन्दुओं का विरोधी रहा था। देश की स्वतन्त्रता को रोकने के लिए शान्तिप्रिय हिन्दुओं के नाम से अनावश्यक भय फैलाकर साम्प्रदायिकता एवं जात-पाँत की दीवारें खड़ी करने में अपनी सारी शक्ति लगा रहा था। तरह-तरह के झूठे नारे बुलन्द किये जाते थे, जैसे—"हिन्दू खतरा" "भारतीयकरण" "मॉरीशस का भारत में विलीन "जलयानों" मे "भारत से" धोतियों का आना,, (जिन्हें अहिन्दुओं को जबरदस्ती पहनाया जायेगा) "एशियाई" बरबरता का पाश्चात्य सभ्यता-संस्कृति पर हावी होना, आदि। क्रिओलों ने खुले आम "ऑवलोपे नु पा उले,, (Enveloppe nous Pas oule) अर्थात साड़ी में लिपटने वाली औरतों को हम नहीं चाहते" का नारा लगाकर हिन्दु महिलाओं को नंगा किया। साथ-साथ "मालबार नु पा उले ,, (Malbar nous Pas oule) याने "हम हिन्दुओं को नहीं चाहते" आदि नारे लगाकर हिन्दुओं का घोर अपमान किया गया।

पी. एम. एस. डी. ने अपने खरीदे हुए कठपुतली-समान हिन्दुओं को चुनाव में उम्मेदवार खड़ा किया। उसने हिन्दुओं के वोट विभाजित करने के विचार से ऐसा किया। जिन हिन्दुओं को उसने हमेशा अपमानित किया था, अब उन्हीं से चुनाव के दौरान वोट माँगने का दुस्साहस किया। देश के तमाम गिरजाघर भी हिन्दुओं के

विरोध में अपना प्रचार कर रहे थे। आखिर हिन्दुओं का अपराध क्या था ? बस इतना ही कि उन्होंने सिविल सर्विस, वाणिज्य, शिक्षा आदि में अपना हक माँगा था। उन्होंने दृढ़तापूर्वक यह भी माँग की थी, कि उनकी प्रतिष्ठा को ठेस न पहुँचाई जाय। डॉक्टर रामगुलाम का अपराध यही था कि उन्होंने पददलित लोगों की भावनाओं का प्रतिनिधित्व करके उनके जीवन को बेहतर और सुखी बनाना चाहा था, मॉरीशस में प्रजातन्त्र और समाजवाद का प्रचार एवं विकास करना चाहा था। अब डॉक्टर साहब अपने संघर्ष के अन्तिम चरण तक पहुँच चुके थे। मुट्ठी भर लोगों के हाथों से हमेशा के लिए सत्ता ले लेने का समय आ गया था। भारतीय मूल की जनता इतनी अनुभवहीन न थी कि पी. एम. एस. डी. के वहकावे के प्रचार में आकर वर्षों के अपमान, शोषण और द्वेष को भूल जाती। हिन्दुओं ने यह अनुभव किया कि कुलीनतन्त्र का वह अपमान, शोषण और द्वेष उनके स्मृति-पटल में अभी ताजा है। यही कारण है कि वे कुलीनतन्त्र के पोषकों के मिथ्या प्रचार में नहीं आये।

सन् 1948 से, मजदूर दल हर आम चुनाव में जीतता आया था। अतः डॉक्टर रामगुलाम को पूरा विश्वास था कि सुखदेव विष्णुदयाल के स्वतन्त्र अग्रगामी दल तथा रजाक मुहम्मद की मुस्लिम कार्रवाई समिति के सहयोग से पी. एम. एस. डी. के लाखों रुपये खर्च करके स्वतन्त्रता-विरोधी आन्दोलन और उसके पक्षधर, प्रक्रियावादी अखबारों—ले सेरनेएँ एवं ले मोरिसियें के वीभत्स लेखों की बाढ़ के बावजूद भी, जीत उनके दल अर्थात् स्वतन्त्रता प्रिय जनता की ही होगी। हिन्दू जनता की स्वतन्त्र-प्रियता की भावना अन्तःकरण की प्रेरणा थी। इसलिए हिन्दुओं पर साम्प्रदायिकता का प्रभाव न पड़ा। उन्होंने मजदूर दल का साथ देकर यह साबित कर दिया कि यह दल मॉरीशस का एकमात्र राष्ट्रीय दल है, जिसकी नींव प्रजातन्त्र और समाजवाद पर आधारित है और इसी दल ने गरीबों, पददलितों के जीवन में परिवर्तन के दर्शन कराये थे।

जनता खुद यह भली-भाँति देख और समझ सकती थी कि मजदूर दल से सहयोग करके उसने जीवन के हर क्षेत्र में कितनी सारी सुविधाएँ हासिल की थीं। शिक्षा, मकान की सुविधा, रोजगार, स्वास्थ्य, पारिवारिक भत्ता, बुढ़ापे की पेंशन, नौकरी की सुरक्षा तथा काम की बेहतर शर्तें, ट्रेड यूनियन का विकास, राष्ट्रीय अधिकार, सिविल सर्विस में हिस्सा, व्यापार-व्यवसाय, उद्योग, आयात-निर्यात, बीमा तथा बैंक सम्बन्धी सुविधाएँ आदि। जनता उन मुट्ठी भर लोगों के हथकंडों से भी परिचित थी जो अपने अधिकारों की रक्षा के लिए प्रयत्न कर रहे थे। अतीत की अपनी सारी उपलब्धियों के बारे में बताते हुए तथा जनता के समक्ष परिस्थिति की एक सही तस्वीर उपस्थित करते हुए, बुद्धिजीवियों के सहयोग को प्राप्त करने का

मजदूर दल का हमेशा से सौभाग्य रहा। उनमें विकासवादी लेखक, कवि, उपन्यासकार और पत्रकार भी थे जो मणिलाल डॉक्टर के समय ही जन्म ले चुके थे। उनमें आर. के. बुधन, अनत बिजाधर, जय नारायण रॉय, बासुदेव विष्णुदयाल, हजारीसिंह, नेपाल, खेर जगतसिंह, रामलाला, बिहारी, इड्ड, वखोरी, मल्लू, मार्सेल कार्वों, एरवे मासों, फिलीप फोरजेन (Forgett), गी बालाँसी और बहुत सारे अन्य लोग थे। स्वतंत्रता-प्रिय स्वयं सेवकों की एक सेना भी थी, जो मजदूर दल के लिए देश भर में काम कर रही थी। फलतः डॉ० रामगुलाम ने विश्वास के साथ 7 अगस्त को चुनाव का सामना किया और 39 सीटों से विजयी हुए जब कि पी. एम. एस. डी. को 23 सीटें प्राप्त हुईं। यह एक ऐतिहासिक जीत हुई थी। अन्त में मॉरीशस की स्वतन्त्रता प्रेमी जनता ने किले पर कब्जा कर लिया और अब मॉरीशसवासी स्वतन्त्र थे। गी फोर्जेत जैसे मजदूर दल के कुछ ख्याति प्राप्त सदस्यों की हार भी हुई। वाक्वा में पी एम. एस. डी. के नेता, जुल केनिग की हार हुई थी।

22 अगस्त, 1967 को डॉक्टर रामगुलाम ने विधान सभा में वह ऐतिहासिक प्रस्ताव रखा कि मॉरीशसीय जनता की स्वतंत्रता की इच्छा पर अमल करके उसे चरितार्थ किया जाय। उन्होंने राष्ट्र को स्मरण दिलाया—"यह एक सफर का अन्त और दूसरे का आरम्भ है। जो लोग देश के विकास का विरोध करते हैं, उन्हें उस शान्तिपूर्ण आन्दोलन पर गौर करना चाहिए जो मॉरीशस में हुआ और उनके गले के नीचे यह बात उतरनी चाहिए कि अब हमें उस नई दुनिया में जीना है जो अभी-अभी मॉरीशस में पैदा हुई है। दुर्भाग्य की बात है कि कुछ लोग वर्ग-विशिष्टता पर अभी भी विश्वास करते हैं। यह कहा जा सकता है कि जिन्होंने एक शताब्दी से भी ज्यादा आर्थिक और राजनीतिक सत्ता को अपने हाथों में रखा था, उन्हें अपनी जमींदारी प्रथा के विशेषाधिकार को जाने देने में मृत्यु-पर्यन्त संघर्ष करना था। समानता और स्वतंत्रता के इस वातावरण में हमारे लोगों में एक नई चेतना जागेगी और उस शताब्दी में एक नवीन मॉरीशस की आशा हो रही है।"

जब स्वतन्त्रता दिवस के छः मास शेष रह गये थे तब मॉरीशस में एक परिवर्तित चित्त-वृत्ति नजर आ रही थी, क्योंकि जनता उस महान् दिन की तैयारियां शुरू कर चुकी थी। लेकिन पी. एम. एस. डी. जो साम्प्रदायिक विद्वेष पालता आया था, उसने अब किराये के उन गुण्डों को भड़का दिया, जिन्हें इसलिए रखा गया था कि वे स्वतंत्रता के समर्थकों से लड़ सकें। पोर्टलुई में पी. एम. एस. डी. के पक्षावलम्बियों के बीच एक विनाशकारी झगड़ा शुरू हुआ, जो प्लेन वेर्त और रोश बुआ में साम्प्रदायिक विप्लव के रूप में फैला। आजादी के दुश्मनों ने, जो सामाजिक विकास के विरोधी थे व अपने किराये के अनुचरों को ऐसा उपद्रव करने को उत्तेजित किया कि नागरिकों की रक्षा तथा उनको जान बचाने के लिए करफ्यू लागू करना पड़ा।

इससे पहले 1965 में भी डॉक्टर रामगुलाम को पब्लिक आर्डर एक्ट (Public Order Act) को पास करना पड़ा था। पुराने कुलीनतन्त्र ने साम्प्रदायिक विप्लव की चिनगारियाँ भड़काने को ललकारा था, क्योंकि स्वतन्त्रता से पूर्व के मॉरीशस में जमींदारी प्रथा को जो लोग कायम रखना चाहते थे, उन्होंने अपने पुराने विशेषाधिकारों को बनाये रखने के लिए एक अन्तिम आशा रहित लड़ाई लड़ी थी।

12 मार्च, 1968 को एक चमकीले आकाश के तले पोर्टलुई में स्वतंत्रता समारोह मनाया गया। एक स्वतंत्र और नए देश में बहती हुई शीतल हवा में, मॉरीशसीय झंडे को फहराया गया। उस छोटे से क्षण में डॉक्टर साहब को परमानंद की सी अनुभूति हुई और उनके मित्र आँकचिल, रोजमों तथा सीनीवासेन की याद में उनकी आँखों से आँसू छलक आये। उन्होंने उनके साथ ही इस दिन के लिए संघर्ष किया था। पर आज इस स्वर्णावसर का आनंद लेने के लिए वे जीवित नहीं थे।

दुनिया के सभी कोनों से बधाई-पत्र आ रहे थे। निम्नलिखित अंश उस भाषण का है जो 11 मार्च को आनथोनी ग्रीनवूड ने किया था। "प्रधानमंत्री, आप बीस सालों से भी अधिक लम्बे समय तक, अपने देश को आगे बढ़ाने में प्रमुख शक्ति रहे हैं। आप इस राष्ट्र के मुख्य निर्माता रहे हैं।"

दशम परिच्छेद

माँरीशस प्रगति के पथ पर

चीनी उद्योग

सन् 1810 में माँरीशस ब्रिटिश सरकार के अधीन हो गया। फ्रांसीसी काल में फ्रांसीसी राज्यपाल माहे दे लाबूर्दोनि ने 147 बीघे जमीन अपने फ्रांसीसी बन्धुओं को दे दी थी। समय के दौरान ये फ्राँसीसी बड़े किसानों एवं पूँजीपतियों के रूप में उभर गये। ब्रिटिश काल में माँरीशस मुख्यतः शक्कर उत्पादक देश बन गया। दास-प्रथा के अन्त होने पर भारतीय आप्रवासियों से गन्ने पैदा करने का काम लिया गया। सन् 1821 में माँरीशस ने 10, 205 टन चीनी का उत्पादन किया था। भारतीय आप्रवासियों के आ जाने से इस उद्योग ने भारी प्रगति की। 1854 में 1,07, 023 टन शक्कर का उत्पादन हुआ। इस तरह चीनी उद्योग माँरीशसीय आय की रीढ़ की हड्डी बन गया। सन् 1841 में 16,000 बीघे जमीन पर ईख की खेती होती थी। एक दशक बाद भारतीय मजदूरों के कठिन परिश्रम से 1,10,000 बीघे जमीन पर कृषि-कार्य होने लगा। इस मुख्य उद्योग पर कुलीनतन्त्र का ही एक-मात्र नियन्त्रण था। देश की सभी आर्थिक संस्थाओं पर उन्हीं गोरे पूँजीपतियों का अधिकार था। सन् 1853 के नवम्बर मास में चैम्बर ऑफ एग्रीकल्चर की सृष्टि की गई। इसी संस्था के माध्यम से गोरों ने शक्कर उद्योग को अपने नियन्त्रण में रखा। देश को सम्पत्तिशाली बनाने वाले भारतीय श्रमिक थे। इन्हें गोरों के अन्याय, अत्याचार और शोषण का शिकार बनना पड़ा।

सन् 1901 में 100 किलो शक्कर का दाम साढ़े चौदह रुपये था। सन् 1920 में 100 किलो चीनी का मूल्य एक सौ एक रुपया छत्तीस सैंट हो गया। गोरे किसानों और मिल-मालिकों ने बहुत भारी मुनाफा कमाया था। उनकी तिजोरी मजदूरों की मेहनत से भर गई। 1937 और 43 में मजदूरों ने हड़ताल की। पंडित वासुदेव विष्णुदयाल ने ब्रिटिश सरकार के कार्यकलाप का कड़ा विरोध किया। मजदूर दल की स्थापना हो चुकी थी। डॉक्टर रामगुलाम का "एडवांस" पत्र निकल चुका था। मजदूरों को सहारा मिला।

1946 और 48 में "साइक्लोन एण्ड ड्राइट इन्स्यूरेन्स फण्ड" (Cyclone and draught Insurance Fund) और "सुगर इन्डस्ट्री लेबर वेल्फेयर फण्ड" (Sugar Industry Labour Welfare Fund) की स्थापना की गई, "शक्कर-उद्योग—श्रम-कल्याण-निधि" ने गाँवों में मजदूरों और छोटे किसानों की बड़ी सहायता की। उनके लिए ईंटों के मकान, मनोरंजन के लिए कल्याण-केन्द्र, स्वास्थ्य, शिक्षा, प्रसूति एवं शिशु-कल्याण सेवाओं की व्यवस्था की। सत्ता में आने पर मजदूर दल की सरकार ने इस संस्था को सेवा-कार्य जारी रखने के लिए प्रोत्साहित किया। इस तरह ग्रामीण लोगों के जीवन-स्तर में सुधार हुआ।

मजदूर दल की सरकार ने चीनी उद्योग के विस्तार के लिए अपना पूरा सहयोग दिया। विशेषकर छोटे किसानों और मजदूरों को। "सुक्रोज" (चीनी) के विवादास्पद विषय को लेकर बड़े मिल-मालिकों तथा छोटे किसानों में संघर्ष था। डॉक्टर रामगुलाम ने इस समस्या के हल के लिए सदा सक्रियता से छोटे किसानों का साथ दिया। आरम्भ से ही "सेन्ट्रल बोर्ड" बड़े मिल-मालिकों के मनोनीतों द्वारा संचालित था। पहले ही यह तय था कि छोटे किसानों को उनके गन्ने से प्राप्त चीनी का दो तिहाई भाग उन्हें मिलेगा और एक तिहाई भाग मिल-मालिकों को। किन्तु बाद मे "सेन्ट्रल बोर्ड" ने इस निर्णय के विरुद्ध कदम उठाया। डॉक्टर साहब इस मामले को उच्च न्यायालय में ले गए। तदुपरान्त उन्होंने "प्राइवी कौंसिल" में अपील की। फिर उन्होंने कौंसिल में प्रस्ताव किया कि हर किसान को अपनी ईख से प्राप्त चीनी का कम से कम दो तिहाई भाग प्राप्त हो तथा एक तिहाई भाग मिल-मालिक को मिले। चाहे इस प्रस्ताव को अपना लिया गया तो भी इसे उस समय तक कार्य में परिणत नहीं किया गया, जब तक डॉक्टर रामगुलाम को 1957 में मन्त्रीमंडलीय प्रणाली के द्वारा सरकार पर पूर्ण नियन्त्रण न मिल गया। सरकार पर पूरा नियन्त्रण पा लेने पर शक्कर उद्योग को चरम सीमा तक विकसित करने तथा उसके मार्ग में आने वाली सभी बाधाओं को दूर हटाने की डॉक्टर रामगुलाम की नीति रही। मजदूर सरकार ने ईख की खेती के लिए खाद, दवा आदि पदार्थों में अनुदान देकर मिल-मालिकों और छोटे किसानों को सहायता पहुँचाई। छोटे किसानों को किफायत दाम में रोपाई के उपकरण प्राप्त कराये। शक्कर के निर्यात में भी सरकार ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

छोटे कृषक और मजदूर

शक्कर उद्योग के विकास में, चीनी-कोठियों की जमीन को टुकड़ों में विभाजित करके बेचना एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटना था। मजदूरों के सरदारों तथा बूढ़े आप्रवासियों में बेची जाने वाली यह वह जमीन थी, जो अनुपजाऊ और पथरीली

थी तथा विशेषकर पहाड़ी जमीन हुआ करती थी, भूमि विक्रय-कार्य सबसे पहले वेलमार, फ्लाक जिले में हुआ। जोजेफ जिम्रोरे की विधवा ने अपनी जमीन को बाईस टुकड़ों में बाँट कर नौ प्रतिशत सूद लेते हुए इस शर्त पर बेची कि खरीदार अपने गन्ने को निश्चित किये गये मिल से ही बेचे। ऐसी चट्टान-भरी जमीन के टुकडों को खरीदने के लिए खरीदारों को सूद पर रुपये उधार दिये गये तथा अन्य आर्थिक सहायता पहुँचाई गई। जमीन पाकर आप्रवासियों ने इतना कठोर परिश्रम किया कि बहुतों ने गन्नों से प्राप्त आमदनी से अपना ऋण पाँच वर्षों के अन्दर ही चुका डाला और इस तरह वे कुछ धन और जमीन के मालिक बन गए। जमीन के स्वामी बनने की चाह में हिन्दू श्रमिक अति त्यागपूर्ण जीवन व्यतीत करते थे। अपने गोरे मालिकों के खेतों में कड़ी मेहनत करने के अतिरिक्त वे अन्यान्य कार्य करते थे, जैसे गौपालन करना, सब्जियाँ बोना, उन्हें बाजार में बेचना आदि। इस तरह बहुत से लोग अपना ऋण चुकाकर छोटे किसान बन गए। गोरे मालिकों ने अपनी जमीन बेचते समय यह नहीं सोचा होगा कि एक दिन ऐसी मशीनों से काम लिया जाएगा जो सभी पत्थरों को हटाकर बंजर भूमि को भी कृषि-योग्य बना देंगी। यन्त्रीकरण के विस्तार से 1925 में जमीन को टुकड़ों में बेचने की क्रिया समाप्त हो गई। अब स्वयं कोठी-मालिक ही जमीन खरीदने लगे।

यन्त्रीकरण से जहाँ पैदावार सम्बन्धी सुधार आया वहाँ कुलीनतन्त्र और छोटे स्वतन्त्र कृषकों के सम्बन्ध में भी परिवर्तन नजर आया। जमीन की विक्रय सम्बन्धी शर्तों के कारण छोटे किसान अपनी ईख को नियत कारखानों में बेचने को विवश थे। शक्कर उद्योग में अधिक लाभ गन्ने उपजाने की अपेक्षा चीनी पैदा करने वाले को होता था जो मिल-मालिक थे। फिर भी हिन्दू खेतिहर अपनी जमीन की उपज से प्राप्त आय द्वारा अपनी सन्तानों को शिक्षा देने-दिलाने में लग गए।

उन दिनों छोटे किसानों की सबसे बड़ी समस्या थी, उधार पर रुपये का पाना। सभी बैंक कुलीनतन्त्र के अधिकार में थे। फलतः बहुत से छोटे कृषक ऋण में डूबे हुए थे। इसका मूल कारण था कि चीनी के भाव का गिर जाना। कभी तो दाम इतना गिर जाता था कि गन्ने के उत्पादन का खर्च भी नहीं निकल पाता था। इस शक्कर विक्रय का अधिकांश लाभ इंग्लैण्ड और मॉरीशस के कुलीनतन्त्र को मिलता था। गोरे सस्ती मजदूरी देकर काम कराते थे। खेतों में नौकरी की कोई सुरक्षा न थी। उन दिनों मजदूरों की कोई यूनियन अथवा राजनीतिक संस्था भी न थी, जो उनका पक्ष लेकर धन के उचित बंटवारे में सहायता पहुँचाती। फलतः देश की बहुसंख्यक आबादी अर्थात् मजदूरों को बड़ी गरीबी में जीना पड़ता था। वे उचित भोजन और शिक्षा के अभाव के शिकार थे। मलेरिया और अन्य रोगों से

ग्रस्त हो जाते थे। छोटे कृषकों के उदय से एक वर्ग-संघर्ष का जन्म हुआ। यही वर्ग संघर्ष मजदूर दल के रूप में प्रकट हुआ, जिसके आगे चलकर प्रमुख नेता हुए डॉक्टर शिवसागर रामगुलाम।

शिवसागर अपने सौतेले भाई, रामलाल रामचरण के घर में पले थे जो एक छोटा किसान था। इसलिए वे छोटे कृषकों की कठिनाइयों से भली-भाँती परिचित थे। यही कारण है कि छियालीस वर्ष तक धारा सभा के सदस्य के रूप में वे सदा किसानों के हित में ही बोलते रहे। वे जानते थे कि खेतिहरों को रुपये उधार लेने में कितना भारी सूद चुकाना पड़ता है। ये किसान अपने खेतों की सिंचाई की कठिनाइयों में उलझे रहते हैं। अपने गन्नों को कारखाने तक पहुँचाने में सवारी की समस्याओं का सामना करते हैं।

डॉक्टर रामगुलाम के माध्यम से मजदूर दल की सरकार ने चीनी उद्योग के विकास के लिए छोटे किसानों को अनेक सुविधाएँ देकर, उन्हें प्रोत्साहित किया। ऐसा कानून बनाया गया कि कृषकों को अपने शक्कर उत्पादन का दो तिहाई लाभ प्राप्त हो और मिल-मालिकों को उस चीनी का एक तिहाई भाग मिले। छोटे किसानों को अपने खेतों में प्रयोग किये जाने वाले खाद पर सरकार ने अनुदान दिया, खेती के औजारों को सस्ते दाम में उपलब्ध करवाया तथा शक्कर-विक्रय के लिए मण्डी की व्यवस्था की, ताकि शक्कर उत्पादक सुरक्षित रह सकें।

चीनी उद्योग में काम करने वाले श्रमिकों की नौकरी को सुरक्षित रखने के लिए समय-समय पर अनेक अधिनियम पारित किये गये, वेतन में वृद्धि के कानून बने, अन्य सामाजिक संविधानों की व्यवस्था की गई, ऐसा अधिनियम पास किया गया कि कटनी के समय काम में अस्सी प्रतिशत की उपस्थिति देने वाले मजदूर की नौकरी कटनी के मौसम की समाप्ति पर शेष वर्ष के लिए सुरक्षित रहे और उसे स्थायी कामकर समझा जाये। सन् 1977 में जब मजदूर दल की सरकार ने प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा को मुफ्त कर दिया तब खेतों में काम करने वालों की कमी खटकने लगी, क्योंकि मजदूरों के बच्चे शिक्षित होकर सरकारी कामों में प्रविष्ट होने लगे। एक वह समय था जब मिल-मालिक मजदूरों को ठुकराते थे, और अब एक ऐसा समय आया कि उन्हें श्रमिकों का अभाव खटकने लगा।

सन् 1958 में मन्त्रिमण्डल प्रणाली की स्थापना से श्रमिकों एवं कृषि-कार्य में लगे मजदूरों के जीवन-स्तर को ऊँचा उठाने में भारी प्रयास किया गया, उन्हें अनेक प्रकार की सुविधाएँ उपलब्ध हुईं। कठिन काम मशीनों की सहायता से किये जाने लगे। मजदूर अनेक प्रकार के यन्त्रों का उपयोग करने लगे। यह कलंक धोने

का प्रयास किया गया कि हाथ से काम करने वाले हेय होते हैं। नई पीढ़ी को खेती-बारी में दिलचस्पी लेने को प्रोत्साहित किया गया। खेतों में काम करने वाले श्रमिक चावल आटे का प्रयोग अधिक मात्रा में करते हैं। इन दो खाद्य पदार्थों को सस्ते दाम में बेचने के लिए सरकार ने भारी अनुदान दिया। उल्टे मिल-मालिकों एवं बड़े किसानों की आमदनी पर काफी मात्रा में कर लगाया गया। इस कर से झुंझलाकर उन्होंने 1979 में हड़ताल की। उनकी माँग थी कि उनपर नया कर न रखा जाय। चीनी उद्योग से ही देश की मुख्य आमदनी होती रही। लगभग आधे मॉरीशस की जमीन इसी ईख की खेती से घिरी हुई है। काम करने वालों की सर्वाधिक संख्या इसी उद्योग में लगी हुई है। इसी मजदूर दल की सरकार ने इस उद्योग पर अपना पूरा नियन्त्रण रखना चाहा।

डॉक्टर रामगुलाम की सरकार ने ऐसी नीति अपनाई कि शक्कर उद्योग से प्राप्त आय का उचित वितरण हो और उससे जनकल्याणकारी राज्य का निर्माण किया जाय। इसीलिए इस उद्योग पर उचित, न्यायसंगत कर लगाया। पहले जब देश का शासनाधिकार कुलीनतन्त्र के हाथ में था, तब इस उद्योग पर कर नहीं लगाया जाता था। गोरे किसान द्वारा ही कुलीनतन्त्र की सरकार की गठन होती थी। ये गोरे कृषक चीनी उद्योग के अधिकांश लाभ को हथिया लेते थे और दक्षिण अफ्रीका तथा रोडेशिया में बसे अपने रिश्तेदारों को नये उद्योग-धन्धे चालू करने के लिए विपुल सम्पत्ति भेज दिया करते थे। चूँकि इस उद्योग की सामदनी मुख्यतः मजदूरों और छोटे किसानों के अथक परिश्रम से प्राप्त होती थी, इसलिए मजदूर दल की सरकार चाहती थी कि इन भूमि-पुत्रों को उस आय का उचित हिस्सा मिले। डॉक्टर रामगुलाम ने एक सामाजिक क्रान्ति को जन्म दिया। उनके मार्ग को अवरुद्ध करने के लिए कुलीनतन्त्र के अनुयायियों ने हर मुमकिन कोशिश की। उन्हें अपने पत्रों—"ले सेरनेएँ" और "ले मोरिसियें" के माध्यम से राउल रिवेट और आँद्रे मासों जैसे कुलोनतन्त्र के पक्षधरों ने अपनी लोह-लेखनी से लांछित करने का पूरा यत्न किया।

चीनी उद्योग पर नियन्त्रण रखने के लिए सरकार के एक अन्य मार्ग भी अपनाया। उसने इस उद्योग से सम्बन्धित अनेक बोर्डों–संस्थाओं में अपना प्रतिनिधि नियुक्त करना आरम्भ किया। पूर्व में इन बोर्डों में केवल गोरे किसानों और मिल-मालिकों के ही प्रतिनिधि बैठते थे। 1972 से चैम्बर ऑफ एग्रिकल्चर, सूगर सिंडिकेट, सूगर इन्डस्ट्री लेबर वेल्फेर फण्ड, साइक्लोन एण्ड ड्राउट फण्ड (Chamber of Agriculture, Sugar Syndicate, Sugar Industry Lobour Welfare Fund, Cyclone and draught Fund) आदि के बोर्डों में छोटे किसानों के प्रतिनिधि भी बैठने लगे। कुछ बोर्डों से तो फ्रांसीसियों के हाथों से सत्ता लेकर

अश्वेत लोगों को सौंप दी गई। 1941 में कंट्रोल बोर्ड की जब स्थापना हुई थी तब से वह गोरों के अधीन था। किन्तु 1973 से इसका संचालन श्री अमीर अल्ली द्वारा होने लगा। यद्यपि चीनी उद्योग के नियन्त्रण में मजदूर दल की सरकार ने अनेक बोर्डों में अपने प्रतिनिधियों को नियुक्त किया तथापि गोरों द्वारा शताब्दियों से सचालित इस उद्योग में अर्जित उनके अनुभव, उनकी निपुणता की सरकार प्रशंसक थी। इसलिए अनुचित नियन्त्रण रखकर इस उद्योग के विस्तार करने में गोरों को हतोत्साहित नहीं किया। यही कारण है कि पॉल वेराँजे ने जब अपने एम. एम. एम. दल के माध्यम से शक्कर उद्योग के राष्ट्रीयकरण की आवाज बुलन्द की, तब डॉक्टर रामगुलाम ने इसके राष्ट्रीयकरण में कदम उठाने से इन्कार किया, क्योंकि उनके अनुसार राष्ट्रीयकरण से देश का अहित होता।

विदेशों में चीनी-विक्रय द्वारा प्राप्त आय पर अब सरकार पूरा नियन्त्रण रखने लगी। इस विक्रय कार्य में कृषि मन्त्री दखल देने लगे। सारा व्यापार-कार्य सेंट्रल बैंक, बैंक ऑफ मॉरीशस और डिवलॉपमेंट बैंक (Central Bank, Bank of Maritious & Development Bank) के जरिये होने लगा। सन् 1964 से पूर्व सरकार चीनी-आय पर उचित नियन्त्रण नहीं रख पाती थी। गोरे मिलमालिक रोडेशिया और दक्षिण अफ्रीका में बसे अपने रिश्तेदारों को अन्य उद्योग चालू करने के लिए बहुत सारा धन भेज दिया करते थे। इस तरह मॉरीशस बहुमूल्य विदेशी मुद्राओं से हाथ धो बैठता था। किन्तु 1964 के बाद सरकारी बैंकों ने विदेशी मुद्राओं पर भारी नियन्त्रण रखना शुरू किया, जिससे देश का आर्थिक विकास हुआ। फलतः नये उद्योग-धन्धे और होटलों की सृष्टि हुई। मैरिन ऑथोरिटी तथा सुगर बल्क टर्मिनल (Marine Authoritiy & Sugar Bulk Terminal) की स्थापना करके चीनी-निर्यात पर नियन्त्रण रखा गया।

राष्ट्रकुल शक्कर संविदा (Commonwealth Sugar Agreement) के अस्तित्व में आने पर मॉरीशस उसका सदस्य बना। सदस्य देशों को अपनी चीनी बेचने के लिए निश्चित मंडी मिली। इस तरह मॉरीशस को उचित दाम में 4,70,000 टन शक्कर बेचने की गैरंटी मिली। समय बदलता गया और मॉरीशस का अनेक मंडियों से सम्बन्ध स्थापित हुआ। अन्त में 5,00,000 टन चीनी की बिक्री की यूरोपीय मंडी से गैरंटी मिली। इस तरह मजदूर दल की सरकार ने चीनी उद्योग को सुरक्षित और प्रगतिशील बनाये रखने के लिए पूरा बल लगाया।

विविध उद्योग-धंधे

जब से लेबर पार्टी सत्ता में आई तब से मॉरीशस ने सभी क्षेत्रों में अभूतपूर्व प्रगति की। मॉरीशसीय समाज पिछड़ेपन, अविकसित अवस्था से हटकर एक प्रगतिशील समाज में बदल गया।

1948 के आम चुनाव में निर्वाचित होकर जब डॉक्टर रामगुलाम धारा परिषद् के सदस्य बने थे तब देश का श्रमिक वर्ग विकट दरिद्रता में जीवन यापन कर रहा था, लोग उचित भोजन की कमी के कारण तरह-तरह के रोगों के शिकार थे। चहुँ तरफ अशिक्षा व्याप्त थी। मलेरिया, अनेमिया आदि से पीड़ित होकर शिशु और माताएँ मौत के मुँह में समा जाते थे।

उन दिनों देश की आबादी कम थी और सस्ते दामों में खाद्य पदार्थों का आयात होता था। सन् 1914 में आवश्यक खाद्य पदार्थों के एक दसवें भाग का ही आयात होता था। सन् 1979 में, मॉरीशस को अपने खाद्य पदार्थों के तीन चौथाई भाग का आयात करना पड़ा। चीनी निर्यात द्वारा प्राप्त विदेशी मुद्राओं का पचास प्रतिशत भाग केवल खाद्य पदार्थों के आयात में व्यय करना पड़ा। यह भारी खर्च इसलिए करना पड़ा, क्योंकि जनसंख्या में भारी वृद्धि हो गई थी। जीवन स्तर बदल चुका था। देशवासियों के खान-पान में भारी परिवर्तन आ गया था। खाद्य पदार्थों के उत्पादन एवं इस दिशा में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए ईख की खेती के विस्तार के साथ-ही-साथ अन्य पैदावारों को बढ़ाने की ओर सरकार ने पूरा ध्यान दिया।

मॉरीशस का क्षेत्रफल 720 वर्गमील है। आबादी लगभग एक मिलियन तक पहुँच गई कृषि योग्य जमीन केवल 4,40,000 बीघे ही है। छियासी प्रतिशत जमीन पर ईख की खेती होती है। लगभग छः प्रतिशत कृषि-योग्य भूमि पर चाय की खेती होती है और कुछ जमीन पर तमाखू और सब्जियाँ बोई जाती हैं। यहाँ अक्सर तूफान आते रहते हैं और सूखा पड़ता रहता है। इसलिए मॉरीशस की जमीन ईख की खेती के लिए ही सर्वाधिक उपयुक्त है। प्याज और आलू की पैदावार में मॉरीशसवासियों ने लगभग आत्मनिर्भरता प्राप्त कर ली है। चावल यहाँ के लोगों का मुख्य भोजन है। किन्तु इसका उत्पादन अति न्यून मात्रा में होता है। रामगुलाम की सरकार खाद्य पदार्थों की उपज तथा पशु-पालन को बढ़ावा देती रही। चाय की खेती के विकास के लिए "टी डिवलॉपमेंट ऑथोरिटी" (Tea Development Authority) की स्थापना की गई और बहुत से मजदूरों को इस उद्योग में लगाया गया। चाय के कारखानों को आधुनिक बनाया गया। इस उद्योग से मॉरीशस को सन् 1980 में तेंतीस मिलियन रुपये प्राप्त हुए।

सन् 1964 के मार्च मास में मॉरीशस डिवलॉपमेंट बैंक की स्थापना की गई। इस बैंक ने कई छोटे-मोटे उद्योग-धन्धों को चालू करने में सहायता पहुँचाई। दो साल बाद बैंक ऑफ मॉरीशस की स्थापना हुई। इस बैंक के द्वारा वही काम हुआ, जो बैंक ऑफ इंग्लैंड करता है। इस बैंक ने मॉरीशसीय मुद्राओं को विदेशों में

भेजने और खर्च करने पर नियन्त्रण रखा। इस बैंक की स्थापना से पूर्व इस देश की मुद्राओं को बड़ी सुविधापूर्वक अन्य देशों में भेज दिया जाता था। सन् 1953 से 1959 के बीच छप्पन मिलियन रुपये दक्षिण अफ्रीका और रोडेशिया में भेज दिये गये थे। बैंक ऑफ मॉरीशस के अस्तित्व में आ जाने से सन् 1966 तक केवल तीन मिलियन रुपये ही विदेश जा सके। इस बैंक ने देश में उत्पादन बढ़ाने में उद्योगपतियों को प्रोत्साहित किया।

सन् 1952 में, मॉरीशस की जनसंख्या 5,00,000 थी। सन् 1958 में यह आबादी बढ़कर 6,00,000 हो गई। बेकारी बढ़ती गई। 1965 में 20,000 बेरोजगार लोग थे। सन् 70 में यह संख्या 36,500 हो गई। निर्यात की अपेक्षा आयात की मात्रा बढ़ गई। सन् 1968 में बजट में 63 मिलियन रुपये का घाटा हुआ। यह एक गम्भीर परिस्थिति थी।

रामगुलाम की सरकार ने देश की आर्थिक समस्या के समाधान के लिए उचित कदम उठाया। सन् 1970 के दिसम्बर मास में "एक्स्पोर्ट प्रोसेसिंग जोन" (Export Processing Zone) को विकसित करने के लिए कानून बने। उद्योगपतियों को निर्यात सम्बन्धी उत्पादनों में वृद्धि करने के लिए प्रोत्साहित किया गया। स्वदेशी और विदेशी उद्योगपतियों ने नये-नये उद्योग धन्धों में अपनी पूँजी लगाई। सरकार ने उनपर अनुचित कर न लगाने का आश्वासन देते हुए उनके उद्योगों के विस्तार के लिए सुरक्षा प्रदान की।

पर्यटन-उद्योग

1971–81 की विकास-योजना तथा पँचवर्षीय योजना, 1975-80 में पर्यटन को एक और मुख्य उद्योग के रूप में पहिचाना गया। इस उद्योग को प्रोत्साहन देने के लिए सरकार ने 1959 में गवर्नमेंट टूरीस्ट ऑफिस (Gonervment Tourist Office) की स्थापना की। होटल उद्योग के क्रमिक विकास के लिए ऋण देने की तथा अन्य सुविधाएँ उपलब्ध कराई गई। मॉरीशस विभिन्न पर्यटक संस्थानों का सदस्य बना और इन्टरनेशनल यूनियन ऑफ ट्रावेल ऑरगानाइजेशन (International Union of Travel Organisation) के जरिये विभिन्न देशों से सम्पर्क स्थापित किया। सरकार हवाई अड्डे की स्थिति में भारी सुधार लाई। सभी देशों का मित्र बनने तथा किसी से भी दुश्मनी न करने की डॉक्टर रामगुलाम की नीति से प्रोत्साहन पाकर इस उद्योग का शीघ्रातिशीघ्र विस्तार हुआ। 1965 में 15,000 पर्यटक मॉरीशस आये और 1974 में 75,000। इससे विदेशी मुद्रा में 112 मिलियन रुपये का लाभ हुआ। रेस्तोरेंट, नाइट क्लब, (Restaurant,

Night Club) दस्तकारी तथा मछली आदि उद्योगों के लिए पर्यटन उद्योग एक वरदान सिद्ध हुआ। 1974-75 में इस ओर हालाँकि रफ्तार धीमी हो गई, फिर भी 1977 में इस उद्योग से 210 मिलियन रुपये की आय हुई।

सरकार ने मई, 1971 में पहली चारवर्षीय योजना को आरम्भ किया। "सबके लिए रोजगार" कार्यक्रम जुलाई 1971 में आरम्भ हुआ। इस कार्यक्रम ने रिलिफ वरकरों (Relief Workers) को योग्य एवं प्रशिक्षित कामकारों में बदल दिया, जो भिन्न-भिन्न कार्य करने लगे, जैसे सड़कों, पाठशालाओं एवं सरकारी भवनों का निर्माण करना, 1,000 बीघे जमीन में जानवरों के लिए घास रोपना और देहाती जीवन में परिवर्तन लाने के लिए "ग्राम विकास योजना" के सन्दर्भ में 4,000 बीघे जमीन में पुनः जंगल बसाना आदि कठिनाइयों का तो सरकार को सामना करना पड़ा, जैसे बाजार में चीजों के भाव बढ़ जाना आदि। परन्तु एक ऐसी योजना को कार्यान्वित करने में, जिसके सम्बन्ध में कभी सोचा न गया हो, कठिनाइयों का सामने आना स्वाभाविक ही था। यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि विकास और वृद्धि के फलस्वरूप औपनिवेशिक जातिगत और पूँजीवादी शासन प्रणाली की कई शताब्दियों के कष्टों के बाद मॉरीशसवासियों को जरा चैन आया।

इस पहली योजना की सफलता से जो उत्साह जागृत हुआ, उसी के परिणाम-स्वरूप दूसरी योजना 1975-80 को लागू किया गया। भविष्य में काफी विश्वास और आशा रखकर सरकार ने इस दूसरी योजना को शुरू किया। डॉक्टर रामगुलाम चाहते थे कि ज्यादे से ज्यादा विकास और वृद्धि के कार्य हों। विकास की सीमा को और विस्तृत करने के लिए सरकार ने विभिन्न कौशल, सामाजिक सेवाओं और तकनीक में प्रगति को चरम सीमा तक पहुँचा देना चाहा। सरकार का उद्देश्य था 76,000 नई नौकरियाँ पैदा करना। वह जनता की योजना थी, जिसका उद्देश्य था जीवन की स्थिति में सुधार लाना तथा देश में समृद्धि एवं खुशहाली लाना।

जब सरकार ने दूसरी योजना बनाई तब शायद उन तमाम कठिनाइयों और विघ्नों पर गौर नहीं किया जो मार्ग में उपस्थित होते, हो सकते थे। जेर्वेज तूफान के कारण 1975 का साल ठीक से आरम्भ नहीं हो पाया। उस तूफान के कारण शक्कर पैदावार में 33 प्रतिशत की हानि हुई। सरकार को एक बार पुनः जेर्वेज तूफान के 28,000 शिकारों के लिए गृह-निर्माण में धन, शक्ति, ध्यान सब कुछ लगाना पड़ा। इसके पश्चात् अन्यान्य कठिनाइयाँ आईं। कुछ तो बाह्य समस्याएँ

थीं। कुछ उत्तरदायित्वहीन विरोध से उत्पन्न हुई और कुछ स्वयं सरकार की अपनी कमजोरियों के कारण। वह अर्थ-व्यवस्था पर पूरा नियन्त्रण न रख सकी। जनता की क्रय-शक्ति की रक्षा करने के लिए उसे सभी काम करने वालों के वेतन में बीस प्रतिशत की वृद्धि करनी पड़ी। 1974 में मुद्रास्फीति के दर में 29 प्रतिशत की वृद्धि हुई। सरकार को तेरहवें महीने की तनख्वाह देकर सभी कर्मचारियों को पुरस्कृत करना पड़ा। 1979 और 1980 में तेल के आयात में शक्कर निर्यात से प्राप्त आय का एक तिहाई भाग व्यय करना पड़ा। उसी समय प्राकृतिक प्रकोप का भी सामना करना पड़ा। 1975 में जेरवेज तूफान आया था, अब दिसम्बर 1979 को दूसरा तूफान-क्लोदेत आ गया। 1980 में भारी वर्षा के कारण बाढ़ उतर आई। सरकार की अर्थव्यवस्था को भारी धक्का पहुँचा। इस दुखद स्थिति से लाभ उठाते हुए विरोधी दल ने कई उद्योग-धन्धों में काम करने वाले श्रमिकों को भड़काकर हड़तालें करवा दीं, जिससे देश की आर्थिक स्थिति और भी बदतर होती गई। सरकार-विरोधी-प्रेसों ने जनता को और भी भड़काया। बेरांजे के नेतृत्व में एम. एम. एम. दल ने अनेक हड़तालें करवाईं। शक्कर के कारखाने काम न कर सके। जहाजों से माल उतारा न जा सका। जहाज माल लिए बन्दरगाह से रवाना हो गए। छोटे किसानों के ईख के खेतों में आग लगा दी गई। मॉरीशस की अर्थ-व्यवस्था बिगड़ गई।

विदेशी मुद्रा के अभाव में सरकार को रुपयों का अवमूल्यन करना पड़ा। 23 अक्तूबर, 1979 को तीस प्रतिशत से रुपये का अवमूल्यन हुआ। सरकार को यह अप्रिय कदम उठाना ही पड़ा। यह एक ऐतिहासिक आवश्यकता बन गई थी।

1980 में सरकार ने कई नये कदम उठाये। "सुगर बल्क टर्मिनल कॉर्परेशन (Sugar Bulk Terminal Corporation) तथा "नेशनल ट्रांस्पोर्ट कॉर्परेशन" (National Transport Corporation) की स्थापाना हुई। गैर कानूनी हड़तालों को नियन्त्रित किया गया। मॉरीशस के आर्थिक सुधार और वार्षिक बजट के घाटे की पूर्ति के लिए उत्पादनों में वृद्धि करने को प्रोत्साहन दिया गया। धीरे-धीरे समस्याओं पर सरकार काबू पाती गई। पर्यटन-उद्योग ने मॉरीशस के आर्थिक विकास में भारी सहयोग दिया।

मॉरीशस का चेहरा तीव्रता से बदलने लगा। उद्योगों एवं पर्यटकों की संख्या बढ़ने लगी। ईख के खेतों में गन्नों के साथ-साथ सब्जियों की रोपाई पर जोर दिया गया। जनता के अभावों को मिटाने के लिए पशु-पालन के लिए प्रोत्साहन दिया गया। टापू भर में नये-नये औद्योगिक और व्यापारिक भवन खड़े किये गये।

यात यात पर पूरा ध्यान दिया गया। इनसुधारों से एक बार देश के इतिहास ने पुनः करवट बदली।

शिक्षा के विकास से ही मॉरीशस की प्रगति का इतिहास बना है। शिक्षा ने मॉरीशस को पिछड़ेपन से निकालकर प्रगतिशील बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

इस शताब्दी के आरम्भ में साक्षरता का स्तर बहुत निम्न था। भारतीय मूल के लोगों में मुश्किल से कोई स्नातक दिखाई पड़ता था। श्रमिक वर्ग के जिन कुछ बच्चों को स्कूल जाने का अवसर मिला था, उनकी अन्तिम पढ़ाई छठी कक्षा तक ही हो पाई थी। शिक्षा के प्रति उदासीनता का एक मूल कारण आर्थिक कठिनाई था। माता-पिता की आर्थिक समस्या को सुलझाने के लिए बच्चों को काम में हाथ बटाना पड़ता था। दूसरा कारण था—औपनिवेशिक शिक्षा के प्रभाव से अपनी सन्तानों की रक्षा करना। पाश्चात्य शिक्षा से हिन्दू बच्चों को उनकी भाषा और संस्कृति से वंचित करके ईसाई बना दिया जाता था।

आर्य समाज ने शिक्षा-प्रचार को व्यापक बनाया। विष्णुदयाल बन्धुओं ने विद्या-प्राप्ति पर जोर दिया। सन् 1948 में हुए आम चुनाव के पश्चात् मजदूर दल ने शिक्षा की माँग पर बल दिया। छठे दशक में साक्षरता की दर नब्बे प्रतिशत से ऊपर हो गई।

डॉक्टर रामगुलाम ने शिक्षा-प्रचार में सदा दिलचस्पी ली। उन्होंने अनेक माध्यमों से शिक्षा के प्रचार के लिए प्रोत्साहन दिया। उनको विश्वास था कि देश की प्रगति के लिए शिक्षा अत्यावश्यक थी। उसी के बल से औपनिवेशिकता का अन्त किया जा सकता था। शिक्षा ही मॉरीशस को आधुनिक बना सकती थी। वही इस देश में धन का उचित बँटवारा करवा सकती थी।

सन् 1940 में जब डॉक्टर रामगुलाम सरकारी परिषद् में प्रवेश हुए तब सब के लिए मुफ्त प्राथमिक शिक्षा पर जोर दिया, जब 1951 में वे शिक्षा के सम्पर्क अधिकारी बने तब उन्होंने सबको मुफ्त प्राथमिक शिक्षा देने की सरकारी नीति बनाई। 25 सितम्बर, 1951 में उन्होंने कौंसिल में घोषणा की—"इस टापू में हर लड़के और लड़की को शिक्षा के लिए सब प्रकार की सुविधाएँ देने की नीति रही है।" चूँकि स्कूलों में बच्चों की भरती के लिए पर्याप्त जगह न थी इसलिए श्री सुखदेव विष्णुदयाल ने लकड़ी आदि के साधारण भवन, कम लागत में बनाकर शिक्षा देने की आवाज उठाई, ताकि ग्रामीण बच्चों को भी पढ़ाई का अवसर मिल सके।

डॉक्टर रामगुलाम की नीति थी कि किराये पर पक्के भवन लेकर अथवा तूफानों का सामना कर सकने वाले मजबूत भवनों का निर्माण करके आधुनिक साज-सज्जा से परिपूर्ण भवनों में स्कूल खोले जायें। साथ ही गाँवों में स्कूलों का निर्माण हो, ताकि बच्चे धूप-वर्षा में स्कूल जाने के लिए लम्बी यात्रा करने से बच सकें।

स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चों के स्वास्थ्य की देख-रेख के लिए डॉक्टर-दवाओं की सुविधा प्रदान की गई। पाठशाला की स्वच्छता पर पूरा ध्यान रखा गया। छात्रों को प्रतिदिन स्कूलों में दूध, विटामिन की गोलियाँ आदि देने की व्यवस्था की गई। गरीब बच्चों के स्वास्थ्य में तीव्रता से सुधार हुआ।

मॉरीशस की स्वतन्त्रता से पूर्व, रॉयल कॉलिज क्यूर्पीप और पोर्टलुई में माध्यमिक शिक्षा सीमित थी। ईसाई संस्थाओं की तरफ से भी कुछ माध्यमिक विद्यालय चल रहे थे। इन ईसाई विद्यालयों को औपनिवेशिक सरकार की ओर से सहायता दी जाती थी। किन्तु इनमें केवल ईसाई बच्चों को ही प्रवेश मिलता था। सरकार ने भारतीय मूल के बच्चों को इन कॉलिजों में स्वीकार करने के लिए राजनीतिक दबाव डाला।

सन् 1971–80 की विकास-योजना में सरकार ने राष्ट्रीय शिक्षा के उद्देश्य निर्धारित किये जो निम्न प्रकार थे:—

1. सभी बच्चों के लिए मुफ्त प्राथमिक शिक्षा।

2. 1980 तक 15 और 19 वर्ष के बीच की आयु वाले बच्चों की कम से कम साठ प्रतिशत संख्या को व्यावसायिक प्रशिक्षण का अवसर प्रदान करना।

3. माध्यमिक स्तर पर प्रौद्योगिक और व्यावसायिक प्रशिक्षण की ओर छात्रों को उन्मुख करना।

4. शैक्षिक क्षमता के अनुकूल सबको समान अवसर प्रदान करना।

शिक्षा मुफ्त कर दी गई। 9 अक्तूबर, 1976 को महात्मा गांधी संस्थान का उद्घाटन किया गया। यह संस्थान बच्चों को संगीत, भारतीय भाषाओं तथा संस्कृति के अध्ययन के साथ-साथ एशिया-अफ्रीका और मॉरीशस की संस्कृतियों के अध्ययन एवं शोध-कार्य पर जोर देने के उद्देश्य को लेकर खोला गया। मॉरीशस शिक्षा संस्थान और मॉरीशस विश्वविद्यालय के अस्तित्व में आने से शिक्षा की दिशा में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए। सभी का प्रभाव मॉरीशस के आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक जीवन पर पड़ा। इस तरह मुफ्त प्राथमिक, माध्यमिक एवं विश्वविद्यालयीन शिक्षा का प्रबन्ध करके सरकार जन-जीवन में भारी सुधार लायी।

युवा

सरकार की ओर से मुफ्त शिक्षा की नीति लागू करने से युवाओं को शिक्षित होने की सुविधा उपलब्ध हुई। इसलिए मजदूर दल की सरकार ने अठारह वर्षीय युवाओं को मतदान का अधिकार दे दिया। संसार के बहुत से प्रगतिशील देशों में भी इस उम्र के युवकों को यह अधिकार न मिल सका। स्कूल छोड़ने वाले युवक जो काम-धन्धे में लगने में बहुत छोटे थे, उनकी समस्याओं को सुलझाने के लिए प्रशिक्षित यूथ ऑफिसरों (Youth Officers) की सेवा ली गई। ये यूथ ऑफिसर 25 वर्ष तक के युवकों को, उनके अवकाश के समय में उनका मार्ग दर्शन करने लगे। युवकों को रचनात्मक कार्यों में लगाया गया। कला, शिल्प, कृषि, समाज-सेवा, सांस्कृतिक गतिविधि आदि में उनकी रुचि पैदा करने की कोशिश की गई। सन् 1969 में क्रीडा और युवा मन्त्रालय की स्थापना की गई। इस अलग मन्त्रालय द्वारा युवाओं को मानसिक, बौद्धिक, नैतिक और शारीरिक क्षमताओं को प्रकट करने की सुविधाएँ प्रदान की गईं।

मॉरीशसीय जनसंख्या के दूसरे लोगों की तरह युवा पीढ़ी भी मॉरीशस में समाज और शिल्प विज्ञान के क्षेत्र में हुई तीव्र प्रगति के प्रभाव में आए। पश्चिम के सांस्कृतिक प्रभाव, भौतिकवाद के आकर्षण, मॉरीशस के लोकतन्त्रात्मक शासन और जनकल्याणकारी राज्य की सुविधाओं का प्रभाव उन पर अचूक रूप से पड़ा। सरकार ने युवा पीढ़ी में अपना विश्वास रखा और अठारह वर्ष की आयु में ही वोट का अधिकार दे डाला। युवकों ने जनहितैषी राज्य के लाभ उठाये।

महिला

महिला को औपनिवेशिक काल के अन्याय, असमानता और पक्षपात से मुक्ति दिलाने का आन्दोलन स्वतन्त्रता-संघर्ष के साथ ही शुरू हुआ। अठारहवीं शताब्दी में दास-स्त्रियों का शोषण नाविक लोग रति क्रिया के द्वारा करते थे। भारतीय आप्रवासियों में पुरुषों के अनुपात में स्त्रियों की संख्या बहुत न्यून थी। इसलिए भारत की तुलना में, मॉरीशस में स्त्रियों की अधिक महत्ता थी। सन् 1930 तक भी विवाह-योग्य कन्याएँ लड़कों की तुलना में कम थीं। यही कारण है कि महिलाओं से सम्बन्धित परम्परागत पक्षपात जो भारत से मॉरीशस आया था, शीघ्र ही यहाँ समाप्त हो गया। जात-पाँत की बुराई, दहेज-प्रथा, स्त्रियों के ऊपर पुरुषों का शासन मॉरीशस में अधिकांशत: त्याग दिया गया। आर्य समाज आन्दोलन ने महिलाओं की सामाजिक स्थिति में भारी परिवर्तन लाने का स्तुत्य प्रयास किया। उसने जात-पाँत, पर्दा-प्रथा, अन्धविश्वास, आदि का विरोध करके स्त्री शिक्षा और नैतिक बल पर बहुत जोर दिया। स्त्रियों की कमी और आर्य समाज के सुधार-आन्दोलन के फलस्वरूप मॉरीशस में बसे भारतीय मूल की स्त्रियों

में अन्तर्जातीय विवाह की प्रथा चल पड़ी। इससे मॉरीशसीय समाज की एकता भी अधिक सुदृढ़ हुई।

ग्रामीण स्त्रियाँ अपने व्यक्तित्व का विकास करने में उचित अवसरों से वंचित रहीं। उनके पास कामों की भरमार थी। घरेलू काम-काजों के अतिरिक्त गायों, बकरियों, मुर्गियों के पालन के साथ-साथ बच्चों की देखरेख, अपने प्रयोग के लिए सब्जियाँ पैदा करना, कृषि-कार्य आदि में लगे रहना पड़ता था। इन सब कामों के जरिये वे आर्थिक और सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान देती थीं। उनके योगदान अथवा घरेलू सेवा की उपेक्षा नहीं की जा सकती। उन महिलाओं ने अभूतपूर्व त्याग करके अपने बच्चों को पढ़ाया-लिखाया जिनमें से बहुत से लोग व्यवसायी, सरकारी अफसर, किसान, व्यापारी आदि बने। ग्रामीण स्त्रियों ने पीढी-दर-पीढ़ी अपनी संस्कृति, धर्म, परम्पराओं, मूल्यों आदि को सुरक्षित रखा। उन्हें अगली पीढ़ी को सौंपने में महत्वपूर्ण कार्य किया। उन्होंने विवाह, मृत्यु और अन्य सामाजिक उत्सवों के जरिये अपने लोक साहित्य की रक्षा की तथा भारतीय जीवन पद्धति को बनाये रखा। इतना करने पर भी उनकी कहानी करुण है। जिन घरों में पुरुषों का ही सर्वाधिकार और शासन रहा है, महिलाएँ सतायी गयीं हैं।

पहली वार स्त्रियों ने 1948 में अपने मताधिकार का प्रयोग किया। 1959 में, मॉरीशसवासियों को वयस्क मताधिकार मिला। 1960 तक महिलाओं ने मॉरीशस समाज में अपनी दशा में भारी सुधार कर लिया। 1959 में, समाज कल्याण केन्द्रों में संलग्न केवल दस महिला संघ थे। लेकिन सामाजिक सुरक्षा मन्त्रालय के परिश्रम से सामाजिक गतिविधियों में लगे महिला संघों की संख्या बढ़कर 134 तक पहुँच गई। समाज कल्याण केन्द्रों द्वारा महिलाओं को स्वास्थ्य, शिक्षा, भोजन, शिशु पालन आदि क्षेत्रों में मार्गदर्शन मिला। फलत: ग्रामीण माताओं और शिशुओं के स्वास्थ्य और जीवन-स्तर में बहुत सुधार हुआ। परिवार नियोजन द्वारा उन्हें अनिच्छित बच्चों की चिन्ताओं से मुक्त किया गया।

इस समय अधिक से अधिक स्त्रियाँ उत्पादन के कार्यों में कुशलतापूर्वक लगी हुई हैं। वे बाहरी दुनिया, काम-धन्धे, सरकार, राजनीति, अपने अधिकार एवं उत्तरदायित्व के प्रति जानकारी रखती हैं। इस टापू की लघुता तथा यातायात की सुविधा के कारण ग्रामीण और शहरी स्त्रियों के बीच का अन्तर शीघ्रता से दूर होता जा रहा है। मॉरीशन स्त्रियों का दृष्टिकोण व्यापक हो रहा है। सवसे भारी सुधार नागरिक अधिकार के क्षेत्र में हुआ है। मजदूर दल की सरकार ने बहुत से कानून बनाये हैं जिनके द्वारा धार्मिक विवाह को सरकारी विवाह (Civil Marrige)

की तरह मान्यता मिल गई है। विवाह की उम्र अठारह वर्ष कर दी गई है। पूर्व में धार्मिक विवाह कानून द्वारा मान्य न था। ऐसे विवाह से उत्पन्न बच्चे अवैध माने जाते थे। कानून द्वारा यह स्थिति बदल दी गई। स्त्रियों को पुरुषों के अत्याचार से बचाने के लिए, विवाह-विच्छेद को कानून के जरिये बहुत कठिन बना दिया गया। उन पुरुषों को पत्नी पर पत्नी बदलने की सुविधा न रही। इन कानूनों से स्त्रियों को अपने अधिकारों की रक्षा तथा आत्मनिर्भरता प्राप्त हुई।

संक्षेप में, कहा जा सकता है कि महिलाओं ने स्वतन्त्रता, आत्मनिर्भरता, वैयक्तिक उत्तरदायित्व, समानता आदि को प्राप्त किया। वे अपनी प्राचीन परम्पराओं, सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक विरासत को अगली पीढ़ी को देने के लिए आजाद हैं।

आवास

जब भारतीय आप्रवासी मॉरीशस लाये गये, तब उन्हें कोठियों में बनी फूस की गन्दी तथा संकुचित कोठरियों में रहना पड़ा। शक्कर कोठियों की ये कोठरियाँ बीमारियों के घर थीं, जिनमें अक्सर मृत्यु का ताँता लगा रहता था। नदी, नाले और दूषित कुएँ का पानी पीना पड़ता था। पशु और आदमी, बरतन और कपड़े को उसी दूषित पानी में धोना पड़ता था। नल का साफ पानी बड़े-बड़े बगीचों से घिरे हुए विशाल घरों के मालिकों के लिए सुरक्षित रखा जाता था।

डॉक्टर रामगुलाम ग्राम जुटावों में, बैठकाओं में और कौंसिल में मजदूरों, श्रमिकों को गंदी झोंपड़ियों में रखने की प्रणाली के विरुद्ध आवाज उठाते रहे। 31 मार्च, 1953 को मजदूर दल ने प्रस्ताव किया कि शक्कर-कोठियों में घरों की हालत पर सरकार सर्वेक्षण करे। उस समय 30,000 मजदूर अपने बच्चों के साथ कोठियों में रहते थे। उन झोंपड़ियों में मजदूर-मालिक की निजी सम्पत्ति के रूप में रहते थे। एक-एक कमरे में दस-दस आदमी रहते थे। "सुगर इण्डस्ट्री लेबर वेल्फेयर फण्ड, के जरिये सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों में मजदूरों के लिए तूफान का सामना करने योग्य मकानों का निर्माण करना शुरू किया। डॉक्टर रामगुलाम ने सेंट्रल हाउजिंग कॉर्पोरेशन (Central Housing Corporation) की स्थापना पर बल दिया। 1959 में मजदूर दल के चुनाव जीत जाने पर राज्यपाल ने सेंट्रल हाउजिंग ऑथोरिटी (Central Housing Authority) को स्थापित करने की घोषणा की, जिसके द्वारा गृह-निर्माण-कार्यक्रम को चालू किया गया।

1960 के आरम्भ में "आलिक्स" और "केरोल" नामक दो विनाशकारी तूफान आये जिनसे 25000 मकान नष्ट हो गये। मॉरीशस को तूफान से शिकार,

गृह विहीन लोगों की समस्या का सामना करना पड़ा। हाल ही में बनी "सैंट्रल हाउजिंग ग्रॉथोरिटी" ने ग्रपनी गृह-निर्माण-योजना के लिए विदेशी उधार तथा संयुक्त राज्य से रुपये दान में प्राप्त किये। 1963 तक ग्राते-ग्राते प्रतिदिन 60 से 70 घर तैयार होने लगे। 1725 घर लाशो, प्लैनमायाँ, वेनारेस, क्लुनी, ब्लैक रिवर (Black River) ग्रौर लाफेर्म में बने। 1963 में उपनिवेशों के राज्य सचिव ने फॉरेस्ट साइड के सितें ग्रातली, में 10,000 घरों का उद्घाटन किया। 1970 तक 13,983 घर बन चुके थे। इन घरों में पानी ग्रौर बिजली की व्यवस्था की गई ! इस तरह इस निर्माण-कार्य में 60 मिलियन रुपये का व्यय हुग्रा। सेंट्रल हाउजिंग ग्रॉथोरिटी ने चाय की खेती वाले गाँवों में 2,250 मकान ग्रौर 3000 घर प्राइवेट जगहों में बनाने का कार्य-भार लिया। 1975 में जेरवेज तूफान के ग्रा जाने से ग्रब ग्रौर सात हजार लोग फिर बेघर हो गये ग्रौर 15000 मकान बुरी तरह नष्ट हो गये।

मजदूर दल की सरकार ने मॉरीशस में ग्रच्छे-ग्रच्छे घर बनाने का कार्यभार लिया। "वर्ल्ड बैंक" (World Bank) से सरकार ने रुपया उधार लिया। देखते-देखते शहरों ग्रौर गाँवों में सुन्दर ग्रौर मजबूत घर बड़ी मात्रा में बन गए। बिजली, पानी ग्रादि की व्यवस्था कर के नागरिकों के जीवन सुखी बनाये गये !

कैरोल तूफान के कारण ग्रब कोठियों की लज्जाजनक झौंपड़ियाँ उजड़ गईं। उनकी जगह सेंट्रल हाउजिंग ग्रॉथोरिटी द्वारा बनाये गये साफ-सुथरे मकानों ने ले ली। मजदूर तथा कड़ी मेहनत करने वाले श्रमिक ग्रच्छे मकानों में रहने के ग्रधिकारी बन ही गए। उन मकानों में ग्रनेक सुविधाएँ उपलब्ध हुईं : रसोईघर, स्नानघर, पानी ग्रौर बिजली, रेडियो ग्रौर टेलीविजन ग्रादि। ग्रब बच्चे गन्दगी ग्रौर बीमारी के वातावरण से दूर पलने-बढ़ने लगे। गाँव के पास ही खेल के मैदानों ग्रौर कल्याण केन्द्रों का प्रबन्ध किया गया जहाँ मनोरंजनार्थ शाम के समय लोग खेलने ग्रौर टेलीविजन देखने के लिए इकट्ठे होने लगे।

स्वास्थ्य ग्रौर परिवार नियोजन

1921 में डॉक्टर एन्ड्रू बालफूर की मॉरीशस में स्वास्थ्य ग्रौर सफाई के सम्बन्ध में रिपोर्ट प्रकाशित हुई जो बीसवीं शताब्दी के ग्रारम्भिक दशकों में, व्याप्त स्वास्थ्य की दयनीय ग्रवस्था पर प्रचुर प्रकाश डालती है। मॉरीशस की जनसंख्या ग्रनेक प्रकार के रोगों से पीड़ित थी। इसका मूल कारण था देश का गलत प्रशासन ग्रौर दूषित वातावरण। दस्त, पेचिश, ज्वर, जुकाम, मलेरिया, क्षयरोग ग्रौर दूसरे छूत के रोगों से हजारों लोग मौत के मुँह में समा जाते थे। पोर्टलुई जिले में प्रति

हजार पीछे 47 आदमी रोगों के शिकार होकर मर जाते थे। निमोनिया, चेचक, प्लेग, भी जानें ले रहे थे। भारतीय मूल के लोगों में शराब के दुर्व्यसन ने समस्या पैदा कर रखी थी।

उस समय बच्चे बड़ी संख्या में चल बसते थे। 31 प्रतिशत बच्चे काल-कवलित हो जाते थे। पाठशालाओं में बच्चों की उपस्थिति बहुत कम होती थी। स्कूलों में विद्यार्थियों का एक तिहाई भाग सदा अनुपस्थित रहता था। बच्चे बीमारी से ठिगने हो जाते थे। रोगों का एक कारण था उचित भोजन का अभाव। श्रमिकों की सन्तानें कुपोषण की शिकार थीं। डॉ. बाल्फुर के प्रतिवेदन से उस समय की स्वास्थ्य-दशा का एक जीता-जागता चित्र सामने आ जाता है।

दूसरे विश्व महायुद्ध के पश्चात् मलेरिया पर काबू पाने की कोशिश की गई। इससे मृत्यु की दर में कमी हुई। आबादी तीव्रता से बढ़ने लगी। 1950 में गी फोरजेत ने कौंसिल में परिवार नियोजन का प्रस्ताव किया। परन्तु प्रस्ताव का विरोध किया गया। जिस रफ्तार से आबादी बढ़ रही थी, उसको देखते हुए सरकार को आने वाले वर्षों में प्रतिवर्ष 15000 नई नौकरियाँ पैदा करनी थीं। 2 अक्टूबर, 1951 को श्री आर. नाइक ने कुछ लोगों को एकत्र करके "मॉरीशस फामिली प्लानिंग एसोसियेशन" (Mauritius Family Planning Association) की स्थापना की। 1959 में, डॉक्टर तिलक ने कौंसिल में बहस की कि "फामिली प्लानिंग" के लिए एक बजट की व्यवस्था करनी होगी। केनिग ने परिवार नियोजन को ईसाई धर्म के विरुद्ध होने की दलील पेश करते हुए प्रस्ताव का विरोध किया। एक सप्ताह बाद खेर जगतसिंह ने कौंसिल को बताया कि मॉरीशस की बढ़ती हुई आबादी इस देश की सब से बड़ी समस्या है।

1960 के टिटमस (Titmus) और मीड (Mead) रिपोर्ट ने बताया कि जनसंख्या के नियन्त्रण पर शीघ्र ध्यान देना अत्यावश्यक है। मीड ने अपने प्रति-वेदन में यह भी बताया कि देश की आर्थिक हालत का सुधार आबादी के नियन्त्रण से ही हो सकता है। 1965 में सरकार ने "फामिली प्लानिंग एसोसियेशन" को अपना पूरा सहयोग देना आरम्भ किया। इस तरह परिवार नियोजन का काम आगे बढ़ता गया। 1972 में, सरकार ने परिवार नियोजन को स्वास्थ्य मन्त्रालय के कार्यक्रमों के अन्तर्गत सम्मिलित कर दिया।

ग्राम-विकास

भारतीय आप्रवासी शर्तबन्दी प्रथा की समाप्ति पर कोठियों से निकलकर

स्वच्छन्द जीवन बिताने के लिए गाँवों की ओर चल पड़े। ये गाँव बड़ी अविकसित दशा में थे। औपनिवेशिक सरकार ने कभी भी गाँवों के विकास की ओर ध्यान नहीं दिया था। सन् 1850 से शहरों की देख-रेख नगरपालिका की ओर से होने लगी। किन्तु गाँवों की उपेक्षा की गई। पाठशालाओं, दुकानों, डाकघरों, अस्पतालों, सड़कों तथा टेलीफोन और बिजली की सुविधाएँ केवल शहरों में ही उपलब्ध होती थीं।

ग्रामीण संगठित होकर गाँवों में अपने लिए बैठका, मंदिर, मदरसा आदि बना लेते थे जहाँ पूजा-पाठ, भारतीय भाषाओं की पढ़ाई तथा धार्मिक चर्चाएँ हुआ करती थीं। वे ग्राम पंचायत में इकट्ठे होकर अपनी स्थानीय समस्याओं का हल ढूँढ निकालते थे। बैठकाओं में हिन्दी पढ़ाई के साथ-साथ, सामाजिक जुटाव होते थे, उत्सव मनाये जाते थे। रामायण, गीता, सत्यनारायण की कथाएँ हुआ करती थीं तथा सत्यार्थप्रकाश और वेदों का अध्ययन-अध्यापन होता था।

ग्रामीण नेताओं को पता था कि सरकार तथा चीनी उद्योग के मालिकों द्वारा गाँवों का शोषण हो रहा था जिसके कारण गाँव पिछड़े हुए थे। उन गाँवों की बैठकाओं में भारतीय स्वतन्त्रता-संग्राम की कहानी पढ़ी और सुनी जाती थी। अतः ग्रामीणों में भारतीय राष्ट्रीयता के प्रति जागृति आई। हर हिन्दू घर में गांधी, नेहरू, बोस, भगतसिंह के चित्र पाये जाते थे। अपने स्थापना-काल से ही मजदूर दल ग्रामवासियों को राजनीति की ओर आकृष्ट करने लगा था। फलतः उनमें जागृति आई। ग्राम-विकास की ओर उनका ध्यान गया। "सुगर इन्डस्ट्री लेबर वेल्फेयर फन्ड" की स्थापना से गाँवों के विकास में सहयोग मिला।

गाँवों की सब से बड़ी समस्या बेरोजगारी थी। 1963 में मजदूर दल की सरकार ने बेकारी को दूर करने के लिए "रिलिफ वर्कर स्कीम" को शुरू किया। 1967 के आते-आते 30,000 "रिलिफ वर्कर" हो गये। सरकार ने एक नया कार्यक्रम शुरू किया—"सबके लिए काम"। "डिवलॉपमेंट वर्क्स कॉर्पोरेशन" (Development Works Corporation) की स्थापना की गई और इसके माध्यम से ग्राम विकास के कार्य शुरू किये गये। बेकारी दूर की गई। देहाती जमीन पर कृषि कार्य पर जोर दिया गया। सब्जियों की उपज और पशु-पालन पर विशेष ध्यान दिया गया। छोटे उत्पादकों को प्रोत्साहित करने के लिए गाँवों में बाजार बनवाये गये, अच्छी सड़कों का निर्माण किया गया, जमीन को उपजाऊ बनाने की व्यवस्था की गई, सामाजिक सुविधाओं, जैसे स्वास्थ्य, सफाई आदि की ओर ध्यान दिया गया। सारे कार्यक्रमों का उद्देश्य था : गाँव वालों को आत्मनिर्भर बनाना, उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार लाना तथा उन्हें प्रगति की ओर उन्मुख करना।

ग्रामीणों को खाद्य पदार्थों के उत्पादन के लिए 'वर्ल्ड बैंक' ने सहायता पहुँचाने में दिलचस्पी दिखाई। इस तरह का प्रोत्साहन पाकर गाँव वाले स्थायी काम-धन्धे में लग गये। उनकी आय में वृद्धि होने लगी। गाँवों का विकास तीव्रता से होने लगा। स्कूलों और कॉलिजों के खुल जाने से गाँव के लोग शिक्षित होने लगे। वे अपने मालिकों की भाषा बोलने लगे और कृषि-कार्य से हट कर व्यवसाय तथा सरकारी नौकरी में प्रवेश करन लगे।

इस तरह मॉरीशसीय समाज समानता की ओर बढ़ा। ग्रामवासी जनहितैषी राज्य की सारी सुविधाओं को उपलब्ध करके सुखी बनने लगे। आज गाँवों की सड़कों, पाठशालाओं, औषधालयों, बाजारों, दुकानों, यातायात के साधनों, डाकघरों, खेल के मैदानों, कल्याण केन्द्रों आदि को देखकर ग्राम और नगर में भेद करना कठिन हो गया है।

जनहितैषी राज्य

एक जनहितैषी राज्य के निर्माण का डॉ० रामगुलाम का विचार काफी पुराना था। जनहितैषी राज्य से उनका अभिप्राय एक ऐसी सरकार से था जो रोग, बुढ़ापे, बेरोजगार तथा अनाथ या विधवा बनने पर आने वाली गरीबी के कष्टों से सभी नागरिकों की रक्षा करे। यह राज्य सभी को विद्या-प्राप्ति की सुविधा प्रदान करता है, मुफ्त की शिक्षा देता है और साथ-साथ स्वास्थ्य को बेहतर बनाने तथा जरूरत-मन्द लोगों को मकान दिलाने की सुविधा देता है। इस प्रकार के जन-कल्याणकारी राज्य के निर्माण करने का संघर्ष डॉक्टर साहब आजीवन करते रहे। मरने वालों की संख्या में कमी, जनता के स्वास्थ्य में सुधार आदि के जरिये मजदूर दल की सरकार की आर्थिक और सामाजिक नीतियों में प्राप्त सफलता को आँका जा सकता है। भिखारी जो एक समय सड़कों पर घूमते हुए नजर आते थे, अब दिखाई ही नहीं देते। इसके साथ-साथ शिशु-जन्म-नियन्त्रण के क्षेत्र में भी सरकार को अद्वितीय सफलता मिली, हालाँकि विरोधी दल, गिरजाघर और अनुदारवादी प्रेस ने सरकार का सख्त विरोध किया। मजदूर दल की सरकार इसका भी दावा कर सकती है कि उसने गरीबी हटाई तथा खुशहाली पैदा की। इसका एक मजबूत प्रमाण है नेशनल पेंशन स्कीम (National Pension Scheme) की स्थापना, जो तीस वर्षों के संघर्ष का फल है।

जब डॉ० रामगुलाम कौंसिल में दाखिल हुए तब उन्होंने मौजूदा स्थिति का विरोध किया। सिविल सर्वेंट (सरकारी कर्मचारी) तथा शक्कर उद्योग में अच्छी तनख्वाह पाने वालों के लिए पेंशन तथा अन्य सुविधाएँ और विशेषाधिकार निश्चित

थे जब कि जिन्हें ये सामाजिक सुविधाएँ दरअसल मिलनी चाहिए थीं, उन्हें कुछ भी नहीं मिलता था।

उन दिनों देश सचमुच ही चैम्बर ऑव एग्रीकल्चर (Chamber of Agriculture) तथा मॉरीशस सुगर सिंडिकेट (Mauritius Sugar Syndicate) की तानाशाही का शिकार था। कौंसिल, जिसमें गोरों की सत्ता थी, सामाजिक सुविधाएँ लागू करने के पक्ष में नहीं था, क्योंकि गोरों को इस बात का भय था कि शक्कर उद्योग पर कहीं कर न लगा दिया जाय। जब मजदूर दल ने जोर लगाया तब इस दिशा में कुछ हो सका। अप्रैल, 1950 में मजदूर दल के अध्यक्ष रोजमों ने एक सामाजिक बीमा-योजना (Social Insurance Scheme) का प्रस्ताव रखा जिसके अनुसार अनेक सुविधाओं को उपलब्ध कराना था जैसे मुफ्त चिकित्सा, रुग्णावस्था में प्राप्त आर्थिक सहायता, गर्भावस्था में प्राप्त लाभ, बुढ़ापे की पेंशन, आदि। इस प्रस्ताव का अति शीघ्रता से सामने आने वाला फल था बुढ़ापे की पेंशन जो सितम्बर 1950 में लागू की गयी और जो "पब्लिक आसिस्टेंस (Public Assistance) द्वारा संचालित थी। 65 वर्ष से ऊपर के लोगों और अन्धों को, प्रति मास कम से कम 15 रुपये प्राप्त करने का प्रबन्ध हुआ। बुढ़ापे की पेंशन देने वाला प्रथम उपनिवेश मॉरीशस ही था। मजदूर दल ने इस देश की आबादी की सामाजिक स्थितियों में सुधार लाने का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले रखा था। पेंशन की व्यवस्था करके गरीबों की कुछ सहायता करने की कोशिश की गई।

1957 के सितम्बर मास में मन्त्रियों की एक समिति का गठन हुआ, जिसका काम था मॉरीशस में सामाजिक सुरक्षा पर ध्यान देना। कमिटि नें सिफारिश की, कि बीमारी की अवस्था तथा काम में घायल होने पर कामकरों को आर्थिक सहायता दी जाय। इसके बाद प्रोफेसर ट्टिमस ने सिफारिश की, कि सरकार को कर न चुकाने वाले तीन बच्चों वाले नागरिकों को 15 रुपये का मासिक पारिवारिक भत्ता दिया जाय। 1953 से, सामाजिक कल्याण सेवाओं के अन्तर्गत स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास, नौकरी की सुरक्षा, पारिवारिक भत्ते की देखरेख करने का उत्तरदायित्व आ गया।

मॉरीशस की आबादी में तीव्रता से वृद्धि होते रहने के कारण कल्याण-सेवाओं में बहुत रुपये खर्च होने लगे। 1974–75 में बुढ़ापे की पेंशन में साढ़े-पच्चीस मिलियन रुपये खर्च किये गये और 1976-77 में यह रकम बढ़कर साढ़े पैंसठ मिलियन रुपये हो गई। मजदूर सरकार ने 1976 में "नेशनल पेंशन एक्ट (National Pension Act) पारित करके नेशनल स्कीम (National Scheme) को चालू किया। अठारह वर्ष के ऊपर के सभी काम करने वालों को इस संस्था का

सदस्य बनने के लिए प्रेरित किया गया। 90 प्रतिशत कर्मचारी इस संस्था से सम्बद्ध हुए। इस तरह बुढ़ापे, वैधव्य और अनाथपन की पेंशन में भारी वृद्धि हो गई। मजदूर सरकार अपने जनहितैषी राज्य को सुदृढ़ बनाने में सतत प्रयत्नशील रही।

विदेश नीति

मॉरीशस अपनी विदेश नीति के कारण अपनी आर्थिक समस्याओं का हल आसानी से पा लेता है। उसे अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग मिलता रहा है जिसके फलस्वरूप वह गरीबी हटाने में सफल हुआ है। डॉक्टर रामगुलाम ने लन्दन प्रवास के समय अपने विद्यार्थी जीवन में ही ब्रिटिश राजनीतिक चातुर्य प्राप्त कर लिया था। उन्होंने उस राजनीतिक कौशल्य से अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध स्थापित करने का काम लिया। उन्होंने गांधी, नेहरु, लेनिन, माऊ, एटली, चर्चिल, दे गोल, नासेर, टिटो, विल्सन, इन्दिरा गांधी, एनक्रूमा, निएरेरे आदि प्रसिद्ध राजनीतिज्ञों से राजनीतिक पाठ पढ़े थे। इसलिए एक स्वस्थ विदेश-नीति को निर्धारित करने में उन्हें कोई कठिनाई नहीं हुई। विश्व के सभी देश मॉरीशस के मित्र रहे, एक भी शत्रु न था।

डॉक्टर रामगुलाम महाशक्तियों के किसी गुट में शामिल न हो कर गुटनिरपेक्ष रहे, जिससे मॉरीशस का हित हुआ। 1964 में संयुक्त राष्ट्र संघ के वार्षिक समारोह के उपलक्ष्य में जो भाषण प्रधान मन्त्री रामगुलाम देते रहे, वे बड़े चाव से सुने गए। दुनिया के विभिन्न स्थानों से सहयोग प्राप्त किया गया और मॉरीशस से सम्बन्ध जोड़ने तथा मित्रता बढ़ाने की उत्सुकता से जगह-जगह से विशेषज्ञ यहाँ आने लगे। मॉरीशस के सबसे अच्छे मित्र देश ब्रिटेन, फ्रांस और भारत हैं। मॉरीशस अनेक अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं का सदस्य बन गया है, जैसे ब्रिटिश कॉमनवेल्थ, अफ्रीकी एकता संगठन, संयुक्त राष्ट्र संघ, गुट निरपेक्ष आदि का।

डॉक्टर रामगुलाम की विदेश-नीति के कारण उनकी उपलब्धियां विशिष्ट रहीं। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में डॉक्टर साहब की प्रतिष्ठा प्रसिद्ध है। मॉरीशस का सौभाग्य रहा कि उसे योग्य मन्त्री मिले, जिन्होंने अपनी नीति से मॉरीशस को विश्व में विख्यात किया। आज संसार मानता है कि मॉरीशसवासी उद्यमी, परिश्रमी और शांतिप्रिय नागरिक हैं। उनके नेता राजनीति और देश के शासन-कार्य में कुशल हैं।

इस देश में जितनी भी प्रगति हुई है, उस पर डॉक्टर रामगुलाम के विचारों की छाप देखी जा सकती है। समाजवाद और प्रजातन्त्र के सिद्धान्तों में उनकी अटूट आस्था थी। वे समाजवादी और लोकतन्त्रात्मक शासन की स्थापना के लिए प्राण-

पण से जीवन भर काम करते रहे। उनके सामने विरोधी दलों के तूफान भी आये पर उन्हें उनकी विचारधारा से हटा न सके। प्रतिवर्ष नूतन वर्ष के अवसर पर, वे टेलीविजन द्वारा अपना सन्देश राष्ट्र के सम्मुख रखते थे। उनके संदेशों से उनकी विचारधाराओं का भली-भाँति परिचय मिलता है। प्रधान मन्त्री के रूप में उनका अन्तिम सन्देश पहली जनवरी, 1982 को मॉरीशस ब्रोडकास्टिंग कॉर्पोरेशन से टेली-विजन पर प्रसारित हुआ जो इस प्रकार था—

मेरे प्रिय देशवासियो।

सब से पहले, रोड्रीग, आगालेगा, सें-ब्रांडों और अन्य द्वीपों में रहने वाले हमारे देशवासियों को एक मंगलमय और समृद्धिशाली नये वर्ष की मैं शुभकामना करता हूँ।

स्वतन्त्रता के बाद से मैं नये वर्ष के अवसर पर नियमित रूप से सरकार के प्रमुख के रूप में आपको सम्बोधन करता रहा हूँ। इससे पिछले साल, हमारे देश के आर्थिक जीवन में घटी मुख्य घटनाओं पर एक नजर डालने का मुझे मौका मिलता है। सन् 1981 अनेक बातों में एक कठिन वर्ष प्रमाणित हुआ है, परन्तु सरकारी रास्ते के सभी आर्थिक बाधाओं और कठोर अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक स्थिति के बावजूद हमारी सारी संस्थाएँ और सेवाएँ स्वतन्त्रता तथा संविधान के मुताबिक सहज रूप से काम करती रही हैं। सरकार ने प्रजा के जीवन-स्तर बनाये रखने के लिए पूरा प्रयत्न किया है।

पहले की अपेक्षा इस साल, जो निश्चय हम लेंगे वही हमारे इतिहास का रूप बनेगा। आप सभी जानते हैं, कि हमारी संसद की अवधि समाप्त होने जा रही है और मैंने पिछले 17 दिसम्बर को राज्यपाल को सलाह दी कि इसे भंग कर दिया जाय। जैसा कि विधान है साठ दिनों के अन्दर ही में महामान्य गवर्नर जनरल से दूसरी संसद के लिए चुनाव लड़ने वाले सदस्यों का सूची पत्र निकालने को कहूँगा। आप के बीच बहुत से युवक और युवतियाँ पहली बार वोट करेंगे और परिणामतः हमारे प्यारे देश के निर्माण में एक अहम रोल अदा करेंगे।

मॉरीशस अभी अपने इतिहास के सबसे नाजुक मोड़ पर आ गया है। इसलिए मैं आरम्भ में ही आपको उस चुनाव की याद दिला देना चाहता हुँ, जो आपके सामने हैं। वोट, जो आप में से प्रत्येक व्यक्ति डालेगा, वह दो दलों के या दो संयुक्त दलों के बीच का चुनाव नहीं रहेगा, बल्कि सरकार की पूर्णरूपेण दो विभिन्न प्रणालियों के बीच का होगा।

आप लोगों में से अधिकांश इन दो तरह की सरकारों की विभिन्नता से परिचित नहीं हैं। इनकी भिन्नता इतनी बड़ी हैं कि है अपने सभी देशवासियों को उस चुनाव, जिसका सामना वे आगे करने वाले हैं, से अच्छी तरह अगाह कर देना चाहता हूँ।

गणतन्त्रात्मक राज्य भाषण देने की आजादी, धार्मिक और सामुदायिक आन्दोलन की स्वतन्त्रता प्रेस की स्वतन्त्रता, पूँजी लगाने और उद्योग खोलने की आजादी, सरकार की आलोचना कर एक वैकल्पिक सरकार चुनने की स्वतन्त्रता देता है। इसके विपरीत अधिकेंद्रित देशों में आन्दोलन करने और भाषण देने की आजादी नहीं है। सिर्फ एक ही प्रेस होता है, जो सरकार के लिए लिखता है। विरोधी दल चुप रहता है या रहता ही नहीं है। राज्य की देख-रेख में सारे आर्थिक कार्य-कलाप होते हैं।

वह दल राष्ट्र के राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक विकास के रूप निश्चित करता है। नागरिक राष्ट्र के जीवन में भाग लेने वाले गूँगे होते हैं। अपने भाग्य के बारे में निर्णय करने का उन्हें कोई अधिकार नहीं। सरकार के पास सारे अधिकार होते हैं। उसकी ज्यादतियों को देखने के लिए कोई विरोधी दल नहीं होता है और आम चुनाव को अनिश्चित काल के लिए स्थगित कर दिया जाता है। हमने लोकतन्त्रात्मक संस्थाओं को सुरक्षित रखा और जनता के लाभ के लिए उनका काम सुनिश्चित किया। पिछले पाँच वर्षों में हमारी प्रगति अधिक बहुचर्चित रहती, यदि सन् 1976 के आम चुनाव में हमें आवश्यक बहुमत प्राप्त होता। एक मिली-जुली सरकार बड़े-बड़े अवरोधों के बीच चलती है और दृढ़ और निश्चित निर्णय लेना कभी-कभार कठिन होता है। फिर भी, ऐसी अनेक महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ हैं, जिनके लिए सरकार उत्तरदायी है और जिन्हें जनता पसन्द करती है।

वास्तव मे हमने यह आश्वासन दिया है, कि सम्पूर्ण राजतन्त्र और लोकतन्त्र जन समूह के कल्याण के लिए चलाया गया है। पिछले चौदह वर्षों के दरमियान एशिया और अफ्रीका में सब से बड़ा कल्याणकारी राज्य का निर्माण किया है और आज इसके लाभ मॉरीशस के नागरिकों में दूर-दूर तक बाँटे जाते हैं।

मॉरीशस के मजदूर दल ने आपके लिए मुफ्त शिक्षा, मुफ्त स्वास्थ्य सेवाएँ, वृद्धों, विधवाओं और अनाथों को पेंशन, बच्चों को भत्ता, साठ साल होने पर प्रत्येक व्यक्ति के लिए एक विशाल पेंशन स्कीम का निर्माण किया है। इसने विरोधी दल के विरोध के बावजूद एक राष्ट्रीय विश्वविद्यालय की स्थापना की है। एक विश्वविद्यालय जो हमारे श्रेष्ठ नर-नारियों का घर सा बन गया है। इन सारे निष्पादनों

का हमारे राष्ट्रीय विकास पर प्रभाव पड़ा है। इस तरह मजदूर दल मॉरीशस के राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन का उत्तरदायी है और कोई इसे झुठला नहीं सकता। अब जब कि आम चुनाव आ रहा है, तो कभी-कभार मैं अपने आप से पूछता हूँ कि मॉरीशस की जनता कैसा दल चाहती है ?

एम. एम. एम. के जैसे साम्यवाद पर आधारित लेनिन का कट्टर अनुयायी, मार्कसीस्ट दल या मॉरीशस के मजदूर दल की तरह जो एक मिली-जुली अर्थव्यवस्था पर आधारित है और जिस में सामाजिक न्याय और लोकतन्त्र की कार्यवाही के लिए लोग स्वतन्त्र हैं।

उत्तर साफ है। मॉरीशस का मजदूर दल ही मॉरीशस के लोगों के लिए स्वतन्त्रता और स्थिरता लाया है। मजदूर दल ही ने आँक्चिल और रोजमों के नेतृत्व में लड़कर ट्रेड यूनियन की स्थापना की। मजदूर दल ने मताधिकार और इस देश के युवा लोगों को वोट करने के अधिकार पर आधारित एक लोकतन्त्रात्मक समाज की स्थापना की है। मजदूर दल ने हमारी मुख्य स्वाधीनताओं की प्रतिरक्षा के लिए लड़ कर हमें मुक्त प्रेस, स्वतन्त्र सभा लगाने का अधिकार और अन्य स्वतन्त्रताएँ प्रदान की हैं। मजदूर दल ने सारे आधारों को रख कर इस देश के औद्योगीकरण के लिए प्रोत्साहन दिया है। मजदूर दल ने मॉरीशस को अन्तर्राष्ट्रीय नक्शे में जगह दिलायी है। हम आज पूरब और पश्चिम, यूरोप, अमेरिका, एशिया, अफ्रीका और आॅस्ट्रेलिया के साथ व्यापार कर सकते हैं। और इस मजदूर दल ने यूरोपीय आर्थिक समुदाय अफ्रीका एकता संघ और गुट निरपेक्ष आंदोलन के साथ सबंध स्थापित किया है।

ग्रामों का विकास भी मजदूर दल की अमिट छाप पर प्रकाश डालता है। आज बीस वर्षों के अधिकांश युवक और युवतियाँ बीस वर्ष पहले के ग्राम-जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकते हैं। सन् साठ के वर्षों में घर अगोरों से आच्छादित थे। सड़कें उबड़-खाबड़ थीं। बिजली नहीं थी और समाज कल्याण की जरा सी सुख-सुविधाएँ थीं। आज हमारे गाँव में विद्यालय है पानी है, बिजली है, समाज-कल्याण केन्द्र हैं और तूफान का सामना करने योग्य घर हैं। यह प्रगति जादू से तो नहीं हुई। गरीबी का उन्मूलन कर जन-जीवन का स्तर उठाने के निमित्त मजदूर दल के अविराम यत्नों का यह फल है।

इसी तरह, मजदूर दल ने छोटे-बड़े सभी किसानों को, असल में, सारी प्रजा को यूरोपीय आर्थिक समुदाय के साथ 500 हजार टन चीनी का अभ्यर्श सुनिश्चित करने में कुछ भी बाकी नहीं छोड़ रखा था। यह अभ्यर्श अफ्रीकन, काराइबीयन और पासीफिक के देशों के बीच सब से बड़ा कोटा है।

इसी सिलसिले में, हम ने उत्तर प्रांत की सिंचाई परियोजना का सूत्रपात

किया । इसका उद्देश्य, उत्तर प्रांत के हजारों खेतिहरों के गन्ने की पैदावार को बढ़ाना, फसलों में भी विभिन्नता लाना और युवा लोगों के लिए अधिक नौकरियाँ पैदा करना है । इन सभी सफलताओं के लिए कितने वर्षों तक घोर प्रयत्न और संयोजन करना पड़ा और यह दल परीक्षा की घड़ी में खड़ा रहा । लोग इसे अच्छी तरह जानते हैं और वे कभी भी पुराने खूँखारों को किसी भी नाम के जरिये लोकतंत्र के पिछले दरवाजे से आकर इस देश में एक नयी टायरानी स्थापित करने नहीं देंगे । हमारी संस्थाओं का विकास कर जनता की समृद्धि के लिए राष्ट्र को मजदूर दल जैसे एक राष्ट्रीय दल की आवश्यकता है । आज मजदूर दल इतिहास की जान बन गया है और यह राष्ट्र अपनी सारी प्रगति और समृद्धि का श्रेय इस दल को ही देता है । हमें अपने समृद्ध इतिहास से आँखें नहीं मूँद लेनी चाहिए । इससे हमें अपने भविष्य के लिए प्रेरणा और मार्गदर्शन लेते रहना चाहिए । हमें उन सभी नयी सम्भावनाओं और स्वस्थ क्षितिजों का शोध करना चाहिए जो लोकतान्त्रिक सामाजिकता और मुक्त वाद-विवाद के लिए हानिकर बाह्य प्रभावों के अधीन नहीं है । आज हमारे कल्याणकारी राज्य के जरिये अधिकांश अकिंचन, जिनके लिए हम पिछले वर्ष संघर्ष करते रहे, सामंजस्यपूर्ण समाज में पुनर्वास कर रहे हैं । हमने अपने मार्ग में अनेक चुनौतियों का सामना किया है । और विशाल प्रगति की है । किसी भी प्रमाद में आकर हमें अपने इतिहास को भुलाकर सारी आजादियाँ और मुक्तियाँ, जो हमारी हैं, नष्ट नहीं कर देना चाहिए ।

इस बाजी में बहुत कुछ है और सामने जो कठिन काम है, उसके लिए हमें अच्छी तरह तैयार रहना चाहिए । हमें अपना भविष्य व्यक्ति की स्वतन्त्रता पर बनाना चाहिए न कि एक साम्यवादी के अन्याय पर, जिसे लोग अच्छी तरह जानते हैं । जन-समूह के लिए फिर से किसी तरह गरीबी नहीं लानी है । सामाजिक न्याय का संघर्ष कभी समाप्त नहीं होता है, कारण प्रतिदिन क्षितिज्ञ पर नया दृश्य बनता है । मजदूर दल को इस ऐतिहासिक व्रत को पूरा करना चाहिए और मुझे विश्वास है कि सन् 1982 इस दल को आरम्भ किये इस शुभ कार्य को जारी रखने का मौका देगा । हम सभी जानते हैं कि सभी के सुख के लिए पारस्परिक सहयोग से काम करने में अपना ही लाभ है । इस तरह के भवन पर ही भविष्य को खड़ा किया जा सकता है ।

वर्तमान कठिनाइयों के बावजूद, हमारे देश के आर्थिक विकास को बढ़ाने का हमारा सतत प्रयत्न है । आज का संसार दस साल पहले से अधिक उलझा हुआ है । मैं राष्ट्रीय समस्याओं का उल्लेख नहीं करना चाहता हूँ, कारण हम सभी इनसे परिचित हैं । मैं आप से सिर्फ इतना कहना चाहता हूँ कि आज कल सारी दुनियां और

विशेष कर विकासशील देश अतिरिक्त और दुस्तर आर्थिक स्थिति का सामना कर रहे हैं। विश्व-अर्थव्यवस्था पर बढ़ती पारस्परिक निर्भरता और आवश्यक पदार्थों के मूल्यों, विशेष कर तेल के मूल्यों की, तीसरी दुनिया के देशों पर प्रतिक्रियाओं ने हमारी सुनियोजित योजनाओं पर विनाशकारी रोल अदा किया है। साथ में, खराब मौसम और सूखा का, पिछले कुछ वर्षों में हमारी फसलों पर बुरा प्रभाव पड़ा है। इन विपरीत परिस्थितियों के कारण सरकार ने एक संरचनात्मक पुनर्व्यवस्था कार्यक्रम पर कदम रखा है। इसका उद्देश्य हमारी अर्थव्यवस्था को एक नयी समता देना है। यह जानना जरूरी है कि पुनर्व्यवस्था कार्यक्रम का अनुस्थापित विकास और नौकरी तथा आय में स्थायी और जीवनदायी वृद्धि प्राप्त करने का उद्देश्य है। निर्यात् की वस्तुओं की विभिन्नता और विस्तार और घरेलू पैदावार को बढ़ा कर पर्याप्त करने के लिए जोर दिया गया है। इस तरह आयात की चीजों पर हमारी निर्भरता घटेगी और साथ साथ ज्यादा नौकरी पैदा होगी।

इस संदर्भ में, हमारी कृषि और औद्योगिक पैदावार को बढ़ाने के लिए सरकार जरूरी आरम्भिक संरचना और उत्साह का प्रबन्ध कर रही है। उदाहरण के लिए लघु उद्योग विभाग में पूँजी लगाने का प्रोत्साहन दे रही है। नौकरी पैदा करने में, विशेषकर गांवों में लघु उद्योग विभाग का बड़ा हाथ है। एक्सपोर्ट क्रेडिट गरांटी स्कीम छोटे-बड़े सभी निर्यात करने वालों को निर्यात के प्रत्येक अवसर में लाभ उठाने की सहायता कर हौसला बढ़ा रही है। कृषि के संदर्भ में दक्षता प्राप्त करने और शीघ्र विकास को सुनिश्चित करने के उपायों पर बल दिया जा रहा है। कृषि की पैदावार में उत्कर्ष लाने के उपायों में कृषि विकास-सर्टिफिकेट और सिंचाई की सुविधाएं हैं। मुझे विश्वास है, कि ये सुविधाएं हमारी आर्थिक व्यवस्था को और अच्छा बनाने में, नौकरी पैदा करने में और विदेशी मुद्रा की बचत करने में मदद करेगी।

इस मोड़ पर, मैं हमारी विदेशी विश्वासनीयता पर जोर देना चाहता हूँ। हमें गर्व है कि विदेशों में मॉरीशस की बड़ी ख्याति है और मित्र देशों और अंतर्राष्ट्रीय संगठनों की सहायता से हम अपनी कठिनाइयों को दूर कर सकेंगे। इसीलिए सम्पूर्ण राष्ट्र के सुख के लिए ऐसा कुछ नहीं करना चाहिए कि विश्व में हमारी विश्वासनीयता संकट में पड़ जाय।

अच्छे या बुरे के लिए, आर्थिक और सामाजिक सुख से सुखी मॉरीशस की प्रजा बाकी दुनिया की राजनीतिक और आर्थिक सच्चाइयों से बँधी रहेंगी। सन् 1981 में ये सच्चाइयाँ कठोर रही हैं।

आज की दुनिया लगभग राजनीतिक और सैनिक साहसिकता में जी रही है। सब से अधिक कुख्यात वे उदाहरण, जिनसे हमने शिक्षा पायी है, सेशेल और पोलेण्ड की हाल की घटनाएँ हैं। हमारा पड़ोसी होने के कारण सेशेल हमारे लिए महत्वपूर्ण है। किराये के बन्दूकधारियों द्वारा सत्ता पर आक्रमण इस बात पर अच्छी तरह प्रकाश डालता है, कि सत्ता हथियाने की कुछ लोगों की रुचि किसी तरह समाप्त नहीं होगी। यहाँ उल्लेख कर देना उचित है कि प्रजा का सुख चाहने वाले शान्ति प्रिय राष्ट्र भी इस खतरनाक रूप से मुक्त नहीं हैं। हमें खुशी है, कि सेशेल में किसी तरह शान्ति फिर से स्थापित हो गई है।

पोलेण्ड की दुःखद घटनाएँ एक रोनी दृश्य प्रस्तुत करती हैं। अधिक लोग इसे जनता की मुक्त चाह और अधिकेंद्रित शासन के न झुकने वाले कठोर आरोप के झगड़े का अवश्यम्भावी फल मानते हैं। पोलेण्ड की शान्तिप्रिय प्रजा, एक समाजवादी गणराज्य पूर्णरूपेण सैन्य शासन में जी रही है, इसलिए कि उन्होंने अपने अधिकार का प्रयोग किया था। और ये अधिकार असाधारण नहीं थे। असल में वे अधिकार हैं जो, हम सभी आज पाये से लगते हैं। हमारा संविधान इन अधिकारों की गारंटी देता हैं। हमें स्वतन्त्रतापूर्वक विचारों को प्रकट करने और सभा लगाने आगे का अधिकार है।

पोलीश-परिणाम का एक दूसरा रूप भी है जिस पर सभी मॉरीशसवासियों की विशेष रुचि है, याने पोलेण्ड में झगड़े की जड़। पोलेण्ड की आर्थिक पद्धति काम नहीं करती, यही मुख्य समस्या है। तीस वर्ष से अधिक के साम्यवादी शासन के बाद पोलेण्ड की अर्थव्यवस्था टूट सी गयी है और पिछले दशक के दरमियान आर्थिक और सामाजिक सहायता के लिए पोलेण्ड को पाश्चात्य शक्तियों के पास जाना पड़ा है। इस पर इन मॉरीशनों को विशेष ध्यान देना चाहिए, जो दृढ़ता से कहते हैं कि राष्ट्रीयकरण और उद्योग का राज्य नियन्त्रण से हमारी आर्थिक समस्या का समाधान सुरक्षापूर्वक किया जा सकता है।

मैं सभी मॉरीशनों और मॉरीशसीय राजनैतिक दलों को आह्वान करता हूँ कि वे मजदूर दल के साथ मिलकर पोलेण्ड में मॉशियल लॉ की घोषणा की अवहेलना करें।

अभी-अभी खबर आयी कि घाना में राज्य उलाट दिया गया है। हम अपने भाग्य को धन्यवाद देते हैं कि हम एक शान्त और स्थिर लोकतन्त्र में जी रहे हैं।

जैसे कि, मैंने आपसे ही कहा है कि इन दिनों संसार बहुत उलझा हुआ है।

आर्थिक और सामाजिक कठिनाइयों के कारण स्थिति बदतर हो गयी है। मैंने उल्लेख किया है। प्रतिसंघर्ष के दिन बढ़ गये हैं। हमें अपनी समस्याओं का सामना करने के लिए दृढ़ता के साथ उठना चाहिए। सबसे नुकीली समस्या बेकारी की है। किसी तरह, इसका कोई सहज समाधान नहीं है जैसा कि अधिक शक्तिशाली और समृद्ध राष्ट्रों का विचार है। अन्तर्राष्ट्रीय पूँजी की प्रतियोगिता पहले की अपेक्षा अधिक जटिल हो गयी है। केवल स्तरीय प्रगति के साथ अनुशासनपूर्ण राष्ट्र ही पूँजी लगाने वालों को आकर्षित करने की आशा कर सकते हैं। इसीलिए हमें अपने देश को उपयोग का अच्छा स्थल साबित करने का पूरा प्रयत्न करना चाहिये। मुझे डर है, कि इस संदर्भ में विरोधी दल का कार्य ध्वंसकारी रहा है। दूसरी ओर सरकार ने इस देश में उद्योग के विकास के लिए जहाँ आवश्यक प्रारम्भिक आवश्यकताओं का प्रबन्ध किया है। वहीं राजनैतिक स्थिरता भी कायम की है। अब धीरे-धीरे एक उपभोक्ता समाज से संरक्षक समाज में बदलने के लिए इन सुविधाओं से लाभ उठाना हमारा काम है, ताकि हम एक बार फिर से औद्योगिक विस्तार और समृद्धि की अवधि में प्रवेश कर सकें।

मौजूदा सरकार अपनी योजना बनाते समय हमेशा भविष्य को सोचती है। यह कहते हमें प्रसन्नता हो रही है कि महानुभाव योजना पर चारों ओर से आलोचना होने के बावजूद समय ने साबित किया है कि हम ही ठीक थे। आप लोगों में से अधिकांश को याद होगा, कि जब हमने मॉरीशस विश्वविद्यालय, उत्तर प्रांत में अस्पताल, युगल परिवहण मार्ग, टी० वी० बल्क-सुगर टर्मीनल को आरम्भ किया तो हमारी परियोजनाएँ खर्चीली और देश के लिए अनावश्यक समझी गयीं। इसी तरह उत्तर का एयर-पोर्ट प्रोजेक्ट और देश के उत्तर को दक्षिण से जोड़ने वाली न्यू-ट्रंक-रोड और दूसरी महत्वपूर्ण परियोजनाएँ आज उसी तरह की आलोचना के विषय बनी हैं। लेकिन मेरे प्यारे देशवासियों, मैं आपको आश्वासन देता हूँ कि समय हमें एक बार फिर से ठीक साबित करेगा। वास्तव में हम सिर्फ सन् सत्तर या अस्सी के लिए ही नहीं बल्कि अगली शताब्दी के लिए भी योजना बना रहे हैं। एथानोल प्रोजेक्ट, टूर केनिक और शाँपाय प्रोजेक्ट, आटे का कारखाना और फलाक का पोलीटेकनिक, निस्सन्देह उन बहुत सी सफलताओं में होगा जिस पर हमारी सन्तानें नाज करेंगी। इसी तरह बढ़ती बेकारी की समस्या को बड़ी तादाद में घटाने का हम प्रयत्न कर रहे है। जैसे कि मैंने पहले ही कहा है कि हमारी लोकतन्त्र पद्धति की सारी व्यवस्था हमेशा बहुसंख्यक लोगों के लिए होती है। प्रेस को जो हमारी प्रशासन पद्धति के अच्छे कार्यों का निर्णायक है, इस देश में लोकतन्त्र की सुरक्षा के लिए महत्वपूर्ण रोल अदा करना है। यह हमारी आशा है कि प्रेस को एक युक्तिसंगत और जिम्मेदार प्रेस की तरह विषयों का नपा-तुला दृश्य प्रस्तुत करना

चाहिए। अवसर यथोचित समाचार को सुनिश्चित करने की अपेक्षा प्रेस संवेदनशील और काल्पनिक खबरों और राजनैतिक अव्यवस्थाओं, जो हमारे देश और हमारे लोकतन्त्रात्मक संस्थाओं को कलुषित करती हैं, का शिकार हो सकता है। मैं आपको विश्वास के साथ कहता हूँ कि एक अधिकेंद्रित देश में पहले प्रेस पर आपत्ति पड़ती है, फिर हमारे प्रिय लोकतन्त्रात्मक आदर्श पर। अन्त में, मेरे देशवासियों, मैं आप सभी से और इस देश में रह रही सभी शक्तियों से अपील करता हूँ कि हमें पहले की अपेक्षा अधिक सतर्क रहना चाहिए। जैसा कि आप सभी जानते हैं, कि बाह्य-शक्तियाँ हैं, जो अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए हमारी सुकुमार जातीयता का शोषण कर रही हैं! मैं आपको उन लोगों के प्रति सतर्क करता हूँ, जो हमारे सामाजिक और राजनैतिक परीक्षण को एक प्रयोगशाला मे बदल देना चाहते हैं। हम कभी अपने लोकतन्त्रात्मक सस्थाओं का, जो चार दशकों के कठिन संघर्ष का फल है, विनाश नहीं होने देंगे। हमारी स्वतन्त्रता को कभी भी इस से अधिक खतरा नहीं था।

यह सभी जानते हैं, कि मजदूर दल लोगों की यथार्थ स्वतन्त्रता और शान्ति का दल है। आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक उन्नति करना इसकी मानवी अभिरुचि है। इसलिए, जब समय आयेगा तो जनता को निर्वाचन क्षेत्र में पैरेड करते विभिन्न दलों के बीच ठीक से चुनाव करना चाहिये। यह चुनाव यथार्थ प्राप्तियों पर आधारित होना चाहिये न कि असंगत या काल्पनिक आदर्शों पर जिसकी वकालत एम० एम० एम० करता है। सारी आबादी को बड़ी जरूरतों और खूँखार गरीबी से बचाने वाले मजदूर दल के हाथ में अधिकार है। प्रजा स्वाधीनता और समता चाहती है। ये केवल एक कल्याणकारी राज्य में ही प्राप्त किया जा सकता है न कि भय, अव्यवस्था और बलात्कार की ओर ले जाने वाले समाज में जनता, जो आजादी और इन्सान की शान चाहती है, उसे परम्परागत मार्ग, जिसकी वकालत मजदूर दल करता है, का विकास करना चाहिये और यहाँ पर समाजवाद का संरक्षक मजदूर दल ही है।

ये कुछ घूमते विचार हैं, जो आते साल के लिए मेरे दिमाग में आ रहे हैं। लेकिन जैसा कि आप जानते हैं, मैं आप से उस मिली-जुली सरकार की बात कर रहा हूँ जो बड़ी कठिनाई और कमी के वक्त, सतर्कता, अनुशासन और अनुभव के साथ देश को चलाती रही है। हमने सबों के साथ काम किया है। आपके लिए भविष्य को बनाए रखा है। हमने सच्चे समाजवाद और आजादी के लिए काम किया है और एक नया देश बनाया है। हम उन बातों की तलाश में हैं, जो लोगों के बीच समानता को बढ़ाने में सहायक हों। हममें और हमारे वातावरण में विद्यमान संवेदनाओं और कमजोरियों से फायदा उठाकर अपना उल्लू सीधा करने वाले संकु-

चित विचार वाले लोगों को हमारी आँखों में धूल झोंकने नहीं देना चाहिए। हमारा दल लोगों के भविष्य के लिये अधिक वचनबद्ध है।

आज विज्ञान और टेकनोलोजी ने अज्ञात की खोज के अन्धेरे में आजकल टटोलते मनुष्य की सफलताओं में एक तीसरा विभाग जोड़कर हमारे सामाजिक राजनैतिक विकास के लिए सारे रास्ते खोल दिये हैं। हमें अपने वातावरण को बदल कर अपने जीवन बदलने के लिए साधन और अधिकार दिये गये हैं। हमारा उद्देश्य सारे नर-नारियों की स्थिति को बदलना है, ताकि वे हमारे समाज में अपने योग्य स्थान के लिए आश्वस्त रहें।

आपको आनन्दमय नूतन वर्ष अभिनन्दन और जय मॉरीशस।

सूचना तथा प्रसारण मन्त्रालय के सौजन्य से प्राप्त।

उपसंहार

मॉरीशस का कायाकल्प करने वाले स्वनामधन्य शिवसागर रामगुलाम जहाँ विरोधियों, बैरियों एवं आलोचकों की कटु आलोचनाओं के समय-समय पर शिकार होते रहे, वहाँ मनिषियों, महामनाओं, निष्पक्ष नेताओं, साहित्यकारों तथा पत्रकारों द्वारा सम्मानित भी होते रहे। 2 मार्च, 1964 को, शाँ दे मार्स में हो रहे कार्यक्रम के दौरान भारी जन-समूह के बीच मजदूर दल के प्रवर्तक, डॉक्टर मोरिस कीरे ने कहा था—"डॉक्टर रामगुलाम के पास अपार ज्ञान है, अच्छी समझ, उत्तम गुण और अच्छा खासा अनुभव है। हमारे देश का नेतृत्व करने के सबसे योग्य व्यक्ति वही हैं। वे सही जगह पर सही व्यक्ति हैं।"

मॉरीशस के महान फ्रांसीसी कवि, मालकोम दे शाजाल ने बड़ी बारीकी से शिवसागर के क्रिया-कलापों को देखा। वे उनकी कार्य-क्षमता, निरभिमानी स्वभाव और सबके प्रति प्रेम-भाव देखकर बड़े प्रभावित थे। उन्होंने अक्टूबर 1963 को एडवांस पत्र में लिखा—"डॉक्टर रामगुलाम के पास असीम ज्ञान है। सारी मॉरीशसीय प्रजा के लिए वे पिता तुल्य हैं। वे एक दोस्त, देश भक्त सीधे-सादे व्यक्ति हैं। चाहे उन्होने इतनी महानता अर्जित कर ली है, तो भी हमारे इतने करीब हैं। इस व्यक्ति में हमारा भविष्य सँवारने की शक्ति है। चलें, हम उनमें विश्वास रखें। जब तक हमें उन जैसा नेता प्राप्त हैं, हमें किसी बात का डर नहीं।"

सन् 1950 से, "ले सेरनेए" पत्र डॉक्टर रामगुलाम की खूब आलोचना करता आ रहा था। उन पर भारतीय मूल के लोगों के नेता होने का दोषारोपण

होता रहा । उनके व्यक्तित्व पर अनेक प्रहार किये गये । वे आक्रमणों के बवंडर में भी शान्त और स्थिर रहे ।

सन् 1951 में डॉक्टर शिवसागर, रोजमों और सीनीवासेन के नेतृत्व में मजदूर दल का पुनर्गठन हुआ था । किन्तु देश का दुर्भाग्य था कि रोजमों और सीनीवासेन जैसे सक्षम नेता की मृत्यु 1956 और 1958 में हो गई । उस समय एकमात्र हिन्दू नेता रामगुलाम ही रह गये जो गैर हिन्दुओं को बहुत अखरा । इसीलिए वे उन्हें हिन्दुओं का नेता कहकर लांछित करना चाहते थे । लेकिन डॉक्टर रामगुलाम मजदूर दल का कुशल नेतृत्व करते हुए अपने राजनीतिक अनुभव के बल पर देश में भारी परिवर्तन लाये । जनता ने समाजवाद और लोकतन्त्र पर आधारित उनके कार्यक्रमों का समर्थन किया । श्रमिक वर्ग के जीवन में सुधार हुआ । सड़कों, पाठशालाओं, मकानों, कल्याण केन्द्रों के निर्माण से मॉरीशस का रूप बदल गया । समस्त देशवासियों को शिक्षा, स्वास्थ्य, नौकरी, ट्रेड यूनियन, बुढ़ापे की पेंशन आदि की सुविधाएँ उपलब्ध कराई गई । कारखानों, बैंकों, आयात-निर्यात और व्यापारों को सम्भालने वाले शोषक वर्ग जब देश की आजादी के नाम से घबराने लगा तभी डॉक्टर मोरिस कीरे और मालकोम दे शाजाल ने कहा कि डॉक्टर रामगुलाम कुशल एवं अनुभवी नेता हैं । वे मॉरीशसवासियों के लिए पिता-तुल्य हैं, उन पर विश्वास किया जाय ।

प्रधानमन्त्री सर शिवसागर रामगुलाम में तनिक भी बदले की भावना नहीं थी । आजादी को रोकने के लिए शक्कर उद्योग के मालिकों ने पी. एम. एस. डी. दल पर अपार धन खर्च किया था तथा डॉक्टर रामगुलाम को बदनाम करने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी थी । जब देश को स्वतन्त्रा मिली और लम्बे अर्से तक डॉक्टर साहब के हाथों में सत्ता रही, तब उन्होंने वास्तव में सभी मॉरीशसवासियों की एक सच्चे पिता की भाँति समसृष्टि से सेवा की । उन्होंने कभी भी अपने अधिकारों का दुरुपयोग नहीं किया । हम डॉक्टर साहब के राजनीतिक विचारों पर गर्व कर सकते हैं । उनका नेतृत्व, उनकी नीति आदर्श रही । गरीबों के स्वप्न को साकार करने वाले, अन्याय, शोषण मिटाकर सामाजिक न्याय, स्वतन्त्रता, समानता और शान्ति स्थापित करने वाले शिवसागर को जनता प्यार से चाचा रामगुलाम पुकारने लगी । यद्यपि उन्हें जनता के एक वर्ग द्वारा कड़े विरोध का सामना करना पड़ता था तथापि वे जनता के दूसरे वर्ग द्वारा प्रतिदिन पुष्पमालाओं द्वारा सभाओं, जुटावों, विभिन्न कार्यक्रमों आदि में सम्मानित किये जाते थे । शिवसागर के विचारों ने इस धरती पर जड़ पकड़ ली । वे विचार मॉरीशसवासियों के जीने और सोचने के तरीके बन गए । अनेक क्षेत्रों में : समाज, राजनीति, शिक्षा, स्वास्थ्य, अर्थ आदि में उनके विचारों की छाप पड़ी । मजदूर दल की सरकार ने जो भी उपलब्धियाँ प्राप्त कीं,

उन्हीं के विचारों, कार्यक्रमों और नीतियों को अपनाने से सफलता पा सकी । मॉरीशस की बहुसंख्यक जनता ने बड़े सम्मानपूर्वक उन्हें राष्ट्रपिता कहा । इस महान् नेता का यश विश्व के विभिन्न देशों में भी फैला, प्रसिद्ध अफ्रीकी नेता, ख्याति प्राप्त लेखक और सेनेगाल के राष्ट्रपति लेओपोल सेदार सेंघोर ने शिवसागर को तीन रूपों में मॉरीशसवासियों का पिता माना है :—

1. मॉरीशस की स्वाधीनता के पिता ।
2. मॉरीशस के जनहितैषी राज्य के पिता और
3. मॉरीशस के राष्ट्रपिता ।

शिवसागर ने अपने विद्यार्थी जीवन में ही देश की गरीबी मिटाकर एक नये समाज के निर्माण करने का सपना देखा था । डॉक्टरी परीक्षा में उत्तीर्ण होते ही वे मॉरीशस राष्ट्र के नवनिर्माण के कार्यों में जुट गए । कुलीनतन्त्र के मुट्ठी-भर लोग मॉरीशस की सम्पत्ति के मालिक बन बैठे थे । इस देश के सभी सुखों के उपभोग का एकमात्र अधिकार उन्हीं को था । देश के श्रमिकों, मजदूरों, बीमारों, बूढ़ों और अभावग्रस्तों के भाग्य में कुछ न था । जिस तरह भूखे कुत्तों के सामने हड्डियाँ दी जाती हैं, वैसा ही व्यवहार इस देश के मजदूरों से किया जाता था ।

दो शताब्दियों से देश का शासन सम्भालने वाले उन सबल गोरों के हाथों से सत्ता ले लेना, आसान बात न थी । इसके लिए आत्मबल की आवश्यकता थी । महापुरुषों के महान् गुणों की जरूरत थी । इस देश के निर्माता बनने के लिए अपूर्व दूरदर्शिता अपेक्षित थी । डॉक्टर रामगुलाम ने आवश्यक गुणों का संचय करके एक कुशल कारीगर की भाँति अपनी कारीगरी दिखाई । उन्होंने घृणा, हिंसा, अधीरता, भय आदि को अपने से दूर रखा ! अपूर्व सूझ-बूझ, विस्तृत ज्ञान और सेवाभाव लेकर ही कार्यक्षेत्र में उतरे । उन्हें फेबियन सोसाइटी के सिद्धान्तों पर पूरा विश्वास था । अपनी योजनाओं को चरितार्थ करने में कभी भी जल्दबाजी नहीं करते थे । महात्मा गांधी की अहिंसा को विजय दिलाने वाला शस्त्र समझते थे तथा बापू जी की सेवा-भावना को जीवन का आदर्श । महात्मा गांधी के निधन पर डॉक्टर रामगुलाम ने 31 जनवरी, 1948 को ले सेरनेएँ-ले मोरिसियें-एडवांस पत्र पर अपनी जिस मनोभावना को प्रकट किया, उससे गांधी जी के जीवन और कार्य का स्पष्ट प्रभाव उनपर लक्षित होता है । उन्होंने उपर्युक्त पत्रों पर लिखा—

"यह दुखद समाचार हमसे विशेष सम्बन्ध रखता है और हमें इस बात की याद दिलायेगा कि पीड़ित लोगों के लिए अभी बहुत कुछ करना शेष है, अगर हमें उन आदर्शों को चरितार्थ करना है जिनके लिए महात्मा गांधी जीवित रहे, कष्ट झेले

अपनी जान गँवाई। सत्य और अहिंसा के ये महान पुजारी क्लेश और विषाद के समय हमारे एकमात्र सहारे रहे। ईसा तथा लेनिन और अब........गांधी। इस प्रकार दुनिया अपनी गति से आगे बढ़ती हुई, हमारे लिए वह सब कुछ छोड़ देती है जो उन महापुरुषों की विरासत और महान् जिम्मेदारियाँ होती हैं।"

डॉ० रामगुलाम की उपर्युक्त कथनी को हम उनकी करनी में देख सकते सकते हैं। जो कुछ उन्होंने दिवंगत बापू के लिए कहा, उन विचारों को कार्यों में परिणत करके दिखाया। वे गांधी के समान ही कर्मशील और स्वदेश के निर्माता बने। पचास साल पूर्व का गरीब और अनपढ़ मॉरीशस यदि आज अफ्रीका, एशिया और हिन्दमहासागर के बहुत से देशों की तुलना में उन्नत राज्य माना जाता है तो इसका श्रेय विशेषकर शिवसागर को जाता है। यह बात मान्य है कि उन्हें सुखदेव विष्णुदयाल, रजाक मोहम्मद तथा मजदूर सरकार के अनेक कर्मठ मंत्रियों का पूरा सहयोग प्राप्त हुआ। परन्तु स्वतन्त्रता-सग्राम के मुख्य सेनापति वही थे। मॉरीशस के सर्वांगीण विकास : सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, आर्थिक आदि क्षेत्रों में रामगुलाम की छाप अमिट है। सबके लिए विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय, स्वास्थ्य सुधार के लिए अस्पताल, औषधालय, गरीबों के लिए मकान और टापू भर में पानी और बिजली की व्यवस्था नये-नये उद्योग-धन्धे, होटल, बैंक, आधुनिक हवाई अड्डे, घर-घर रेडियो-टेलीविजन आदि उनकी मुख्य देन हैं। श्रमिकों को रुग्णावस्था एवं बुढ़ापे में प्राप्त होने वाली सुविधा तथा ग्रामों के और नगरों के विकास हो जाने से सुखी जीवन की प्राप्ति, शिवसागर के संघर्ष का ही फल है। सारी उपलब्धियाँ, उनके तीस वर्षों के कुशल नेतृत्व का ही परिणाम है।

शिवसागर के दिल में सभी भाषाओं, संस्कृतियों और धर्मों का समान रूप से आदर-भाव था। यही कारण है कि विरोधियों की मर्म भेदी आलोचनाएं सहकर भी उन्होंने भारतीय भाषाओं की शिक्षा सरकारी स्तर पर, स्कूलों और कॉलिजों में दिलवाई। सभी धर्मों के लिए एक दृष्टि से सरकारी अनुदान की व्यवस्था की। इससे उनकी सहज उदारता का परिचय मिलता है। उनका शान्त स्वभाव, उनका आत्मविश्वास, उनके व्यक्तित्व का बहुत बड़ा गुण था, जो प्रतिकूल परिस्थिति में भी उन्हें अडिग रखता था, अनेकों बार ऐसा भी हुआ कि विधान सभा में उनके पीछे पर्याप्त बहुमत न रहा और विरोधी दल को विश्वास हो गया कि सरकार टूटने ही वाली है, किन्तु उन्होंने दृढ़तापूर्वक समस्याओं का सामना करके अपनी कीर्ति-पताका झुकने न दी। उन्होंने सदा अपने को एक परिपक्व राजनीतिज्ञ के रूप में ही सिद्ध किया। वे इतने उदार थे कि कभी भी अपने विरोधियों पर कोई मुकदमा नहीं चलाया। हालांकि उनमें कितने ऐसे थे, जिन्होंने बड़े नीच तरीके से उनपर

दोषारोपण किये थे। उन्होंने बिना भेद भाव के सभी की सेवा में अपना जीवन न्यौछावर कर दिया था।

भारत को स्वाधीनता दिलाने वाले बापू सीने में हत्यारे की गोलियों से पुरस्कृत किये गये। इसी तरह पचास वर्षों की अनवरत सेवा के बदले में शिवसागर रामगुलाम को सन् 1982 के आम चुनाव में पराजय का कड़वा घूँट पीना पड़ा। विरोधी दल के देशव्यापी आन्दोलन ने जनता के विचारों को विषाक्त कर दिया। जनता के प्रधानमन्त्री रामगुलाम और उनकी सरकार के विरुद्ध बड़ा जहरीला निर्णय लिया। इस चुनाव ने रामगुलाम को साथियों सहित पूर्णतः धराशायी कर दिया। रामगुलाम की हार से कानों को विश्वास नहीं हो रहा था। हजारों की आँखों में आँसू छलक आये थे। इस परीक्षा की घड़ी में शिवसागर का धैर्य साकार हो उठा था। क्या इस दीर्घ सेवा का यही उपहार था? किन्तु पराजय का यह बादल नौ मास बाद ही छँट गया। नई सरकार टिक न सकी। उसमें रामगुलाम की दूरदर्शिता, अनुभव और जन-सेवा का नितान्त अभाव था। शिवसागर ने वर्तमान प्रधानमन्त्री, श्री अनिरुद्ध जगनाथ की सहायता की। देश को डूबने से बचा लिया गया। शिवसागर को रक्षक माना गया। वे मॉरीशस के महाराज्यपाल पद से विभूषित किये गये। उस पद पर जीवन की आखिरी साँस तक आसीन होकर देश के हित-चिंतन में निरत रहे। वह घड़ी भी आई जब दुनिया वालों ने सुना कि स्वतन्त्रता के एक दीवाने का धरा-धाम से महाप्रयाण हो गया। लाखों के प्यारे चाचा अब न रहे। मॉरीशस के निर्माता, गरीबों के त्राता, मानवता के पुजारी दिवंगत हो गए।

पार्थिव शरीर मिट गया चाचा रामगुलाम का। किन्तु मॉरीशस के चौरंगे में उनकी कीर्ति-काया अमर हो गई। यात्री, विदेशी, पर्यटक और दूसरे लाखों लोग आज भी उनसे प्लेजाँस के—"सर शिवसागर रामगुलाम इन्टरनेशल एअर पोर्ट" पर मिल सकते हैं। हजारों दर्शक अब भी "सर शिवसागर रामगुलाम बोटानिकल गार्डन" में उनसे मिल सकते हैं। पोर्टलुई के "शिवसागर रामगुलाम म्यूजियम" में उनके दर्शन किये जा सकते हैं। बीमार व्यक्ति "सर शिवसागर रामगुलाम नेशनल हस्पताल" में डॉक्टर रामगुलाम की सेवा अब भी ले सकते हैं। राही रामगुलाम स्ट्रीट से होकर आगे बढ़ें तो प्यारे प्रधानमन्त्री मीलों उनका स्वागत करते मिलेंगे। पुस्तक-प्रेमी पुस्तकों के पन्नों में चाचा रामगुलाम से खुलकर बात कर सकते हैं। हम कहाँ-कहाँ बताएँ। आजादी के प्रेमी उनके द्वारा स्वतन्त्रता के लिए किये गए संघर्ष को याद करके, उनका स्मरण कर बैठते हैं। बारह मार्च 1968 को मॉरीशस की स्वतन्त्रता मिलने पर प्रधान मन्त्री शिवसागर ने प्रेस कान्फरन्स देते हुए कहा था—"........

"हमने इस आजादी के लिए अनेकानेक सालों तक काम किया और मॉरीशस की जनता के लिए यह एक अति श्रमसाध्य संघर्ष रहा। आजादी के लिए अनेक सालों की इस दौड़-धूप के दौरान मैंने अनेक मित्र खो दिये जो मेरे साथ थे। आँकचिल साहब जो मजदूर दल के संस्थापक थे, श्री रोजमों जो ट्रेड यूनियन के गतिशील नेता थे, सीनीवासेन साहब, ये सब मुर्चिया तथा अनेक अन्य मित्रों की तरह अब हमारे साथ नहीं रहे। जिस आजादी के लिए उन्होंने इतना सहयोग किया, आज उसे देखने के लिए वे नहीं रहे।

आज मॉरीशस की जनता में इस आजादी के लिए उत्साह है। आप कहेंगे कि विपक्ष दल में कुछ लोगों ने आजादी का विरोध किया था, मैं इससे सहमत हूँ। यह जानी-मानी बात है, पर दुनिया में ऐसा कहीं नहीं; जहाँ सब लोग वास्तव में आजादी चाहते हों। जब एक देश में विदेशी सत्ताएँ होती हैं तब समाज में अनुजीवी और चाटुकार होते ही हैं। ये टुकड़ेखोर कभी नहीं चाहेंगे कि एक देश स्वतंत्र हो जाये और उसकी जनता अपने राष्ट्रीय अधिकारों को प्राप्त करे। यहाँ पर यही हुआ और यही हुआ दुनिया के अन्यान्य देशों में। जिन्होंने विदेशी सत्ताओं से लाभ उठाया, उन्हें प्रोत्साहित किया गया, ताकि इस शोषण-प्रणाली को जारी रखा जाए ये लोग स्वतंत्रता कभी नहीं चाहेंगे, क्योंकि वे पहले ही स्वतन्त्र हैं—अपने बैंकों से अपने विशेषाधिकारों से, अपने हाथों की सत्ता से, जिसका प्रयोग उन्होंने दो शताब्दियों से इस देश के जनसाधारण और श्रमिकों के खिलाफ किया।

स्वतंत्रता साधारण स्त्री-पुरुष तथा हर उन्नतिशील मनुष्य के लिए है जो यह देखना चाहता है कि स्वतन्त्रता अविभाज्य है, और अखिल विश्व में उस से स्वतंत्रता का साम्राज्य हो ताकि प्रगति तथा आर्थिक परिवर्तन लाने के लिए हम आपस में भाई-भाई की तरह काम कर सकें। उन्हें सन्तुष्ट करने वाला हर व्यक्ति और हर संस्था प्रगति कर सके और इस नई दुनिया में हो रहे तकनीकी आविष्कारों का लाभ ले सके।

आपने देखा कि हमारी स्वतंत्रता ने कितना प्रभाव जागृत किया। व्यक्ति-गत रूप से मेरे पास दुनिया भर से सन्देश आये हैं, सहकारिता तथा मित्रता में मॉरीशस पूर्व और पश्चिम की एक संतान है। ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री ने, "फ्रांस के" जनरल दे गोल ने, राष्ट्रपति जॉनसन, ने यू. एस. एस. आर. के राष्ट्रपति ने, चीन के उपराष्ट्रपति और प्रधान मंत्री ने अपना-अपना सन्देश हमारे पास भेजा है। अन्य देश जैसे भारत और मालटा से भी संदेश आये हैं। दरअसल उन सभी मित्रों से,

जिनसे हम मिले और जिनके साथ काम किया। आज वे हमारे साथ रहे। मॉरीशस की स्वतंत्रता से उनके हृदय आनन्द से ओत-प्रोत थे।

मेरे इस छोटे से देश तथा मॉरीशस की जनता के लिए यह एक बहुत बड़ा प्रोत्साहन है। खासकर यह तो बड़ी प्रेरणा का विषय है कि दुनिया के बड़े-बड़े देश तथा मॉरीशस के समान छोटे देश से भी मित्रता का नाता जोड़ना चाहते हैं। उनकी माँग यह है कि हम उनके साथ मिलकर काम करें जिससे हम न केवल उनके साथ अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर काम कर सकें, बल्कि अपने लोगों के लिए बेहतर आर्थिक स्थितियाँ पैदा कर सकें।

जैसा कि आप जानते ही हैं, मॉरीशस में अफ्रीकी, भारतीय, चीनी, ब्रिटिश और फ्रेंच मूल के लोग हैं। यहाँ पर पूरब और पश्चिम का मिलन होता है। सालों बाद उन्होंने इस देश में अपने दिलों और विचारों को निर्मल बनाकर विभिन्न संस्कृतियों का एक समन्वय सा कर दिया है।

मॉरीशस, कम से कम, एक त्रिभाषी देश है। इस प्रकार की जनता, अगर मिल-जुल कर एक हो जाती जैसा कि बहुत से लोग हैं ही, तो भविष्य में कोई भी कठिनाई नहीं रह जाती। इन्हीं लोगों ने चीन, भारत, ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस और अफ्रीका में बहुत कुछ उपलब्ध किया है जो दुनिया का गर्व बन गया है और यही लोग यहाँ पर अपनी अनेकता तथा एकता में मॉरीशस के लिए काफी कुछ हासिल कर सकते हैं। हम एक राष्ट्र का निर्माण कर रहे हैं और इस निरंतर प्रक्रिया के दौरान से यह कह पायेंगे कि हिन्द महासागर के इस छोटे से टापू में हालाँकि भिन्न-भिन्न लोग आकर बसे हैं, हम एक साथ जी सकते हैं।

शायद आप हमारी आर्थिक स्थितियों के बारे में जानना चाहेंगे। कुछ लोग ऐसा कहते आये हैं कि एक स्वतंत्र राष्ट्र होने के लिए मॉरीशस बहुत छोटा है मॉरीशस आर्थिक तौर पर टिक नहीं सकता, इतनी सारी कठिनाइयों के समक्ष मॉरीशस स्वतंत्रता को बर्दाश्त नहीं कर पायेगा। आगे कुछ कहने से पहले आपको यह बताना चाहूँगा कि मॉरीशस अच्छी तरह से जीवित रह सकता है। बजट के सम-तुलन के लिए उसे कभी कोई दान प्राप्त नहीं हुआ है। इस प्रकार की सहायता हमें इस साल पहली बार के लिए ब्रिटिश सरकार से मिली है। कॉलोनियल डिवलोपमेंट एण्ड वेल्फेर एक्ट (Colonial Development and Welfare Act) से जाना जाता है, हमें वाकैई मदद मिली है, जैसा कि अन्य स्वतंत्र देशों को मिलती है। इस मदद का प्रयोजन है देश को प्रगति के पथ पर अग्रसर कराना। एक शताब्दी से ज्यादा ही समय बीत गया जब से इस देश में पार्लमेंटरी संस्थाएँ हैं और यहाँ के लोग

अपने देश को खुद चलाते हैं। न्यायालयों की व्यवस्था, स्वास्थ्य विभाग की गतिविधियों तथा कालेजों का प्रबन्ध, सब हमारे अपने ही लोग करते हैं। सिविल सर्विस में छोटे से लेकर सबसे ऊँचे पदों को सम्भालने वाले सब मॉरीशन हैं। हाँ, इतनी सी बात अवश्य है कि कुछ "विदेशी" लोग हमें सहायता पहुँचाने के लिए यहाँ रह रहे हैं, क्योंकि एक प्रकार से वे मॉरीशसीय जीवन के ही अंग हैं।

अत: मैं सोचता हूँ कि अगर हम सब मिलकर प्रयत्न करें तो किसी भी समस्या का हल आसानी से किया जा सकता है। हम अपने लोगों के लिए एक जनहितैषी राज्य का निर्माण कर रहे हैं जो औपनिवेशिक शासन को ज्यादा अच्छा नहीं लगा। वास्तव में यूरोप के कुछ लोगों का यह विचार है कि मॉरीशस और सम्भवत: अफ्रीका जैसे देशों की जनता कल्याणकारी राज्य के लिए योग्य नहीं हैं। लेकिन हम समाजवादी सरकार की हैसियत से सोचते हैं कि हमारे लोगों को वह सब कुछ हासिल करने का अधिकार होना चाहिए जो वे अपने खुद के प्रयत्नों से प्राप्त नहीं कर सकते अत: हमने बुढ़ापे की पेंशन मुफ्त प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक स्कूलों में अति न्यून शुल्क लेना आदि सुविधाओं के साथ हमने जनहितैषी राज्य का निर्माण किया। पिछले साल से विश्वविद्यालय भी खुल गया है। हमारे स्वास्थ्य विभाग में विशेषज्ञ डॉक्टर हैं। सबसे गरीब व्यक्ति के लिए भी एक्स-रे के साधन और उपकरण आदि उपलब्ध हैं।

दरअसल बहुत से लोग अल्पमत की बात करते हैं। ठीक, कौन सा वह देश है जहाँ अल्पमत वाले नहीं हैं, मुझे नहीं मालूम कि इस देश में अल्पमत कौन है। जब हम एक नीति सूत्रबद्ध करते हैं तो मॉरीशस की सम्पूर्ण जनता के लिए करते हैं। मेरे ख्याल से कोई नहीं कह सकता कि इन सालों के दौरान सरकार की तरफ से भेद भाव अथवा पक्षपात का व्यवहार हुआ है। 1948 से पॉर्लमेंट में हमारा बहुमत है और समूह अथवा दल के नाम पर हमने पार्लमेंट में ऐसा कुछ नहीं किया है। अलबत्ता ऐसा हुआ कि 1948 में, जब बहुमत से जीते तब तत्कालीन राज्यपाल ने उस समय की धारा परिषद् में अनेक लोगों को मनोनीत करके हमें अल्पमत में ठहरा दिया। अगले चुनावों में भी हम बहुमत से जीते। उस समय नामजदगी हालाँकि कुछ कम ही थी, फिर भी हमें एक निर्बल बहुमत में ही ठहराया गया। लेकिन 1948 से हमारा दल इस देश में बहुमत प्राप्त करता रहा है। संसदीय प्रजातन्त्र का बीस साल तक कार्यरत रहने पर हमने अपनी आजादी को हासिल किया।

लेकिन वास्तव में तीसरे दशक से संघर्ष गम्भीर रूप से चलता रहा। इसका मतलब यह नहीं कि हम मॉरीशस में अपने ब्रिटिश मित्रों अथवा अन्य किसी जाति

को देखना नहीं चाहते हैं। ब्रिटिश एक महान् जाति है जिसने दुनिया को बताया कि प्रजातंत्र से काम चल सकता है। दरअसल हम ग्रेट ब्रिटेन को प्रजातंत्र के महानतम गढ़ के रूप में देखते हैं। यही वह देश है जिसने रूस, चीन और सयुक्त राष्ट्र जैसे महान् देशों के सहयोग से जर्मन तानाशाही का सामना किया और शेष दुनिया में स्वतंत्रता लाया। अतः हमें ग्रेट ब्रिटेन के खिलाफ कुछ नहीं कहना है।

हम यही चाहते हैं कि मिलजुल कर आपस में सहयोग करते हुए साथ काम करें, मालिक-नौकर के आधार पर नहीं। मॉरीशस की जनता का यही उद्देश्य रहा है और मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि स्वतंत्रता के आ जाने से हम उत्साह तथा मित्रवत् भाव के वातावरण में काम करेंगे, ताकि मॉरीशस और ब्रिटेन के बीच जो सम्बन्ध पहले से था, वह और ज्यादा सुदृढ़ हो जाये। यह आजादी हमें बड़े देशों के साथ काम करने का ज्यादा अच्छा मौका प्रदान कर सकती है, जैसे फ्रांस, भारत, पाकिस्तान और चीन जहाँ से हम में से अधिकतर लोग आये हैं तथा अफ्रीका के लोगों के साथ। हम यह करने की कोशिश करेंगे और जिन देशों का अभी मैंने नाम लिया, उनके साथ सहकारिता के जरिये हम यथासम्भव आगे बढ़ सकेंगे। हर देश की आर्थिक समस्याएँ तो हैं ही। आज कोई भी देश ऐसा नहीं जिसकी आर्थिक समस्याएँ नहीं हैं, लेकिन मॉरीशस के लोगों को कठोर परिश्रम करने का सबक लेना चाहिए। कोई भी ऐसा न सोचे कि वह उस भण्डार से कुछ निकाल सकता है, जिसमें उसने कभी कुछ रखा नहीं। वह उससे उतना ही निकाल सकता है जितना उसने दिया है, ज्यादा नहीं।

हम व्यक्तिगत तथा मिले-जुले प्रयत्नों को प्रोत्साहित करना चाहेंगे। हम ये सब साकार करना चाहेंगे ताकि हमारा देश पहले से बेहतर हो।

स्वतन्त्र मॉरीशस में बसने वाले नागरिक उस भाषण को पढ़कर शिवसागर को याद कर जाते हैं जो उन्होंने स्वतन्त्रता दिवस के दूसरे दिन अर्थात् 13 मार्च, 1968 को धारा सभा में दिया था। प्रधानमंत्री रामगुलाम बोले थे—"....

मेरे लिए यह बड़े गर्व का विषय है कि आज मैं संवैधानिक औजार प्राप्त करने का सौभाग्य पाया जो हमारी स्वतंत्रता का प्रतीक तथा एक राष्ट्र के जन्म-सिद्ध अधिकार की पहचान है।

ढाई शताब्दियों के औपनिवेशिक शासन के बाद, कल हम अपनी विरासत के भागीदार बने और अपने हाथों से अपने भाग्य का निर्माण करने का हमें अधिकार प्राप्त हुआ। हमने एक कष्टप्रद राह को तय कर लिया। कई सालों के दारुण दुख और संघर्ष के बाद ही दुनिया के प्रजातन्त्रात्मक देशों में अपना सही स्थान ग्रहण करने के लिए यह राष्ट्र जन्म ले रहा है।

यह वह समय है जब इतिहास तैयार हो रहा है। इस टापू के बहुरंगी इतिहास में साधारण स्त्री और पुरुषों ने कभी भी अपने भाग्य में विश्वास नहीं खोया और आज हम उनकी आशाओं और चाहों की पूर्ति के दर्शन कर रहे हैं।

महारानी एलिजाबेथ ने ब्रिटिश सरकार के प्रतिनिधि अँथोनी ग्रीनवुड साहब से कृपा भाव के साथ यह माँग की कि वे संवैधानिक औजार मेरे हाथ में सौंप दें। जब ग्रीनवुड साहब से मुझे यह प्राप्त हुआ तब मैं भाव-विभोर हो गया। मुझे ऐसा लगा कि उन हजारों मजदूरों, कारीगरों, समाज सेवकों और राजनीतिक नेताओं के हाथों से मेरा हाथ मिल गया, जिन्होंने इस देश की मुक्ति के लिए त्याग किये और कष्ट झेले। स्वतंत्रता के संघर्ष की पराकाष्ठा हमारे लिए तथा उनके लिए भी अविस्मरणीय दिन है। इस देश ने भाग्य का सामना करने के अपने प्रण को रखा है।

धारा परिषद् का भवन नया है, लेकिन उसका निर्माण एक ऐतिहासिक जगह पर हुआ है। इसी स्थान पर महान् फ्रांसीसी माहे दे लाबूर्दोने ने 'इल दे फ्राँस' अर्थात् वर्तमान मॉरीशस, हमारी मातृ भूमि की नींव रखी थी। यह भी तो है कि यहाँ पर नये मॉरीशस ने जन्म लिया।

हमने प्रजातंत्रीय तरीके के जीवन को पसंद किया। हम सुव्यवस्था, न्याय और कानून के मार्ग को अपनायेंगे, क्योंकि इन्हीं पर प्रत्येक जाति की मूलभूल स्वतन्त्रताएँ निर्भर रहती हैं।

काफी कुछ किया गया ताकि मॉरीशस जीवित रहें और मैं यह कहना चाहूँगा कि यह देश जीवित रहने में पूर्णतया समर्थ है। एशिया और अफ्रीका से आई हुई मानव सम्पत्ति जो अब यहाँ के नागरिक के रूप में प्रतिष्ठित हैं, इस राष्ट्र में भविष्य का सामना आशा और विश्वास के साथ कर सकते हैं। हम एक ऐसी जाति हैं जो एक सामान्य उद्देश्य के लिए संगठित हैं, एक ऐसे समाज की स्थापना करना है जिसमें समानता हो और जिसमें गरीबी, अज्ञान और अभाव अतीत की बातें रह जायें।

इस ऐतिहासिक दिन में हम अपने देशवासियों की सेवा-हेतु तथा मॉरीशस की इज्जत और गौरव को कायम रखने के लिए अपने को न्यौछावर करते हैं।

प्रजातन्त्र में आस्था रखने वाले देशवासी जब डॉक्टर रामगुलाम के उस भाषण को पुनः सुनते हैं, जो उन्होंने 1972 में स्वतन्त्रता दिवस के अवसर पर मॉरीशस के टलीविजन पर दिया था, तब शिवसागर सामने बैठे, बोलते हुए दिखाई पड़ते हैं। उस भाषण में उन्होंने कहा था—"........

एक प्रजातंत्र में सत्ता जनता की निधि होती है, न कि किसी सामाजिक संस्था अथवा समूह की। यह अधिक स्पष्ट है कि एक स्वतंत्र समाज अल्पमत को सत्ता जब्त करने का अधिकार नहीं देता। जनता के अविभाज्य अधिकारों को इस प्रकार के आक्रमणों से बचाना होगा। इस कार्य को करना सरकार का संकल्प है और बगैर भय या पक्षपात का।

हमको अपने सामाजिक और राजनीतिक उद्देश्यों के प्रति सच्चा होना चाहिए। जनता द्वारा शासन। चलें हम अपनी वर्षगाँठ को अपने राष्ट्रीय मूल्यों में अपनी श्रद्धा को दृढ़ करने का एक मौका बना लें।

हमारे सतत संघर्ष का मुख्य उद्देश्य है एक ऐसे समाज का निर्माण जिसमें सभी के लिए समानता हो। हमारे आर्थिक उद्देश्यों को हमारी विकास-योजना में अच्छी तरह से प्रस्तुत कर दिया गया है अर्थात् उचित रूप से विभिन्नता लाकर उसके जरिये उपज व वृद्धि को प्रोत्साहन देना तथा गतिहीनता को रोकना, रोजगार पैदा करने के लिए राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था पर पुनः विचार करना और सच्ची प्रेरणा को जागृत करना जो राष्ट्र की भौतिक एवं नैतिक प्रगति के लिए फायदेमन्द सिद्ध हो।

मुख्य रूप से हम अपने लोकतान्त्रिक संविधान के अनुरूप शान्तिपूर्ण तरीकों के जरिये एक नई सामाजिक व्यवस्था के निर्माण में लगे हुए हैं।

विकास की तरफ बढ़ती दुनिया पर दृष्टिपात करते हुए हम गर्व के साथ कह सकते हैं कि मॉरीशस धीरे-धीरे लेकिन निश्चित रूप से अपनी प्रजातान्त्रिक संस्थाओं को सशक्त बना रहा है और उन मुख्य राष्ट्रीय नीतियों को कार्यान्वित कर रहा है, जिनका लक्ष्य है किसी भी प्रकार के सामाजिक अन्याय और विभेद को हटाना। प्रत्येक मॉरीशसवासी को अपने परिश्रम का प्रतिफल मिलना चाहिए।

यह हर क्षेत्र में दिखाई दे रहा है। मॉरीशस में धीरे-धीरे बहुत सारे परिवर्तन हो रहे हैं। विभिन्न योजनाओं के अनुसार जिनमें छात्रवृत्तियाँ भी हैं, आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए बच्चों की सहायता, देहाती इलाकों में शिक्षा, सुविधाओं का विस्तार, जमीनहीन परिवारों को जमीन का वितरण, अधिक संख्या में रोजगार पैदा करना आदि आदि।

स्वतन्त्रता के बाद बड़े कृषकों तथा छोटे किसानों, दोनों को सुरक्षा और स्वाभिमान आदि की सुविधाएँ प्राप्त हैं। मॉरीशसीय समाज के अन्य वर्गों के वे बराबर के भागीदार हैं। वे इस समाज को कठोर परिश्रम करने वाले तथा एक दूसरे से जुड़े हुए नागरिकों के एक आदर्श परिवार के निर्माण में लगे हुए हैं, जो अपने अधिकारों से अवगत हैं और उन लोगों के शिकार कदापि नहीं बनेंगे जो अपने लाभ के लिए उनका इस्तेमाल औजार की तरह करना चाहते हैं।

आज समय की माँग है कि हमारी राष्ट्रीय एकता की रक्षा हो ताकि मॉरीशस को शक्तिशाली बनाकर इसमें शान्ति लाने के महत्वपूर्ण कार्य को पूर्ण रूप एवं सजीवता के साथ किया जा सके।

मार्ग दर्शकों क त्याग तथा पूर्ण आजादी के संघर्ष मॉरीशन जाति को एक वेहतर मॉरीशस के निर्माण में पूरी तरह से उत्साहित करते रहेंगे।

जो लोग महसूस करते हैं कि अपने देश की स्वतन्त्रता को बनाये रखने के लिए संघर्ष को सतत जारी रखना चाहिए, तो उन्हें डॉक्टर रामगुलाम के विचारों से प्रेरणा लेने के लिए उस भाषण को फिर से सुनना चाहिए जो डॉक्टर साहब ने स्वतन्त्रता दिवस पर सन् 1981 में दिया था। वह भाषण आपको पुनः सुनाते हैं–"

आज के इस विशेष अवसर पर, मैं आपको याद दिलाना चाहूँगा कि हमारी

स्वतन्त्रता कभी भी ज्यादा बड़े खतरे का शिकार नहीं रही। स्वतंत्रता की लड़ाई एक अनन्त संघर्ष है जिसकी जीत आखिरी कभी नहीं होती और जिसकी हार स्थायी हो सकती है। अत: प्रत्येक पीढ़ी को चौकन्ना रहना चाहिए और अपनी बपौती की रक्षा करनी चाहिए, क्योंकि दुर्भावना" जुल्म और दबाव के पुराने तरीकों की जगह नये साधनों को काम में लाने को निरंतर प्रयत्नशील रहती है। इस कारण अगर हमें अपनी स्वतत्रता को बचाये रखना है, तो हो सकता है कि हर वह लड़ाई नये सिरे से आरम्भ करनी होगी, जो लड़ी गयी हो।

सोमरसेट मोघाम (Somerset Mogham) का कहना है : "अगर कोई जाति स्वतन्त्रता से अधिक किसी और चीज को महत्व देती है तो वह अपनी स्वतंत्रता को खो देगी और मजे की बात तो यह है कि अगर वह आराम या पैसे को अधिक महत्व देती है तो उसे भी खो देगी।" इस देश में हर कार्य क्षेत्र में पूर्ण स्वतंत्रता का बर्ताव किया जाता है–राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और सामाजिक कोई भी प्रौढ़ नागरिक बगैर किसी रुकावट के किसी भी प्रकार की व्यापारिक या औद्योगिक क्रिया में भाग ले सकता है। इसी प्रकार वह विदेश में सफर कर सकता है। अखबार निकालना शुरू कर सकता है, आम जुटावों में बोल सकता है या सरकार पर दोषारोपण कर सकता है। इस स्वतन्त्रता को सम्पूर्ण जनता काम में लाती है और यह हमारी जीवन-शैली का एक अंश बन गई है।

मैंने विरोधी दल के विकल्प की सतर्कता से जाँच की है और उसके घोषणा-पत्र पर गौर करने के उपरान्त मैं अपने देश के भविष्य को लेकर आशंकाओं से भर गया हूँ। आर्थिक गतिविधि के राष्ट्रीयकरण का समर्थन करके वह आज की समस्याओं के लिए पिछले दशक के हल प्रस्तुत कर रहा है। व्यक्तिगत सम्पत्ति की प्रथा को मिटाने का जहाँ तक सवाल है वहाँ उसके कार्यक्रम को इस तरफ का प्रथम कदम ही कहा जा सकता है। इससे होगा यह कि प्रत्येक मॉरीशसवासी अपने ही घर में अतिथि बन जायेगा। अपने ही देश में अपहृत व्यक्ति।

हर देश, जहाँ नमूने के तौर पर एम एम. एम. जैसा दल प्रस्तुत होता है, वहाँ लोगों की स्वतन्त्रता को कुचल दिया जाता है। प्रेस को शान्त कर दिया जाता है। आलोचना नहीं की जा सकती, चुनाव स्थगित कर दिये जाते हैं तथा आर्थिक गतिविधि को दबा दिया जाता है। सबसे बुरा तो यह हुआ कि मंत्रियों की एक गुप्त सभा ने जनता के स्वतंत्रतापूर्वक निर्वाचित प्रतिनिधियों की जगह ले ली और माता-पिताओं का अपने बच्चों की शिक्षा पर कोई नियन्त्रण न रहा। क्या मॉरीशस में हम यही चाहते हैं ?

अब तक एम. एम. एम. पार्टी के क्या कार्य हुए हैं, इस पर विचार करें। उसका कार्य कुप्रदर्शन का एक खराब रेकॉर्ड (इतिहास) है। असफल एवं अनुचित भूख हडतालें, जहाज गोदामों यातायात, ई. पी. जेड़ (E. P. Z.) और कृषि आदि

में उनके अनुचित कदम रखने से विदेशों में हम कलंकित हो गये हैं और इससे हमारा दिवाला निकला ही समझना चाहिए। उद्योग के क्षेत्र में अनेकों स्त्री-पुरुषों को कुछ समय के लिए नौकरी से अलग होना पड़ा। इस प्रकार एम. एम. एम. ने विपदाओं की एक झड़ी सी लगा दी।

अच्छा होता कि प्रेस विषाद और निराशा फैलाने का साधन न बनकर हमारी प्रगति और उपलब्धियों तथा सुविधाओं आदि पर अधिक ध्यान देता। मैं इस बात से अवगत हूँ कि सरकार पर कीचड़ उछालना स्वतन्त्र प्रेस का एक प्रचलित मनबहलाव है। पर सरकार को विधि अनुसार कलंकित करके हमारे अखबार पूर्णाधिकार वाली एकदलीय हुकूमत लाने में मदद कर रही हैं। इसका प्रथम शिकार वे खुद बन सकते हैं। अतः मैं उन्हें यह राय दूँगा कि वे जरा सावधानी और दूरदर्शितापूर्वक अपनी आलोचना करने की वृत्ति का विरोध करें। अगर वे राष्ट्रीय विकास को गति प्रदान करते और एक बेहतर भविष्य के निर्माण में जनता को ज्यादा प्रयत्नशील करने की कोशिश करते तो देश और जाति के ऊपर ज्यादा बड़ा उपकार करते।

अन्ततः हम यही कहेंगे कि हमारे देश का भाग्य हमारे ही हाथों में है। यह वैसा ही होगा जैसा हम इसे बनाना चाहेंगे। हम जीवन अथवा सांसारिक परिस्थिति को दोषी न ठहरायें। उल्टा दोष लगाने की जो हमारी वृत्ति है, उसका अन्त कर देना चाहिए। आज आन्तरिक एवं बाह्य शक्तियाँ राष्ट्रीय एकीकरण की रीति को ललकार रही हैं। हमारे लोगों को यह समझना चाहिए कि जो विवादास्पद विषय है वह धर्म या जाति नहीं है, बल्कि स्वतंत्रता और सामाजिक न्याय। दरअसल हमें अपनी प्रजातान्त्रिक प्रणाली को जन समूह के हित के लिए सामाजिक और आर्थिक विकास की ओर क्रियाशील कर देना चाहिए। बस इसी के जरिये जीवन में सुधार लाये जा सकेंगे।

चाचा रामगुलाम उस समय तक अमर रहेंगे, जब तक मॉरीशस की धरती रहेगी, जब तक "सर शिवसागर रामगुलाम इन्टरनेशनल एअरपोर्ट" पर यात्री आते-जाते रहेंगे, जब तक "सर शिवसागर रामगुलाम बोटानिकल गार्डन" में दर्शनार्थी आते रहेंगे, जब तक शिवसागर रामगुलाम म्यूजियम का दरवाजा सबके लिए खुला रहेगा, जब तक पुस्तकों के पन्नों से पाठक उनकी जीवनियाँ पढ़ते रहेंगे और जब तक पथिक रामगुलाम स्ट्रीट से होकर अपनी मंजिल की ओर बढ़ते रहेंगे। इस देश में जब-जब चौरंगा झंडा फहरायेगा तब-तब हमारे चाचा रामगुलाम मुस्कराते हुए नजर आयेंगे। रुपये के सिक्कों और नोटों पर शिवसागर रामगुलाम दर्शन देते रहेंगे।





43.2,GAN-M
128013

दिनांक	सदस्य संख्या	दिनांक	सदस्य संख्या

दिनांक	सदस्य संख्या	दिनांक	संख्या



नाम : **उदयनारायण गंगू**

जन्म स्थान : मॉरीशस के दक्षिण में अवस्थित 'तायाक' ग्राम जिला-सावान।

जन्म तिथि : 20 जनवरी, सन् 1943 ई०

जीवन: वृत्त : माहेवर्ग (मायापुरी) ग्राम में प्राथमिक-माध्यमिक शिक्षा, प्रयाग हिन्दी विश्वविद्यालय से साहित्य विशारद, अजमेर से विद्यावाचस्पति।

सन् 1964 में: सरकारी हिन्दी अध्यापक बने।

सन् 1979 में विक्रम विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी में बी० ए० परीक्षा उत्तीर्ण की।

उस्मानिया विश्वविद्यालय से एम० ए० की उपाधि प्राप्त की। महात्मा गांधी संस्थान में शिक्षाधिकारी पद पर नियुक्त हुए। इस समय पी० एच० डी० उपाधि के लिए शोध कार्य में रत हैं।

रचनाएँ : एक समर्पित जीवन (1988)

प्रभु-मिलन के गीत (टिप्पणीकार) 1989

मॉरीशस के निर्माता: सर शिवसागर रामगुलाम

स्वाधीनता के अमर सेनानी : सुखदेव विष्णु दयाल (प्रेस में)

रुचि : समाज-सेवा, हिन्दी-प्रचार-प्रसार, लेखन-कार्य, लोक साहित्य संकलन।

प्रकाशक : संस्कृत-साहित्य-कला संस्थान
जयपुर (राज0) भारत।